इकाई-1 मौलिक एव अनुप्रयुक्त शोध
(Fundamental and Applied Research)

इकाई संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 मौलिक शोध का अर्थ

1.4 अनुप्रयुक्त शोध का अर्थ

1.5 मौलिक एवं अनुप्रयुक्त शोध में अन्तर

1.6 शोध में सन्निहित अवस्थाएँ

1.7 सारांश

1.8 शब्दावली

1.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.11 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों में आपने शोध का अर्थ एवं उसकी विशेषताओं का अध्ययन किया तथा मनोवैज्ञानिक शोध के स्वरूप से अवगत हो सके। प्रस्तुत इकाई में आप मौलिक एवं अनुप्रयुक्त शोध का अन्तर तथा इन शोधों में सन्निहित अवस्थाओं से अवगत हो सकेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आपको मौलिक शोध एवं अनुप्रयुक्त शोध के स्वरूप को समझने का अवसर तो मिलेगा ही, साथ ही शोध के व्यावहारिक पहलू को जानने का मौका भी मिलेगा।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि आप-

- मौलिक शोध का अर्थ एवं सम्प्रत्यय समझ सकें।
- अनुप्रयुक्त शोध के स्वरूप को बता सकें।

- मौलिक एवं अनुप्रयुक्त शोध में अन्तर स्थापित कर सकें तथा
- इन शोधों में सन्निहित चरणों पर प्रकाश डाल सकें।

1.3 मौलिक शोध का अर्थ

शिक्षार्थियों, आप शोध के अर्थ एवं स्वरूप से अवगत हो चुके हैं। आप यह भी जान चुके हैं कि एक वैज्ञानिक शोध की क्या-क्या विशेषताएँ होती हैं एक मनोवैज्ञानिक शोध किस सीमा तक इन विशेषताओं को ग्रहण किये हुए है।

आइए, अब हम शोधकर्ता के उद्देश्य के दृष्टिकोण से शोध के प्रकार की चर्चा करें। दरअसल, कोई भी शोधकर्ता शोध करने के पूर्व ही यह तय कर लेता है कि उसे किस तरह का शोध करना है। उसका उद्देश्य किसी क्षेत्र में एक सिद्धान्त विकसित करना है अथवा शोध द्वारा किसी क्षेत्र की व्यावहारिक समस्या का समाधान करना है। इसी उद्देश्य के आलोक में शोध को दो भागों में बाँटा गया है- मौलिक शोध तथा अनुप्रयुक्त शोध। मौलिक शोध वैसे शोध को कहा जाता है जिसमें शोधकर्ता का मुख्य उद्देश्य किसी क्षेत्र विशेष में एक सिद्धान्त विकसित करना होता है। ऐसे शोध में शोधकर्ता द्वारा प्रायः व्यापक रूप से वैज्ञानिक तथ्यों, नियमों तथा सिद्धान्तों की खोज की जाती है। ऐसे शोध में शोधकर्ता द्वारा सैद्धान्तिक ज्ञान की खोज पर अधिक बल दिया जाता है। इसे शुद्ध शोध भी कहते हैं । इस शोध में शोधकर्ता को इस बात की चिन्ता नहीं होती कि उसके द्वारा प्राप्त निष्कर्ष से किसी क्षेत्र की व्यावहारिक समस्या के समाधान में मदद मिलेगी या नहीं। उदाहरण स्वरूप, यदि कोई शोधकर्ता कुछ व्यक्तियों का चयन कर उसके अवगम व्यवहार का अध्ययन करता है और इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि अवगम की प्रक्रिया व्यक्ति की आवश्यकता, मूल्य एवं मनोवृत्ति द्वारा प्रभावित होती है तो यह एक मौलिक शोध का उदाहरण होगा। यहाँ, शोधकर्ता अपने शोध के निष्कर्ष के आधार पर एक सामान्य नियम बना सकता है कि ''अवगम में व्यक्तित्व कारकों की सार्थक भूमिका होती है।'' अब इस सामान्य नियम द्वारा अवगम के क्षेत्र की किन-किन समस्याओं का समाधान हो सकता है, इससे एक मूल शोधकर्ता को कोई मतलब नहीं रहता है। इसी प्रकार, पहले से स्थापित किसी सिद्धान्त को शोध द्वारा स्वीकृत या अस्वीकृत करना भी मौलिक शोध के अन्तर्गत ही आता है। विभिन्न विषयों में स्थापित नियम व सिद्धान्त सम्भवतः मौलिक शोध की ही देन हैं, क्योंकि मौलिक शोध का उद्देश्य ही सिर्फ उपकल्पना या सिद्धान्त को विकसित करना व उसकी जाँच करना होता है, उसके व्यावहारिक उपयोग से इसका कुछ भी लेना-देना नहीं होता।

1.4 अनुप्रयुक्त शोध का अर्थ

अनुप्रयुक्त शोध वैसे शोध को कहते हैं जिसमें शोधकर्ता का मुख्य उद्देश्य सैद्धान्तिक सम्प्रत्ययों की जाँच वास्तविक समस्या समाधान के द्वारा करना होता है। यानी, अनुप्रयुक्त शोध का सम्बन्ध प्रायः व्यावहारिक समस्याओं के

वर्तमान समय के समाधान से रहता है। इस प्रकार के शोध का उद्देश्य उपयोगितावादी होता है तथा इस तरह के शोध से प्राप्त परिणामों को तत्काल ही उपयोग में लाया जा सकता है।

अनुप्रयुक्त शोध में भी शोधकर्ता चयनित प्रतिदर्श से प्राप्त निष्कर्ष के आधार पर उस जनसंख्या के बारे में विशेष अनुमान लगाता है, परन्तु यहाँ उसका विशेष उद्देश्य इस बात पर बल डालना होता है कि शोध द्वारा प्राप्त निष्कर्ष संबंधित क्षेत्र की वास्तविक समस्या का समाधान किस हद तक कर पाता है। क्रियात्मक शोध, अभिप्रेरणात्मक शोध, सामाजिक शोध, औद्योगिक शोध, चिकित्सीय शोध, शैक्षिक शोध आदि अनुप्रयुक्त शोध के अन्तर्गत ही आते हैं।

अनुप्रयुक्त शोध का सम्बन्ध मूलतः वैज्ञानिक ज्ञान एवं तथ्यों पर आधारित उन उपायों की खोज करना होता है जिनके द्वारा व्यावहारिक समस्याओं का हल निकाला जा सके। इसीलिए, अनुप्रयुक्त शोध सामाजिक एवं वास्तविक जीवन की समस्याओं के विश्लेषण एवं समाधान पर बल देता है। अनुप्रयुक्त शोध के आधार पर जो परिणाम प्राप्त होते है वे सरकारी एवं गैर-सरकारी संगठनों को नीति एवं योजना बनाने में सहायक सिद्ध होते हैं। हॉर्टन एवं हण्ट (1984) ने अनुप्रयुक्त शोध की इसी विशेषता को उजागर करते हुए लिखा है ''यह शोध एक ऐसा अन्वेषण है जो वैज्ञानिक ज्ञान का इस्तेमाल कर व्यावहारिक समस्याओं के समाधान करने का उपाय सुझाता है।''

1.5 मौलिक शोध एवं अनुप्रयुक्त शोध में अन्तर

ऊपर आपने मौलिक शोध एवं अनुप्रयुक्त शोध के बारे में जानकारी प्राप्त की। आइये, अब इन दोनों ही प्रकार के शोध के स्वरूप की तुलना करें कि इनमें क्या समानताएँ हैं एवं क्या भिन्नताएँ हैं।

दरअसल, मौलिक शोध एवं अनुप्रयुक्त शोध दोनों ही में शोधकर्ता एक प्रतिदर्श का चयन करता है अर्थात् शोध के लिए प्रयोज्यों का निष्पक्ष चयन करता है तथा अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष के आधार पर लक्ष्य जीवसंख्या के बारे में विशेष अनुमान लगाता है। इस समानता के रहते हुए भी दोनों में निम्नलिखित अन्तर हैं-

1) मौलिक शोध में मूलतः वैज्ञानिक तथ्यों, नियमों, सिद्धान्तों आदि की खोज की जाती है जबकि अनुप्रयुक्त शोध में इन नियमों व सिद्धान्तों का प्रयोग व्यावहारिक समस्याओं के समाधान में करने के तरीके विकसित किए जाते हैं।

2) मौलिक शोध का सम्बन्ध सैद्धान्तिक ज्ञान से है जबकि अनुप्रयुक्त शोध का सम्बन्ध व्यावहारिक ज्ञान से है। मौलिक शोध को इस बात से कोई मतलब नहीं रहता कि प्राप्त नया ज्ञान किसी वर्तमान समस्या के समाधान में कारगर होगा या नहीं, जबकि अनुप्रयुक्त शोध का सम्बन्ध उस नये ज्ञान से वर्तमान समस्याओं का समाधान करने का तरीका विकसित करने से है।

3) मौलिक शोध सामान्यतः शोधकर्ता अपने खुद के वित्तीय प्रबन्ध से करता है जबकि अनुप्रयुक्त शोध का संचालन प्रायः वित्तीय एजेंसी के समर्थन एवं प्रायोजन से होता है, जैसे- वर्ल्ड बैंक, यूनिसेफ, यू.जी.सी., सी.एस.आई.आर., आई.सी.एस.एस.आर. इत्यादि के द्वारा अनुप्रयुक्त शोध प्रायः प्रायोजित होता है।

4) कोई शोधकर्ता किस उद्देश्य से कोई शोध कर रहा है, इससे पता चलता है कि शोध का स्वरूप मौलिक होगा या अनुप्रयुक्त। जैसे- यदि कोई शोधकर्ता यह शोध करना चाहता है कि एक व्यक्ति अपराध क्यों करता है या कोई व्यक्ति अपराधी कैसे बन जाता है? तो इस तरह का शोध मौलिक शोध कहलायेगा, परन्तु यदि वही शोधकर्ता यह शोध करना चाहता है कि एक अपराधी को कैसे सही रास्ते पर लाया जा सकता है या उसके इस तरह के व्यवहार को कैसे नियंत्रित किया जा सकता है तो इस तरह का शोध अनुप्रयुक्त शोध कहलायेगा। इसी प्रकार, यदि एक मनोवैज्ञानिक यह शोध करना चाहता है कि कितने तापमान पर किसी उद्योग में कर्मचारी अधिकतम काम करता है तो यह मौलिक शोध होगा, परन्तु यदि वह उद्योग जगत में अपने इस शोध के द्वारा विभिन्न उद्योंगों के कर्मचारियों हेतु इस उपयुक्त तापमान की व्यवस्था करवाता है और औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि कराता है, तो यह अनुप्रयुक्त शोध होगा।

5) स्पष्ट है कि मौलिक शोध एवं अनुप्रयुक्त शोध में उद्देश्य की भिन्नता को लेकर अन्तर है, वरना दोनों एक ही हैं। आइए, अब जरा इन दोनों ही शोधों में सन्निहित अवस्थाओं पर ध्यान दें।

1.6 शोध में सन्निहित अवस्थाएँ

मौलिक शोध हो या अनुप्रयुक्त, इन दोनों ही तरह के मनोवैज्ञानिक शोधों में एक शोधकर्ता को एक निश्चित क्रम या अवस्थाओं का अनुसरण करना पड़ता है। ये अवस्थाएँ निम्नलिखित हैं-

1) **किसी शोध विषय का चयन-** मौलिक एवं अनुप्रयुक्त दोनों ही प्रकार के शोधों में शोधकर्ता को सबसे पहले शोध विषय का चयन करना पड़ता है। शोध विषय से तात्पर्य शोध समस्या से है जो एक प्रश्नवाचक कथन होता है। इसमें चरों के बीच कोई विशेष प्रकार के सम्बन्ध होने की कल्पना की जाती है। शोधकर्ता के लिए शोध समस्या का निर्धारण करना सामान्यतः एक कठिन कार्य होता है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए वह उन स्रोतों की ओर झाँकता है जिससे एक वैज्ञानिक समस्या की उत्पत्ति हो सके। इन स्रोतों के रूप में शोधकर्ता शोध जर्नल, मनोवैज्ञानिक एब्स्ट्रैक्ट्स में दिये शोध-पत्र को पढ़ता है तथा उससे एक अच्छी समस्या की खोज करता है। इस खोज में वह प्रोफेसर एवं विषय के अन्य विशेषज्ञों से भी राय लेता है। एक अच्छी समस्या की खोज का काम दो चरणों में पूरा किया जाता है। पहले चरण में शोधकर्ता इस बात का निश्चय करता है कि उस शोध का सामान्य उद्देश्य क्या है तथा दूसरे चरण में शोधकर्ता उस विशेष उद्देश्य को परिभाषित करता है जिसका विश्लेषण किया जाना है। उदाहरणार्थ, मान लिया जाय कि शोधकर्ता समस्या-समाधान व्यवहार के क्षेत्र में

अध्ययन करना चाहता है। ऐसी अवस्था में वह मनोवैज्ञानिक एब्स्ट्रैक्ट्स में छपे उन शोध अनुसंधानों की समीक्षा करेगा जो समस्या-समाणान व्यवहार के क्षेत्र में किये गये हैं। थोड़ी देर के लिए मान लिया जाय कि इस समीक्षा के बद वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि इस क्षेत्र में अब तक बहुत ही कम शोध किये गये हैं। इस सिलसिले में वह किसी विशेषज्ञ एवं प्रोफेसर से बातचीत भी कर सकता है। थोड़ी देर के लिए मान लिया जाय कि मनोवैज्ञानिक एब्स्ट्रैक्ट्स एवं विशेषज्ञ से बातचीत कर वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि समस्या-समाधान व्यवहार में अभिप्रेरणात्मक कारकों के महत्व का अध्ययन किया जाय। अतः शोधकर्ता अपने शोध की समस्या का उल्लेख स्पष्ट शब्दों में इस तरह करेगा-‘‘व्यक्तियों द्वारा किसी समस्या-समाधान में अभिप्रेरणात्मक कारकों के महत्व का निर्धारण करना।’’ समस्या का निर्धारण कर लेने पर शोध अध्ययन का विशेष उद्देश्य भी निश्चित कर लिया जाता है ताकि शोधकर्ता यह तय कर पाये कि उसकी समस्या का विश्लेषण कैसे किया जायेगा। ऐसा करने के लिए वह उपकल्पना बनाता है। अतः शोधकर्ता यहाँ इस तरह की उपकल्पना विकसित कर सकता है- ‘‘समस्या-समाधान व्यवहार में प्रशंसा से वृद्धि होती है परन्तु निन्दा से कमी आती है।’’

2) **चरों का वर्गीकरण-** उपकल्पना का स्पष्टीकरण कर लेने के बाद शोध के दूसरे चरण में शोधकर्ता उन चरों पर ध्यान देता है तथा उनका वर्गीकरण करता है जो उसके शोध अध्ययन में सम्मिलित हैं। सबसे पहले वह स्वतंत्र चर का पता लगाता है क्योंकि इसी चर के प्रभाव के अध्ययन में शोधकर्ता की रूचि होती हैं। उपर्युक्त उदाहरण में प्रशंसा तथा निन्दा को स्वतंन्त्र चर हैं। इसके बाद यह निश्चित किया जाता है कि वह कौन-सा चर है जिसका मापन स्वतंत्र चरों के प्रभाव देखने के लिये वह करेगा। दूसरे शब्दों में, वह कौन-सा चर है जिसके बारे में प्रयोग या शोध करके वह पूर्वकथन करना चाहता है। ऐसे चर को आश्रित चर कहा जाता है। उपर्युक्त उदाहरण में समस्या-समाधान व्यवहार आश्रित चर का उदाहरण है। इसके अलावा शोधकर्ता उन सभी चरों की सूची तैयार करता है जिनके प्रभाव से आश्रित चर में परिवर्तन हो सकता है परन्तु इसके प्रभाव के अध्ययन में यहाँ उसकी रूचि नहीं होती है। अतः वह इन चरों को विशेष विधियों द्वारा नियंत्रित कर लेता है। ऐसे चरों को संगत चर या बहिरंग चर कहा जाता है। उपर्युक्त उदाहरण में प्रयोज्य की आयु, बुद्धि, स्वास्थ्य, आदि ऐसे ही संगत चर के उदाहरण हैं। अतः प्रयोगकर्ता या शोधकर्ता ऐसे चरों को नियंत्रित करके रखता है ताकि उनसे आश्रित चर प्रभावित न हो जाय। संगत चरों को नियंत्रित करने की कई विधियाँ जिनमें यादृच्छीकरण, संतुलन, मिलान आदि प्रधान हैं।

3) **उचित डिजाइन का चयन-** मनोवैज्ञानिक शोध की तीसरी महत्वपूर्ण अवस्था शोध के लिए उचित डिजाइन का चयन किया जाना है। मनोवैज्ञानिक शोध, चाहे मौलिक हो या अनुपयुक्त को सामान्यतः दो भागों में बाँटा जाता है- प्रयोगात्मक शोध तथा अप्रयोगात्मक शोध। प्रयोगात्मक शोध वैसे शोध को कहा जाता है जिसमें शोधकर्ता का स्वतंत्र चरों पर सीधा नियंत्रण रहता है तथा जिसमें वह इन चरों में जोड़-तोड़ भी आसानी से कर

पाता है। प्रयोगशाला प्रयोग शोध तथा क्षेत्र प्रयोग शोध दो प्रमुख प्रयोगात्मक शोध हैं जिनका उपयोग मनोविज्ञान में काफी होता है। अप्रयोगात्मक शोध, जैसा कि नाम से ही स्पष्ट होता है, प्रयोगात्मक शोध के विपरीत होता है। इसमें शोधकर्ता को स्वतंत्र चरों पर सीधा नियन्त्रण नहीं रहता है तथा उसमें जोड़-तोड़ भी वह नहीं कर पाता है। क्षेत्र अध्ययन, सर्वे शोध आदि अप्रयोगात्मक शोध के कुछ प्रमुख उदाहरण हैं। प्रयोगात्मक शोध तथा अप्रयोगात्मक शोध में प्रयोगात्मक शोध को तुलनात्मक रूप से अधिक श्रेष्ठ समझा जाता है क्योंकि इसमें सही-सही निष्कर्ष पर अधिक विश्वास के साथ इस कारण पहुँचा जाना संभव हो पाता है कि इसमें कारण तथा प्रभाव को एक-दूसरे से सीधे जोड़ने का प्रयास हो पाता है। इस पर हम लोग आगे की इकाई में चर्चा करेंगे।

जब शोधकर्ता ये निर्णय कर लेता है कि वह प्रयोगात्मक शोध या अप्रयोगात्मक शोध में से किस तरह का शोध करेगा तो उसके बाद वह शोध के डिजाइन का चयन करता है। मनोवैज्ञानिक शोध में कई तरह के डिजाइन उपलब्ध हैं जिन्हें दो प्रमुख श्रेणियों में बाँटा गया है- प्रयोगात्मक डिजाइन तथा अप्रयोगात्मक डिजाइन।

उपर्युक्त उदाहरण में मान लिया जाय कि शोधकर्ता एक प्रयोगात्मक शोध करना चाहता है। ऐसी परिस्थिति में तब वह एक प्रयोगात्मक डिजाइन का चयन करेगा। थोड़ी देर के लिए मान लिया जाय कि वह मध्य-प्रयोज्य डिजाइन का प्रयोग करना चाहता है। ऐसी परिस्थिति में शोधकर्ता स्वतंत्र चर के प्रत्येक स्तर के लिए एक अलग-अलग समूह का चयन यादृच्छिक रूप से करेगा। यहाँ स्वतंत्र चर प्रशंसा तथा निन्दा है। इस में जोड़-तोड़ तीन स्तरों या अवस्थाओं में बाँट कर किया जा सकता है- प्रशंसा की अवस्था, निन्दा की अवस्था तथा उपेक्षा की अवस्था। मान लिया जाय कि शोधकर्ता के पास करीब-करीब एक ही उम्र तथा बुद्धि के 15 छात्र उपलब्ध हैं। वह इन सभी छात्रों को यादृच्छिक रूप से तीन समूहों में बाँट देगा और फिर इन तीनों समूहों को यादृच्छिक रूप से तीनों अवस्थाओं में बाँट देगा। इस तरह से एक समूह प्रशंसा की अवस्था में किसी समस्या का समाधान करेगा, दूसरा समूह निन्दा की अवस्था में समरूप समस्या का समाधान करेगा तथा तीसरा समूह उपेक्षा की अवस्था में समरूप समस्या का समाधान करेगा। इस तरह से शोधकर्ता द्वारा मध्य-प्रयोज्य डिजाइन की शर्तें पूरी हो पायेंगी।

4) **उपयुक्त विधियाँ-** जब शोधकर्ता उपयुक्त डिजाइन का चयन कर लेता है, तो वह एक वैज्ञानिक विधि अपनाता है जिसमें उन सभी चरणों की व्याख्या होती है जिनसे होकर शोध की समस्या का समाधान करने का प्रयास किया गया है। सामान्यतः इस अवस्था के तीन चरण होते हैं- प्रयोज्य, उपकरण तथा अन्य वस्तुएँ तथा क्रियाविधि। प्रयोज्य वाले अनुच्छेद में शोधकर्ता प्रयोज्य जो उनके अध्ययन में भाग ले रहे हैं, की उम्र, यौन, बुद्धिलब्धि संगत सूचनाओं की सूची तैयार करता है। जैसे, इस अध्ययन में सभी छात्रों की उम्र 9-10 साल के बीच की है, तथा करीब-करीब उन सबों की बुद्धिलब्धि एक समान है एवं वे सभी एक ही यौन के अर्थात् पुरूष है। उपकरण तथा अन्य वस्तुएँ वाले अनुच्छेद में शोधकर्ता उन उपकरणों जैसे स्टॉपवाच, स्मृति पटह, स्पर्शानुभावक, तथा अन्य वस्तुएँ जैसे कोई मनोवैज्ञानिक परीक्षण, पर्दा, स्केल आदि को दर्शाता है।

इस अवस्था का सबसे प्रमुख भाग क्रियाविधि होती है। इस भाग में शोधकर्ता उन सभी प्रक्रियाओं का वर्णन करता है जिनसे होकर शोध या प्रयोग किये गये हैं। जैसे, शोधकर्ता यहाँ यह दर्शाता है कि किस तरह से प्रयोज्यों को विभिन्न समूहों में बाँटा गया, किस समूह को कौन-सा कार्य दिया गया, किसे नही दिया गया, प्रयोज्यों को क्या निर्देश दिये गये, यदि कोई मनोवैज्ञानिक परीक्षण दिये गये तो वह सभी किस क्रम में दिये गये, आदि, आदि।

क्रियाविधि के अन्तर्गत ही उपर्युक्त उदाहरण में प्रशंसा समूह, निन्दा समूह एवं उपेक्षित समूह से कराये गए कार्यों का क्रमबद्ध अवलोकन किया जायेगा।

5) **प्रदत्त विश्लेषण एवं परिणाम-** मनोवैज्ञानिक शोध की एक महत्वपूर्ण अवस्था परिणाम विश्लेषण की है। जब शोधकर्ता अपने प्रयोग या रिसर्च के आधार पर एक परिणाम तैयार कर लेता है तो उसके बाद वह उस परिणाम का विश्लेषण शुरू कर देता है। परिणाम का विश्लेषण करने के लिए शोधकर्ता कुछ सांख्यिकीय प्रविधियों का सहारा लेता है। इन प्रविधियों में माध्य, मानक विचलन टी-अनुपात, एफ-अनुपात तथा काई-वर्ग तुलनात्मक रूप से अधिक प्रचलित हैं। इन प्रविधियों द्वारा विश्लेषण करने का मुख्य उद्देश्य यह पता लगाना होता है कि स्वतंत्र चर का प्रभाव आश्रित चर पर कितना पड़ा है तथा किस दिशा में पड़ा है। उपर्युक्त शोध के उदाहरण में तीन समूह थे- प्रशंसित समूह, निन्दित समूह, तथा उपेक्षित समूह। तीनों समूहों द्वारा संख्यात्मक क्षमता परीक्षण पर अर्जित प्राप्तांक के आधार पर मान लिया जाय, कि माध्य, मानक विचलन तथा टी अनुपात ज्ञात किया गया। यहाँ प्राप्तांक का अर्थ प्रयोज्यों द्वारा सही उत्तर देने पर मिलने वाले अंकों के जोड़ से है। यदि प्रशंसित समूह का माध्य सबसे अधिक, निन्दित समूह का माध्य उससे कम तथा उपेक्षित समूह का माध्य सबसे कम आता है तथा माध्यों का यह अंतर सार्थक साबित होता है। (अर्थात् टी-अनुपात सार्थक साबित होता है) तो इससे स्पष्ट रूप से शोधकर्ता यह समझ जाएगा कि उसके अध्ययन में स्वतन्त्र चर का प्रभाव आश्रित चर पर स्पष्ट रूप से पड़ा है।

6) **विवेचन एवं निष्कर्ष-** मनोवैज्ञानिक शोध का अन्तिम चरण परिणाम विश्लेषण करके एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचना होता है। सचमुच में इसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए ही शोधकर्ता ने शोध करना प्रारम्भ किया था। इस निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचकर शोधकर्ता शोध की समस्या के बारे में विशेष कथन तैयार करता है। उपर्युक्त उदाहरण में चूँकि प्रशंसित समूह का माध्य निन्दित समूह के माध्य से ऊँचा पाया गया और साथ-ही-साथ माध्य का यह अन्तर सार्थक भी होता पाया गया क्योंकि टी-अनुपात सार्थक बतलाया गया है), तो शोधकर्ता इस अन्तिम निष्कर्ष पर पहुँचता है कि प्रशंसा से समस्या समाधान की क्षमता बढ़ती है तथा निन्दा से घटती है।

यहां यह भी बता दें कि शोधकर्ता निष्कर्ष का उल्लेख करने के पूर्व प्राप्त परिणाम की तुलना पहले के शोधों से करता है। वह इस बात का उल्लेख करता है कि प्रस्तुत शोध का परिणाम पूर्व में किए गये इस विषय के शोधों के

समान है, या भिन्न है। विवेचना के अन्तर्गत वह प्राप्त परिणाम के संभावित कारणों का भी उल्लेख करता है और अन्त में शोध के मुख्य निष्कर्षों का उल्लेख क्रमबद्ध रूप से करता है।

1.7 सारांश

शोधकर्ता के उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए शोध के दो प्रकार बताये गए हैं- मौलिक शोध एवं अनुप्रयुक्त शोध।

मौलिक शोध का उद्देश्य किसी क्षेत्र विशेष में नियमों एवं सिद्धान्तों की स्थापना करना होता है जबकि अनुप्रयुक्त शोध किसी व्यावहारिक समस्या के समाधान को केन्द्र में रखकर किया जाता है।

शोध मौलिक हो या अनुप्रयुक्त दोनों ही का संचालन निम्नलिखित अवस्थाओं से गुजरते हुए किया जाता है- शोध विषय का चयन, चरों का वर्गीकरण, उचित डिजाइन का चयन, उपयुक्त विधियां, प्रदत्त विश्लेषण एवं परिणाम, विवेचन एवं निष्कर्ष।

1.8 शब्दावली

- **मौलिक शोध:** वह शोध जिसका संचालन किसी सिद्धान्त या नियम की स्थापना के उद्देश्य से किया जाता है।
- **अनुप्रयुक्त शोध:** वह शोध जिसका उद्देश्य किसी व्यावहारिक समस्या का समाधान उस क्षेत्र के सैद्धान्तिक ज्ञान को उपयोग में लाकर करना होता है।

1.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

➢ रिक्त स्थानों को भरें -

1) .... शोध का मूल उद्देश्य किसी सिद्धान्त या नियम की स्थापना करना होता है।
2) वह शोध जिसका उद्देश्य व्यावहारिक समस्या का समाधान करना होता है .... शोध कहलाता है।

➢ निम्नलिखित में कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत -

3) मौलिक शोध मे सैद्धान्तिक ज्ञान की खोज करने पर अधिक बल दिया जाता है।
4) अनुप्रयुक्त शोध में सैद्धान्ति ज्ञान का उपयोग व्यावहारिक समस्या के समाधान में किया जाता है।
5) क्रियात्मक शोध मौलिक शोध का एक प्रकार है।
6) किसी भी शोध में शोधकर्ता स्वतंत्र एवं आश्रित चरों के बीच के सम्बन्धों की खोज करता है।

उत्तर: 1) मौलिक 2) अनुप्रयुक्त 3) सही 4) सही 5) गलत 6) सही

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- अरूण कुमार सिंह (1998) मनोविज्ञान,समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल-बनारसीदास, दिल्ली।
- एच.के. कपिल (2001) अनुसंधान विधियां (व्यवहारपरक विज्ञानों में), एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा।
- एफ.एन. करलिंगर (1964) फाउण्डेशन्स ऑफ विहैवियरल रिसर्च, हॉल्ट, रिनेहार्ट एवं विंसटन, इंक, न्यूयार्क।
- राम आहूजा - ''रिसर्च मेथड्स'', रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर

1.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. मौलिक शोध से आप क्या समझते हैं?
2. अनुप्रयुक्त शोध को उदाहरण देकर समझाएँ।
3. मौलिक शोध एवं अनुप्रयुक्त शोध में अन्तर स्पष्ट करें।
4. शोध में सन्निहित अवस्थाओं का उल्लेख करें।

इकाई-2 प्रयोगात्मक एवं सहसम्बन्धात्मक शोध
(Experimental and Correlation Research)

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 प्रयोगात्मक शोध का अर्थ

- 2.3.1 चर या परिवर्त्य
- 2.3.2 चरों के प्रकार
- 2.3.3 प्रयोगात्मक शोध के प्रकार
- 2.3.4 एक प्रयोगात्मक शोध की रूपरेखा

2.4 सह-सम्बन्धात्मक शोध का अर्थ

2.5 प्रयोगात्मक तथा सहसम्बन्धात्मक शोध में अन्तर

2.6 सारांश

2.7 शब्दावली

2.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

2.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

पूर्व की इकाइयों में आपने पढ़ा कि शोध उत्तर तलाशने की एक प्रक्रिया है। विभिन्न प्रकार के शोध प्रश्नों का उत्तर शोध की भिन्न-भिन्न विधियों को अपनाकर प्राप्त किया जाता है। इतना ही नहीं, शोध में चरों के बीच सम्बन्धों की तलाश भी की जाती है, खासकर स्वतंत्र चर और आश्रित चर के बीच के सम्बन्धों की। विभिन्न अनुसंधान विधियां इस दिशा में सही निष्कर्ष तक पहुँचने में शोधकर्ता की सहायता करती हैं।

प्रस्तुत इकाई में आप प्रयोगात्मक शोध एवं सहसम्बन्धात्मक शोध के स्वरूप एवं विशेषताओं का अध्ययन करेंगे तथा इन दोनों ही प्रकार के शोध में अन्तर जान पायेंगे। हमें उम्मीद है कि इन दोनों ही प्रकार के शोधों का अध्ययन कर आप आनुभविक शोध के सम्बन्ध में कुछ ज्यादा, कुछ नया एवं कुछ उपयोगी ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप इस योग्य हो जायेंगे कि-

- आप प्रयोगात्मक शोध की विशेषताओं एवं खामियों से परिचित हो सकें।
- प्रयोगशाला प्रयोग शोध एवं क्षेत्र प्रयोग शोध में अन्तर बता सकें।
- सहसम्बन्धात्मक शोध विधि की विशेषताओं एवं सीमाओं को रेखांकित कर सकेंगे।
- प्रयोगात्मक एवं सहसम्बन्धात्मक शोध में भेद कर सकें तथा
- विभिन्न प्रकार के चरों में अन्तर कर सकें।

2.3 प्रयोगात्मक शोध का अर्थ

प्रयोगात्मक शोध वैसे शोध को कहा जाता है जिसमें प्रयोगकर्ता या शोधकर्ता नियंत्रित परिस्थिति में विशेष चर या चरों में जोड़-तोड़ करता है और उसके प्रभाव को एक-दूसरे चर पर अध्ययन करता है। इसका परिणाम यह होता है कि प्रयोगकर्ता विश्वास के साथ यह कहा जा जाता है कि अमुक जोड़-तोड़ से अमुक प्रभाव पड़ा है। शायद यही कारण है कि प्रयोगात्मक शोध के स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर के बीच कारण तथा परिणामस्वरूप प्रयोगकर्ता एक विश्वास के साथ स्थापित कर पाता है। प्रयोगकर्ता प्रयोगशाला में पूर्वनिश्चित एवं पूर्वनिर्धारित अवस्था में किसी स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ करता है और उसका प्रयोज्य की अनुभूतियों एवं व्यवहारों पर पड़ने वाले प्रभावों का निरीक्षण वस्तुनिष्ठ एवं निष्पक्ष ढंग से करता है। निरीक्षण हेतु प्रयोगकर्ता आवश्यकतानुसार विशिष्ट प्रकार के यंत्रों एवं सामग्रियों का भी उपयोग करता है और इस तरह से प्राप्त तथ्यों का सांख्यिकीय विश्लेषण कर ठोस एवं प्रामाणिक परिणाम प्राप्त करता है जिसके आधार पर वह प्राणी के व्यवहारों से संबंधित नियमों एवं सिद्धांतों की स्थापना एवं व्याख्या करता है। प्रयोग कैसे किया जाता है, यह जानने के पहले यह जान लेना आवश्यक है कि चर या चर क्या है?

2.3.1 चर या परिवर्त्य-

चर या चर उन परिस्थितियों या घटनाओं को कहते हैं, जो सदा एक जैसी स्थिति में नहीं रहते। अर्थात, वे प्रतिक्षण बदलते रहते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि चर वे हैं, जो बदलते रहते हैं। यह बदलाव या परिवर्तन घटनाओं के प्रकार या उसके परिमाण अथवा सत्ताकाल में होता हैं, जैसे- प्रकाश, ताप, समय, मौसम, शोर-गुल, श्वास लेने की क्रिया इत्यादि में परिवर्तन का होना। उदाहरण के लिए शोरगुल को लें। शोर-गुल की अवस्था में उत्पन्न आवाज निरंतर रूक-रूककर, थोड़े समय के लिए या अधिक समय के लिए हो सकती है। इसी तरह श्वास की क्रिया भी एक चर है, क्योंकि यह नियमित या अनियमित, धीमी या जल्दी-जल्दी गति की हो सकती है। अतः चर से हमारा तात्पर्य प्राणी या उसके वातावरण की उन परिस्थितियों व घटनाओं से है, जिनके प्रकार एवं परिमाण सदा एक जैसे नहीं रहते, वे बदलते रहते हैं अथवा वे विभिन्न रूपों या प्रकारों के होते हैं। प्रयोग में प्रयोगकर्ता किन्हीं दो या दो से अधिक चरों के बीच के आपसी संबंधों की खोज करता है अथवा किन्हीं दो चरों के बीच के खोजे हुए संबंधों को पुनः जाँच कर संपुष्ट करता है। इस प्रकार प्रयोग दो प्रकार के होते हैं-अन्वेषणात्मक एवं संपुष्टात्मक। जैसे, प्रयोगकर्ता यदि यह जानने की कोशिश करता है कि प्रकाश की तीव्रता और रंगों के प्रत्यक्षीकरण में क्या संबंध है, तापक्रम में वृद्धि होने पर गर्मी की संवेदना में क्या अंतर पड़ता है; सफलता या विफलता की अनुभूति अथवा प्रेरणा का किसी कार्य-संपादन की कुशलता पर क्या प्रभाव पड़ता है आदि; तो इस प्रकार के प्रयोगों को 'अन्वेषणात्मक' प्रयोग कहते हैं। लेकिन, जब प्रयोगकर्ता इस तथ्य की जाँच करता है कि अभ्यास के फलस्वरूप कार्य-संपादन की कुशलता में वृद्धि होती है या लगातार प्रयास करने के फलस्वरूप थकान होती है तब इस प्रकार के प्रयोग को संपुष्टात्मक प्रयोग कहते हैं। संपुष्टात्मक प्रयोग में पहले से स्थापित तथ्य की पुनः जाँच की जाती है।

2.3.2 चरों के प्रकार-

विभिन्न चरों के बीच परस्पर निर्भरता का संबंध रहता है। अर्थात एक चर दूसरे चर पर आश्रित रहता है। अतः, किसी एक चर की स्थिति में किसी प्रकार का हेर-फेर या बदलाव होता है तो इसका प्रभाव 'आश्रित या निर्भर करने वाले चर' पर भी पड़ता है। जैसे- शिक्षण-विषय की लंबाई या अभ्यास की मात्रा में वृद्धि या कमी होने का असर सीखने की क्रिया पर पड़ता है। अतएव, सीखने की क्रिया विषय की लंबाई या शिक्षण-प्रयास की मात्रा पर निर्भर करता है और इस प्रकार इन दोनों प्रकार के चरों के बीच परस्पर निर्भरता का संबंध पाया जाता है। इस दृष्टिकोण से चरों को तीन वर्गों में बाँटा जाता हैं-

(क) आश्रित चर (ख) स्वतंत्र चर (ग) संगत चर

1) **आश्रित चर -** जो चर किसी दूसरे चर पर आश्रित होते हैं, उन्हें आश्रित चर कहते हैं। ऐसे चर दूसरे चरों (खासकर स्वतंत्र चरों) में परिवर्तन या बदलाव लाये जाने पर अपनी आश्रितता के कारण स्वतः परिवर्तित हो

जाते हैं। यानी, ऐसे चरों के प्रकार या परिमाण में किसी प्रकार का बदलाव या परिवर्तन इससे संबद्ध दूसरे चर (स्वतंत्र चर) में परिवर्तन होने पर निर्भर करेगा। इसी निर्भरता के गुण के कारण इसे आश्रित चर कहते हैं। उदाहरण के लिए, औद्योगिक निष्पादन एक आश्रित चर है, क्योंकि यह औद्योगिक वातावरण, कर्मचारी की योग्यता, अभिप्रेरणा आदि चरों पर निर्भर करता है। प्रयोगों में प्रायः आश्रित चरों के संबंध में प्रयोगकर्ता पूर्व कथन करने की कोशिश करता है। जैसे- यदि कोई प्रयोगकर्ता प्रयोग द्वारा निष्पादन पर तापमान के प्रभाव का अध्ययन करता है तो वह निष्पादन पर तापमान के पड़ने वाले प्रभाव की भविष्यवाणी करता है तथा इसी भविष्यवाणी की सत्यता को वह प्रयोग करके सिद्ध करता है। इसी प्रकार, परिणाम के ज्ञान का व्यक्ति के निष्पादन पर प्रभाव यदि कोई मनोवैज्ञानिक देखना चाहता है तो यहाँ परिणाम का ज्ञान स्वतंत्र चर के रूप में कार्य करेगा तथा निष्पादन आश्रित चर के रूप में।

2) **स्वतंत्र चर-** जो चर किसी दूसरे चर (आश्रित चर) पर स्वतंत्र रूप से अपना प्रभाव डालते हैं, उन्हें स्वतंत्र चर कहते हैं। इन्हें स्वतंत्र चर इसलिए कहा जाता है क्योंकि ये स्वतंत्र रूप से किसी आश्रित चर पर अपना प्रभाव डालते हैं। प्रयोग की अवधि में इनकी स्थिति में परिवर्तन लाने या हेर-फेर अथवा जोड़-तोड़ करने हेतु प्रयोगकर्ता स्वतंत्र रहता है और जोड़-'तोड़ करके आश्रित चर पर पड़ने वाले प्रभावों का निरीक्षण या अध्ययन करता है। इस प्रकार, प्रयोग हेतु चुने गए स्वतंत्र चर को नियंत्रित नहीं किया जाता, परन्तु किसी आश्रित चर को प्रभावित करने वाले अन्य स्वतंत्र चरों को नियंत्रित रखा जाता है। उदाहरण के लिए, निष्पादन पर तापमान के प्रभाव को लें। चूँकि यहाँ तापमान का प्रभाव निष्पादन पर पड़ता है तथा प्रयोगकर्ता इसकी स्थिति में परिवर्तन लाकर या हेर-फेर करके (जैसे, एक अवस्था में कम तापमान रखकर और दूसरी अवस्था में अधिक तापमान रखकर) इसके प्रभाव का अध्ययन करता है, इसलिए यहाँ तापमान एक स्वतंत्र चर है।

किसी प्रयोग में स्वतंत्र चर को जिस स्थिति में रखा जाता है उसके अनुसार इसके दो रूप होते हैं- 1. प्रयोगात्मक चर एवं 2. नियंत्रित चर। प्रयोगात्मक चर से तात्पर्य वैसे स्वतंत्र चरों से है जिनके प्रभाव का अध्ययन किया जाता है तथा जिनमें प्रयोगकर्ता जोड़-तोड़ या हेर-फेर करता है। अर्थात, जिस चर के प्रभाव का अध्ययन प्रयोगकर्ता किसी आश्रित चर पर करता है, उसे प्रयोगात्मक चर कहते हैं। किसी एक प्रयोग में आश्रित चर पर प्रायः एक या दो चरों के प्रभावों का ही अध्ययन किया जाता है जबकि उक्त आश्रित चर पर कई स्वतंत्र चरों का प्रभाव पड़ सकता है। प्रयोग की अवधि में ऐसे स्वतंत्र चरों को (जिनके प्रभाव का अध्ययन नहीं करना है) नियंत्रित या स्थिर रखा जाता है। इसलिए इन्हें नियंत्रित चर कहते हैं। ऐसे चरों को 'संगत या बहिरंग' चर की संज्ञा भी दी जाती है, क्योंकि आश्रित चर पर इनके प्रभाव संगत होते है। परंतु, चूँकि प्रयोगकर्ता का उद्देश्य इन संगत चरों के प्रभावों का अध्ययन करना नहीं होता, इसलिए ऐसे संगत चरों को बहिरंग चर के नाम से पुकारा जाता है। प्रयोग की अवधि में ऐसे चरों को नियंत्रित रखा जाता है, ताकि आश्रित चर पर इनका कोई असर न पड़े।

3) **संगत या बहिरंग चर-** बहिरंग चर वैसे चर हैं जिन्हें यदि प्रयोगकर्ता द्वारा नियंत्रित नहीं किया जाय तो वह प्रयोगात्मक परिस्थिति में स्वतंत्र चर के साथ मिलाकर आश्रित चर को प्रभावित कर सकते है। जैसे- निष्पादन पर तापमान के प्रभाव का अध्ययन करने के क्रम में तापमान प्रयोगात्मक चर के रूप में प्रयुक्त किया जाएगा, और प्रयोगकर्ता एक अवस्था में कम तापमान पर निष्पादन का अवलोकन करेगा जबकि दूसरी अवस्था में अधिक तापमान पर। परंतु, निष्पादन पर कुछ अन्य स्वतंत्र चरों के भी प्रभाव पड़ेगे, जैसे- शोरगुल, आद्रता, पुरस्कार, आयु इत्यादि। आश्रित चर पर इन स्वतंत्र चरों के प्रभावों को पड़ने से प्रयोगकर्ता रोकेगा अथवा उन्हें नियंत्रित करेगा। इस प्रकार, ये नियंत्रित चर ही संगत या बहिरंग चर कहे जाएंगे।

बहिरंग चर भी तीन तरह के होते हैं-

i) प्राणी या प्रयोज्य से संबंधित

ii) वातावरण या परिस्थिति से संबंधित

iii) प्रयोग की विभिन्न अवस्थाओं के क्रम से संबंधित।

स्पष्ट है प्रयोग नियंत्रित अवस्था में पूर्वनिश्चित एवं पूर्वनिर्धारित योजना के अनुसार किया जाता है। अर्थात, प्रयोग प्रारंभ से पूर्व प्रयोगकर्ता प्रयोग-संबंधी पूर्ण विवरण पहले से ही तैयार कर लेता है। प्रयोग की योजना बनाते समय प्रयोगकर्ता निम्नलिखित दो बातों पर विशेष ध्यान देता है- (क) प्रयोग की समस्या का चुनाव एवं (ख) प्रयोग की योजना का चुनाव।

प्रयोगात्मक समस्या सुनिश्चित कर लेने के बाद प्रयोगकर्ता प्रयोग की एक पूरी योजना बना लेता है। इस योजना में वह प्रयोग की संपूर्ण प्रतिक्रियाओं का विवरण तैयार करता है, जैसे- स्वतंत्र चर की स्थिति में परिवर्तन लाने या हेर-फेर करने की क्रमबद्ध योजना, आश्रित चर को प्रभावित करने वाले अन्य स्वतंत्र चरों को किस प्रकार नियंत्रित किया जाएगा, आश्रित चर को किस प्रकार मापा जाएगा आदि। इसे उदाहरण द्वारा समझें-

मान लें, कोई मनोवैज्ञानिक, अभ्यास का प्रभाव मनुष्य के सीखने की क्रिया पर क्या पड़ता है, जानना चाहता है। यह 'प्रयोग' किस प्रकार किया जाएगा। सबसे पहले प्रयोगकर्ता को यह विचार कर लेना होगा कि सीखने की क्रिया पर 'अभ्यास' के अतिरिक्त किन-किन बातों का प्रभाव पड़ता है। ध्यान देने पर मालूम होगा कि अभ्यास के अतिरिक्त थकान, स्वास्थ्य, शिक्षण-विधि, शिक्षण-विषय, किए हुए कार्य के परिणाम का ज्ञान, पुरस्कार अथवा दंड, इत्यादि का भी प्रभाव सीखने की क्रिया पर पड़ता है। इस प्रयोग में प्रयोगकर्ता को केवल अभ्यास का प्रभाव मालूम करना है। अतः अभ्यास के अतिरिक्त अन्य सभी प्रभावक तत्वों को वह नियंत्रित रखेगा। यह नियंत्रण इन चरों को समानावस्था में स्थिर रखकर किया जाएगा। इसीलिए इन्हें नियंत्रित चर अथवा स्थिर चर कहते हैं। इसके बाद प्रयोज्य को एक शिक्षण-कार्य दिया जाएगा, जो नवीनतम होगा। अभ्यास हेतु प्रयोज्य को उसी काम को बार-

बार करने को दिया जाएगा-मान लें 20 बार। सभी प्रयासों में प्रयोज्य से उसी काम को एक ही तरह से कराया जाएगा। इस प्रकार, प्रयोग की पूरी अवधि में शिक्षण-कार्य और सीखने की विधि समान रखते हुए नियंत्रित किया जाएगा। थकान के प्रभाव को दूर करने के लिए ठीक आधे प्रयास के बाद (अर्थात 10 प्रयासों के बाद) थोड़ी देर के लिए विराम दिया जाएगा। प्रत्येक प्रयास में प्रयोज्य द्वारा उक्त कार्य को करने में लगे समय और कार्य-संपादन में होने वाली त्रुटियों या अशुद्धियों एवं प्रयोज्य के व्यवहारों को प्रयोगकर्ता वस्तुनिष्ठ निरीक्षण करके, नोट करता जाएगा। निश्चित प्रयास के बाद प्रयोज्य का अंतर्निरीक्षण प्रतिवेदन भी लिया जाएगा।

इस प्रकार, प्रयोगकर्ता को दो प्रकार के 'प्रदत्त' प्राप्त होंगे- (क) वस्तुनिष्ठ प्रदत्त एवं (ख) आत्मनिष्ठ प्रदत्त। वस्तुनिष्ठ प्रदत्त बाह्य रूप से निरीक्षण के फलस्वरूप प्राप्त सामग्री होती है, जैसे विभिन्न प्रयासों में लगा समय, अशुद्धियाँ एवं प्रयोज्य का व्यवहार। आत्मनिष्ठ प्रदत्त प्रयोज्य के आत्मनिरीक्षण अर्थात 'अंतर्निरीक्षण प्रतिवेदन' पर आधारित होता है। इस तरह के प्रदत्त से प्रयोज्य की मानसिक अवस्था का पता चलता है।

इस प्रकार, प्राप्त सामग्री की सहायता से सीखने की क्रिया पर पड़ने वाले प्रभाव को जानने हेतु आवश्यक है कि प्राप्त सामग्री का निरूपण अथवा विश्लेषण किया जाए। यह निरूपण दो प्रकार से होगा- सांख्यिकीय या परिमाण-संबंधी निरूपण एवं गुण-संबंधी निरूपण। गुण-संबंधी निरूपण अंतर्निरीक्षण प्रतिवेदन पर आधारित होगा, जबकि परिमाण संबंधी निरूपण के लिए सांख्यिकीय विधि का उपयोग किया जाएगा। इन दोनों प्रकार के निरूपणों के बाद ही सीखने की क्रिया पर अभ्यास का क्या प्रभाव पड़ता है, इस संबंध में किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है। साथ ही, सही तथा विश्वसनीय निष्कर्ष के लिए केवल एक व्यक्ति पर किया प्रयोग पर्याप्त नहीं होगा। इसके लिए आवश्यक है कि इसी प्रयोग को अनेक व्यक्तियों पर (जो हर दृष्टि से समान हों) किया जाए और यदि सभी में करीब-करीब एक ही तरह का परिणाम प्राप्त हो तो इस प्रयोग से जो निष्कर्ष निकलेगा, उसकी सत्यता एवं विश्वसनीयता पर भरोसा किया जा सकता है। निष्पादन पर तापमान का प्रभाव देखने हेतु या निष्पादन पर प्रकाश का प्रभाव देखने हेतु इस तरह का प्रायोगिक अध्ययन किया जा सकता है।

2.3.3 प्रयोगात्मक शोध के प्रकार -

ऊपर आपने प्रयोग के स्वरूप तथा चरों के प्रकार को सोदाहरण समझने का प्रयास किया। आपने देखा कि प्रयोग के क्रम में एक प्रयोगकर्ता स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ करता है और उस जोड़-तोड़ के प्रभाव का अध्ययन आश्रित चर पर करने का प्रयास करता है। अतः सवाल उठता है कि प्रयोगकर्ता इस तरह का अध्ययन प्रयोगशाला की परिस्थिति में करता है अथवा क्षेत्र में जाकर वहां की स्वाभाविक परिस्थिति में? इस प्रकार शोधकर्ता अथवा प्रयोगकर्ता कोई प्रयोग कहां करेगा। इस आधार पर प्रयोगत्मक शोध के दो प्रकार बताये गये हैं - प्रयोगशाला प्रयोग शोध तथा क्षेत्र प्रयोग शोध।

(क)**प्रयोगशाला प्रयोग शोध-** मनोविज्ञान में प्रयोगशाला प्रयोग शोध को काफी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया हे। प्रयोगशाला प्रयोग शोध से तात्पर्य वैसे प्रयोगात्मक शोध से होता है जो एक प्रयोगशाला में प्रायः यादृच्छिक रूप से चुने गये प्रयोज्यों पर किया जाता है। फेसटिंगर एवं काज (1953) ने प्रयोगशाला प्रयोग शोध को कुछ ऐसे ही शब्दों में परिभाषित करते हुए कहा है, ''प्रयोगशाला प्रयोग शोध वह है जिसमें शोधकर्ता वैसी परिस्थिति उत्पन्न करता है जैसा कि अध्ययन करना चाहता है एवं जिसमें वह कुछ चरों को नियंत्रित करता है तथा कुछ अन्य चरों में जोड़-तोड़ करता है।'' इस परिभाषा में दो बातें हैं-

i. प्रयोगशाला प्रयोग शोध में शोधकर्ता एक ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करता है जिसमें सभी बहिरंग चर नियंत्रित हो जाते हैं। जब सभी बहिरंग चरों का नियंत्रण हो जाता है, तो अपने आप ही उससे उत्पन्न प्रसरण नियत्रित हो जाता है तथा प्रयोगशाला प्रयोग शोध में शुद्धता बढ़ जाती है।

ii. प्रयोगशाला प्रयोग शोध में कुछ चरों में प्रयोगकर्ता जोड़-तोड़ करता है। ऐसे चरों को स्वतंत्र चर कहा जाता है, जिस चर पर जोड़-तोड़ का प्रभाव देखा जाता है, उसे आश्रित चर कहा जाता है।

करलिंगर (1986) के अनुसार प्रयोगशाला प्रयोग शोध के निम्नांकित मुख्य तीन उद्देश्य होते हैं-

i. प्रयोगशाला प्रयोग शोध में शोधकर्ता स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर के बीच प्रस्तावित संबंध को एक शुद्ध एवं असम्मिश्रित परिस्थिति में अध्ययन करने का प्रयास करता है। एक शुद्ध एवं असम्मिश्रित परिस्थिति को कहा जाता है जिसमें परिस्थिति इस ढंग से पूर्णतः नियंत्रित कर ली जाती है कि उसमें आश्रित चर पर मात्र स्वतंत्र चर में किये गये जोड़-तोड़ का ही प्रभाव पड़ सके, अन्य किसी दूसरे चर का नहीं।

ii. प्रयोगशाला प्रयोग शोध द्वारा विभिन्न सिद्धांतों तथा अन्य लोगों द्वारा किये गये शोधों से प्राप्त पूर्वकथनों या पूर्वानुमानों की जाँच सफलतापूर्वक की जाती है।

iii. प्रयोगशाला प्रयोग शोध का उद्देश्य विभिन्न प्रकार के सिद्धांतों एवं उपकल्पनाओं को परिमार्जित कर एक वस्तुनिष्ठ सैद्धांतिक तंत्र का निर्माण करना होता है।

इन उद्देश्यों से स्पष्ट होता है कि प्रयोगशाला प्रयोग शोध में सिर्फ किसी विशेष उपकल्पना (जो स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर के संबंध के रूप में व्यक्त की जाती है) की जाँच ही नहीं की जाती बल्कि उसका उद्देश्य पुराने सिद्धांतों एवं उपकल्नाओं को परिमार्जित कर उन्हें एक वस्तुनिष्ठ सिद्धांत का रूप देना तथा साथ-ही-साथ उनसे किये गये पूर्वकथनों की जाँच करना भी होता है।

एक उदाहरण- मान लिया जाय कि कोई शोधकर्ता या प्रयोगकर्ता प्रयोगशाला प्रयोग शोध करके इस विशेष शोध समस्या का समाधान चाहता है-दण्ड देने से सीखने की प्रक्रिया किस ढंग से प्रभावित है? ऐसे तो इस शोध

समस्या का समाधान करने के लिए कई तरह के शोध डिजाइन हो सकते हैं, परन्तु सबसे सरल डिजाइन द्वि-समूह डिजाइन होगा जिसमें शोधकर्ता बच्चों का दो समूह तैयार करेगा। इस प्रयोग में दण्ड (स्वतंत्र चर है तथा सीखने की प्रक्रिया आश्रित चर है। सीखने की प्रक्रिया अन्य कारकों जैसे बुद्धि), उम्र, यौन, पाठ की सार्थकता आदि से भी प्रभावित हो सकती है। अतः इन बहिरंग चरों को नियंत्रित करने के लिए वह दोनों समूहों को बुद्धि, उम्र तथा यौन के रूप में समेलित कर लेगा, फलतः दोनों समूहों में समान बुद्धि, उम्र एक ही यौन के बच्चे होंगे। पाठ की सार्थकता को नियंत्रित करने के लिए दोनों समूहों को एक ही पाठ या समरूप पाठ सीखने के लिए दिया जायेगा। इस अध्ययन में उपकल्पना होगी-'दण्ड से सीखने की प्रक्रिया धीमी पड़ जाती है अब एक समूह को सीखते समय उसे विभिन्न तरीकों से दण्डित तथा हतोत्साहित किया जायेगा तथा दूसरे समूह को सीखते समय किसी प्रकार की कोई टीका-टिप्पणी नहीं की जायेगी और ना ही उसे दण्डित ही किया जायेगा। पाठ को सीखने में दोनों समूहों द्वारा लिये गये औसत समय तथा औसत त्रुटि का निर्धारण किया जायेगा। यदि दण्डित समूह द्वारा पाठ को सीखने में दूसरे समूह की अपेक्षा औसत रूप से अधिक समय लिया जाता है तथा अधिक त्रुटि की जाती है और यदि यह अन्तर सांख्यिकीय रूप से सार्थक होता है यानि कम से कम .05 स्तर पर सार्थक आता है, तो शोधकर्ता स्पष्टतः इस निष्कर्ष पर पहुँचेगा कि दण्ड देने से सीखने की प्रक्रिया धीमी हो जाती है। इस तरह से वहाँ प्रयोगशाला प्रयोग शोध के परिणाम द्वारा उपकल्पना की संपुष्टि हो जाती है।

- प्रयोगशाला प्रयोग शोध के कुछ लाभ तथा कुछ परिसीमाएँ हैं। इसके प्रमुख लाभ निम्नांकित हैं-

1) प्रयोगशाला प्रयोग शोध चूँकि नियंत्रित एवं असम्मिश्रित परिस्थिति में की जाती है, इसलिए इसके निष्कर्ष पर अधिक भरोसा किया जाता है। इस तरह के शोध में सभी बहिरंग चरों को पूर्णतः नियंत्रित कर लिया जाता है। फलस्वरूप स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर में प्रस्तावित संबंध (यानि उपकल्पना) की जाँच यथार्थ ढंग से हो पाती है।

2) प्रयोगशाला प्रयोग शोध में शोधकर्ता या प्रयोगकर्ता को स्वतंत्र चर के जोड़-तोड़ पर भी पूर्ण नियंत्रण होता है। इसके अलावा प्रयोगकर्ता शोध के लिए तैयार किए गए प्रयोज्यों का यादृच्छिक आबंटन भी करता है। इससे प्रयोगकर्ता संबद्ध पक्षपात भी नियंत्रित हो जाता है और प्रयोग का परिणाम अधिक शुद्ध एवं वैध हो जाता है।

3) तीसरा लाभ प्रथम दो लाभों से ही संबंधित है। चूँकि प्रयोगशाला प्रयोग शोध में बहिरंग चर पूर्णतः नियंत्रित रहता है, इसलिए स्वतंत्र चर का जोड़-तोड़ अधिकतम होता है तथा प्रयोज्यों का यादृच्छिक आबंटन भी संभव हो पाता है। इसलिए कहा जाता है कि प्रयोगशाला प्रयोग शोध में आन्तरिक वैधता अधिक होती है।

4) प्रयोगशाला प्रयोग शोध में यथार्थता अधिक होती है क्योंकि इसमें आश्रित चर में उत्पन्न परिवर्तन को मापने के लिए यथार्थ उपकरण का प्रयोग होता है।

5) प्रयोगशाला प्रयोग शोध में प्रतिकृति का लाभ होता है। इसके शोध डिजाइन तथा विधि इतने वस्तुनिष्ठ होते हैं कि कोई शोधकर्ता या प्रयोगकर्ता जरूरत पड़ने पर उसे प्रतिकृत करके अपने आप को संतुष्ट कर सकता है तथा परिणाम की सत्यता की जाँच भी कर सकता है।

- इन लाभों के बावजूद भी प्रयोगशाला प्रयोग शोध की कुछ परिसीमाएँ हैं जो इस प्रकार हैं-

1) प्रयोगशाला प्रयोग शोध में बाह्य वैधता की कुछ कमी होती है। बाह्य वैधता से तात्पर्य प्राप्त परिणाम को बड़े जीव संख्या के लिए सामान्यीकरण करने से होता है। अपने इस तरह के शोध के आधार पर जब प्रयोगकर्ता एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचता है, तो वह निष्कर्ष को जीव संख्या के अधिक से अधिक व्यक्तियों के लिए उसे ही सिद्ध करना चाहता है। परन्तु अक्सर यह देखा गया है कि ऐसा करने में एक प्रयोगकर्ता को पूर्णरूपेण सफलता नहीं मिलती है क्योंकि इस तरह के शोध में सामान्यीकरण की क्षमता नहीं होती है। इस तरह से प्रयोगशाला प्रयोग शोध में पाँच-दस व्यक्तियों या पशुओं (या इसी तरह की अन्य छोटी संख्या में लिए गए व्यक्तियों या पशुओं) के अध्ययन के फलस्वरूप प्राप्त निष्कर्ष को प्राणियों की एक बड़ी संख्या के लिए विश्वास के साथ सही नहीं ठहराया जा सकता है।

2) प्रयोगशाला प्रयोग शोध की प्रायोगिक परिस्थिति कृत्रिम होती है न कि स्वाभाविक। इसलिए कुछ लोगों का कहना है कि ऐसी परिस्थिति में अध्ययन के फलस्वरूप प्राप्त तथ्यों पर पूर्ण विश्वास नहीं किया जा सकता है। परन्तु इस आलोचना पर यदि ध्यानपूर्वक गौर किया जाय तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि यह बहुत ही उचित आलोचना नहीं है। सचमुच में इस तरह के शोध में सिर्फ एक ऐसी परिस्थिति उत्पन्न की जाती है जिसमें कुछ चरों को नियंत्रित करना संभव हो सके तथा कुछ चरों में जोड़-तोड़ करना आसान हो सके। ऐसी परिस्थिति को एक कृत्रिम परिस्थिति कहना उचित न होगा। इसे प्रयोगशाला प्रयोग शोध की एक खास विशेषता कहना अधिक उचित होगा न कि इस तरह के शोध की एक परिसीमा कहना।

3) चूँकि प्रयोगशाला प्रयोग शोध में प्रायः कई स्वतंत्र चरों में एक साथ जोड़-तोड़ किया जाता है, इसलिए इस ढंग के प्रयोगात्मक जोड़-तोड़ का प्रभाव प्रायः दुर्बल एवं अस्पष्ट होते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रयोगशाला प्रयोग शोध में स्वतंत्र चरों में पर्याप्त शक्ति की कमी पायी जाती है।

4) रॉबिन्सन (1976) के अनुसार प्रयोगशाला प्रयोग शोध द्वारा कुछ विशेष परिस्थिति जैसे विशाल दंगा, भूकम्प आदि में व्यक्तियों के व्यवहारों में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन नहीं किया जा सकता है क्योंकि इस ढंग की परिस्थिति प्रयोगशाला में उत्पन्न नहीं की जा सकती है।

5) सामाजिक अनुमति न होने के कारण भी कुछ खास परिस्थितियों में व्यक्ति के व्यवहारों का अध्ययन प्रयोगशाला प्रयोग शोध द्वारा नहीं किया जा सकता है। जैसे, समाज इसकी अनुमति नहीं देता कि किसी मानव

शिशु को जन्म से ही एक वंचित वातावरण में रखकर पाला-पोसा जाय और फिर शिशु पर वैसे वातावरण के पड़ने वाले प्रभावों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन किया जाय। फलस्वरूप, प्रयोगशाला प्रयोग शोध का कार्यक्षेत्र कुछ सीमित हो जाता है।

6) रॉबिन्सन (1976) के अनुसार ही प्रयोगशाला प्रयोग शोध चूँकि एक खर्चीला तथा अधिक समय लेने वाला शोध है, इसलिए भी इसका उपयोग शोधकर्ताओं या प्रयोगकर्ताओं द्वारा अधिक नहीं किया जाता है। कुछ प्रयोग तो ऐसे हैं जिनका उपकरण इतना अधिक कीमती है कि उसे खरीदकर प्रयोग करना एक सामान्य प्रयोगकर्ता या शोधकर्ता के बस की बात नहीं है।

7) इन परिसीमाओं के रहते हुए भी प्रयोगशाला प्रयोग शोध मनोवैज्ञानिक तथा शैक्षणिक शोध के विभिन्न प्रकारों में प्राथमिक माना गया है। आज भी जिन मनोवैज्ञानिक तथा शैक्षित सिद्धांतों एवं नियमों को प्रयोगात्मक समर्थन नहीं प्राप्त है, उस पर अधिक भरोसा नहीं किया जाता है।

(ख) क्षेत्र प्रयोग शोध- मनोवैज्ञानिकों विशेषकर समाज मनोवैज्ञानिकों शिक्षा मनोवैज्ञानिकों एवं समाजशास्त्रियों द्वारा क्षेत्र प्रयोग शोध का उपयोग अधिक किया जाता है। क्षेत्र प्रयोग शोध एक ऐसा शोध है जिसमें प्रयोगकर्ता एक या एक से अधिक स्वतंत्र चरों में जोड़-तोड़ एक ऐसी क्षेत्र परिस्थिति या वास्तविक परिस्थिति में करता है जिसमें बहिरंग चरों का अधिकतम नियंत्रण होता है। उदाहरणार्थ, यदि कोई प्रयोगकर्ता यह अध्ययन करना चाहता है कि कक्षा में बच्चे एक दूसरे के प्रति किस तरह से आक्रामक व्यवहार दिखलाते हैं और ऐसे व्यवहार की बारंबारता किस तरह के बच्चों के प्रति अधिक होती है, तो यह एक क्षेत्र प्रयोग शोध का उदाहरण होगा बशर्ते कि यह अध्ययन एक ऐसी परिस्थिति में किया गया हो जहाँ सभी बहिरंग चर अधिक-से-अधिक नियंत्रित हों तथा स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ सफलतापूर्वक किया गया हो।

करलिंगर (1986) ने क्षेत्र प्रयोग शोध को परिभाषित करते हुए कहा है, ''क्षेत्र प्रयोग एक ऐसा शोध अध्ययन है जो वास्तविक परिस्थिति में किया जाता है, तथा जिसमें एक या एक से अधिक स्वतंत्र चरों में जोड़-तोड़ उतना सावधानीपूर्वक नियंत्रित अवस्था में किया जाता है जितना की परिस्थिति अनुमति देती है।''

रॉबिन्सन (1976) के अनुसार, ''क्षेत्र प्रयोग को क्षेत्र में किया गया एक ऐसा वैज्ञानिक अनुसंधान के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसमें कुछ स्वतंत्र चरों में सीधा जोड़-तोड़ किया जाता है।''

- इन परिभाषाओं का विश्लेषण करने पर हमें क्षेत्र प्रयोग शोध की निम्नांकित विशेषताओं के बारे में पता चलता है-

i. क्षेत्र प्रयोग शोध एक क्षेत्र में अर्थात् एक वास्तविक परिस्थिति में किया जाता है। स्कूल, दफ्तर, फैक्ट्री, कोर्ट आदि वास्तविक परिस्थिति के कुछ उदाहरण हैं जिनमें क्षेत्र प्रयोग शोध अक्सर किया जाता है।

ii. क्षेत्र प्रयोग शोध में स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ किया जाता है।

iii. क्षेत्र प्रयोग शोध में स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ एक ऐसी अवस्था में किया जाता है जो उस सीमा तक नियंत्रित होती है जिस सीमा तक उस विशेष क्षेत्र या परिस्थिति में नियंत्रण संभव है।

- क्षेत्र प्रयोग के कुछ लाभ तथा परिसीमाएँ हैं। इसके प्रमुख लाभ निम्नांकित हैं-

i. क्षेत्र प्रयोग शोध एक वास्तविक परिस्थिति में किया जाता है। अतः इस ढंग का शोध समाज मनोवैज्ञानिकों, समाजशास्त्रियों, शिक्षा मनोवैज्ञानिकों तथा नैदानिक मनोवैज्ञानिक जिनकी शोध समस्याएँ वास्तविक परिस्थिति में अध्ययन किये जाने के अनुकूल होती है, के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध हुई हैं।

ii. क्षेत्र प्रयोग शोध के चरों का प्रभाव अधिक तीक्ष्ण होता है। शोध का मूल नियम यह है कि परिस्थिति जितनी ही वास्तविक होती है, अध्ययन किये जाने वाले चरों का प्रभाव उतना ही अधिक तीक्ष्ण एवं स्पष्ट होता है। इस नियम का पूर्ण समर्थन एवं संतुष्टि क्षेत्र प्रयोग शोध में होता है।

iii. क्षेत्र प्रयोग शोध में बाह्य वैधता का लाभ होता है। दूसरे शब्दों में, क्षेत्र प्रयोग शोध से प्राप्त निष्कर्षो को आसानी से उन सभी प्राणियों या जीवों के लिए सामान्यीकरण कर देते हैं जिनके सदस्यों को प्रतिनिधि के रूप में अध्ययन में शामिल किया गया था। जैसे, किसी फैक्ट्री में कर्मचारियों का अध्ययन कर यदि क्षेत्र प्रयोगकर्ता इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि कर्मचारियों में अनुपस्थिति का मूल कारण कम वेतन है, तो वह इस निष्कर्ष को अन्य सभी तरह की फैक्ट्री के सभी कर्मचारियों पर विश्वास के साथ लागू कर सकता है क्योंकि अध्ययन वास्तविक परिस्थिति में की गयी थीं। अगर इस ढंग का निष्कर्ष किसी कृत्रिम परिस्थिति में अध्ययन कर पहुँचा गया होता, तो उसक कहाँ तक सभी कर्मचारियों पर लागू किया जाना संभव होता, कहना मुश्किल था।

- इन लाभों के बावजूद भी क्षेत्र प्रयोग शोध की कुछ परिसीमाएँ हैं जो निम्नांकित हैं-

i. चूँकि क्षेत्र प्रयोग शोध एक वास्तविक परिस्थिति में किया जाता है, अतः परिस्थिति पर पूर्ण नियंत्रण प्रयोगकर्ता का नहीं रह जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि प्रयोग के आश्रित चर को कुछ बहिरंग चरों जैसे अवांछित आवाज या शोरगुल आदि द्वारा प्रभावित होने की संभावना बढ़ जाती है। ऐसी अवस्था में प्रयोगकर्ता के लिए एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचना संभव नहीं हो पाता है और जिस निष्कर्ष पर यदि वह पहुंच भी जाता है, वह भरोसेमन्द नहीं हो पाता है। इन्हीं कारणों से ऐसा कहा जाता है कि क्षेत्र प्रयोग शोध में आन्तरिक वैधता काफी कम होती है।

ii. कुछ विशेष कारणों से कभी-कभी क्षेत्र प्रयोग शोध में स्वतंत्र चरों में जोड़-तोड़ तथा प्रयोज्यों का यादृच्छीकरण करना कठिन हो जाता है। उदाहरणस्वरूप, स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ तथा प्रयोज्यों का यादृच्छीकरण उस समय

दुर्लभ हो सकता है जब बच्चे (यदि प्रयोग बच्चों के समूह पर किया जा रहा हो) को माता-पिता द्वारा ऐसी प्रयोगात्मक अवस्था में काम करने से रोका जा रहा हो जो बच्चों के मानसिक संतुलन पर बुरा बसर डाल सकते हैं। जैसे, यदि प्रयोग ऐसा है जिसमें बच्चों के समस्या समाधान क्षमता पर कुण्ठा के पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया जाना है और एक समूह को ऐसी अवस्था में रखा जाना हैं जहाँ उसमें तीव्र कुण्ठा उत्पन्न किया जायेगा तो ऐसा संभव है कि माता-पिता अपने-अपने बच्चों की ऐसी परिस्थिति में काम करने की अनुमति न दें और तब ऐसी अवस्था में स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ तथा प्रयोज्यों का यादृच्छीकरण किया जाना संभव नहीं हो पायेगा।

iii. क्षेत्र प्रयोग शोध में परिशुद्धता की कमी होती है। परिशुद्धता की कमी का मूल कारण यह होता है कि इस तरह के शोध में बहुत तरह के पर्यावरणीय कारक अनियंत्रित रह जाते हैं जो आश्रित चर को प्रभावित कर परिणाम को दूषित कर देते हैं।

इन आलोचनाओं के बावजूद क्षेत्र प्रयोग शोध का उपयोग जटिल सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं, प्रभावों तथा परिवर्तनों के अध्ययन में काफी किया जाता है क्योंकि ऐसी समस्याओं का अध्ययन प्रयोगशाला प्रयोग शोध द्वारा करने में काफी कठिनाइयाँ होती हैं।

(ग) प्रयोगशाला प्रयोग शोध तथा क्षेत्र प्रयोग शोध में अन्तर-

- प्रयोगशाला प्रयोग शोध तथा क्षेत्र प्रयोग शोध दोनों ही प्रयोगात्मक शोध हैं।
- दोनों ही तरह वे शोधों में स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ किया जाता है।
- दोनों ही तरह के शोधों में बहिरंग चर को नियंत्रित किया जाता है।
- दोनों तरह के शोधों में स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर में कारण परिणाम संबंध स्थापित करने का भरसक प्रयत्न किया जाता है।

इन समानताओं के बावजूद इन दोनों तरह के शोध में कुछ अन्तर है जो निम्नांकित हैं-

i. प्रयोगशाला प्रयोग शोध किसी प्रयोगशाला की परिस्थिति में की जाती है जो जिन्दगी की वास्तविक परिस्थिति के अनुरूप हो भी सकती है या नहीं भी हो सकती है। परंतु क्षेत्र प्रयोग शोध हमेशा एक वास्तविक परिस्थिति में ही किया जाता है।

ii. प्रयोगशाला प्रयोग शोध में आन्तरिक वैधता अधिक होती है तथा बाह्य वैधता कम होती है। परन्तु क्षेत्र प्रयोग शोध में ठीक इसके विपरीत बाह्य वैधता की मात्रा आन्तरिक वैधता की मात्रा से अधिक होती है।

iii. प्रयोगशाला प्रयोग शोध में स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ तथा प्रयोज्यों का यादृच्छीकरण पूर्णरूपेण संभव है परन्तु क्षेत्र प्रयोग शोध में शोधकर्ता द्वारा ये दोनों कार्य एक सीमा तक ही संभव है।

iv. प्रयोगशाला की परिस्थिति नियंत्रित होने के कारण प्रयोगशाला प्रयोग शोध में परिशुद्धता अधिक होती है, परन्तु क्षेत्र प्रयोग शोध में वास्तविक परिस्थिति होने के कारण ऐसी परिशुद्धता की मात्रा काफी कम होती है।

2.3.4 एक प्रयोगात्मक शोध की रूपरेखा-

प्रयोगात्मक शोध काफी क्रमबद्ध होता है। प्रयोग का प्रकार चाहे कोई भी क्यों न हो, इसे करने में कुछ निहित सोपान होते हैं जिन्हें एक क्रम में अनुसरण करना होता है। अतः यह आवश्यक है कि विद्यार्थी उन सोपानों एवं उसके क्रम से भली-भाँति अवगत हों। उन सोपानों एवं उनके क्रम की व्याख्या अग्रांकित है-

i) **प्रयोग का शीर्षक-** प्रयोग का शीर्षक स्पष्ट शब्दों में लिखा जाना चाहिए। शीर्षक का उल्लेख करते समय प्रयोगकर्ता को दो बातों पर ध्यान देना चाहिए। पहली बात यह है कि शीर्षक में किसी आडम्बरी शब्दों का उपयोग न हो तथा दूसरी बात यह है कि शीर्षक बहुत लम्बा न होकर छोटा, सुसम्बन्ध तथा अध्ययन किये जाने वाले क्षेत्र से सीधे सम्बन्धित हो। इसके साथ-ही-साथ प्रयोग का स्थान अर्थात् प्रयोग कहाँ होगा तथा समय अर्थात् कब होगा का भी स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए ताकि इससे न प्रयोगकर्ता को और ना ही प्रयोज्यों को किसी तरह की संभ्रान्ति हो सके।

ii) **साहित्य का सर्वे-** प्रयोग से संबंधित पहले जो शोध किये जा चुके हैं, उसका सर्वे या समीक्षा करना प्रयोगकर्ता के लिए अति आवश्यक होता है। प्रयोगात्मक शोध के लिए संबंधित शोधों एवं प्रयोगों की समीक्षा कई कारणों से महत्वपूर्ण बतलायी गयी है जिसमें तीन कारण प्रमुख हैं- पहला, इस ढंग की समीक्षा से प्रयोगकर्ता को शोध की समस्या के बारे में कुछ अस्पष्ट धारणाएँ बनी होती है जो इस ढंग की समीक्षा के फलस्वरूप स्पष्ट हो जाती है। दूसरा, ऐसी समीक्षा से यह भी पता चल जाता है कि क्या सचमुच में इस प्रयोग को करने की जरूरत है या नहीं। यदि पहले ही मनोवैज्ञानिक इस प्रयोग को कर चुके हैं, तो फिर उसी प्रयोग को दोहराने की कोई आवश्यकता नहीं है। हाँ, जब प्रयोग पहले दिये गये प्रयोग के परिणाम की संपुष्टि के लिए किया जा रहा है, तब तो उसे दोहराया जा सकता है। तीसरा, वर्तमान प्रयोग से संबंधित पहले किये गये प्रयोगों की समीक्षा करने से यह भी पता चल जाता है कि कौन-कौन बहिरंग चर हैं तथा उन सबों को कैसे नियंत्रित किया जा सकता है। सौभाग्यवश, मनोविज्ञान के क्षेत्र में किये जाने वाले शोधों से सम्बन्धित पूर्व अध्ययनों की समीक्षा साइकोलोजिकल एब्स्ट्रैक्ट के कारण काफी आसान हो गया है।

iii) **समस्या को निश्चित करना-** प्रयोग इसलिए किया जाता है क्योंकि किसी चीज के बारे में प्रयोगकर्ता कुछ जानना चाहता है और उन्हें उस चीज के बारे में उपयुक्त ज्ञान की कमी है। समस्या का उल्लेख इस

तरह के प्रश्नात्मक वाक्य में होना चाहिए जिससे यह स्पष्ट पता चल सके कि प्रयोगकर्ता में संबंधित ज्ञान की कमी है। जैसे, क्या थकान से कार्यक्षमता में कमी होती है? क्या कर्मचारियों में अनुपस्थिति वित्तीय प्रेरणा की कमी द्वारा होती है? कुछ ऐसे उदाहरण हैं जिनसे शोध समस्या का उल्लेख किस प्रकार करना चाहिए, का अंदाज मिलता है। अतः शोध समस्या का उल्लेख इस ढंग से किया जाना चाहिए कि उसका उत्तर 'हाँ' या 'नहीं' में प्रयोग के बाद किया जा सके। यदि ऐसा संभव नहीं है, तो सामान्य रूप से यही कहा जाता है कि प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।

iv) **उपकल्पना तैयार करना-** समस्या जब उल्लेख किया जाता है, तब उसमें चर भी सम्मिलित हो जाते हैं और उन चरों के आधार पर शोध समस्या का एक अंतरिम समाधान की अभिव्यक्ति की जाती है। इस अंतरिम समाधान को उपकल्पना कहा जाता है। जैसे, उपर्युक्त शोध समस्या को ध्यान में रखते हुए यह उपकल्पना विकसित की जा सकती है- 'थकान से कार्यक्षमता में गिरावट आती है।'

v) **चरों को परिभाषित करना-** शोध समस्या तथा उपकल्पना में स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर का उल्लेख होता है। प्रयोगकर्ता को अब इस चरण में उन चरों की संक्रियात्मक रूप से परिभाषित करना आवश्यक हो जाता है ताकि उनका अर्थ बिल्कुल ही स्पष्ट हो जाय। इस चरण का महत्व इसलिए बढ़ जाता है क्योंकि अगर स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर को संक्रियात्मक रूप से परिभाषित नहीं किया गया, तो उपकल्पना अजाँचनीय रह जाएगी।

vi) **उपकरण-** शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रयोगों में विभिन्न तरह के उपकरणों की जरूरत पड़ती है। उन उपकरणों द्वारा स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ करने में तथा आश्रित चर के मान में उत्पन्न परिवर्तनों को रिकार्ड करने में सुविधा होती है। स्मृति पटह, मूलर-लायर भ्रम बोर्ड, र्स्पशानुभावक, श्वसनलेखी, काइमोग्राफ, टेचिस्टोकोप, स्टाप वाच, आदि शैक्षिक तथा मनोवैज्ञानिक प्रयोगों में होने वाले कुछ प्रमुख उपकरण हैं। मनोवैज्ञानिक प्रयोगों में उपकरणों द्वारा दो कार्य किये जाते हैं-

- उपकरण के माध्यम से प्रयोगात्मक विवेचन करने में मदद मिलती है, तथा
- प्रयोगात्मक विवेचन से प्रयोज्यों के व्यवहारों में उत्पन्न अन्तरों को रिकार्ड करने में मदद मिलती है।

इन दोनों कार्यो के सम्पन्न हो जाने पर प्रयोग में परिशुद्धता बढ़ जाती है। परंतु कभी-कभी देखा गया है उपकरण सही नहीं होते हैं या काफी पुराना या ठीक ढंग से अशांकित नहीं होते हैं। ऐसे उपकरणों का प्रयोग निश्चित रूप से नहीं किया जाना चाहिए अन्यथा प्रयोग की परिशुद्धता जाती रहेगी।

vii) **चरों का नियंत्रण करना-** प्रयोग के इस चरण में प्रयोगकर्ता उन सभी चरों का पता लगाता है तथा नियंत्रित करने की कोशिश करता है जो आश्रित चर को प्रभावित कर सकते हैं। ऐसे चरों को बहिरंग चर कहा जाता

है। संक्षेप में यहाँ यही कहा जा सकता है कि प्रयोगकर्ता को यह सावधानीपूर्वक देख लेना चाहिए, कि कोई भी बहिरंग चर प्रयोज्यों के विभिन्न समूहों को आश्रित चर पर भिन्न-भिन्न ढंग से प्रभावित नहीं करें। अगर किसी बहिरंग चर का प्रभाव सभी समूहों पर समान ढंग से पड़ता है, तो उसका प्रभाव अपने आप ही नियंत्रित होता समझा जाता है तथा इसे एक आदर्श अवस्था कहा जाता है।

viii) **डिजाइन का चयन करना-** प्रयोग के इस चरण में प्रयोगकर्ता को अपने प्रयोग के लिए एक डिजाइन का चयन करना होता है। डिजाइन से तात्पर्य अध्ययन की एक ऐसी योजना से होती है जिसके द्वारा शोध समस्या का उत्तर ढूँढ़ा जाता है। मनोवैज्ञानिक प्रयोगों में अनेकों तरह के डिजाइन का प्रयोग किया जाता है जिनमें द्वि-समूह डिजाइन, बहुसमूह डिजाइन तथा क्रमगुणित डिजाइन अन्य डिजाइनों की तुलना में अधिक लोकप्रिय है। (डिजाइन के विभिन्न प्रकार की व्याख्या अध्याय-16 में की गयी है।) प्रयोगकर्ता को इन विभिन्न डिजाइन में से सबसे उपयुक्त डिजाइन का चयन अपने शोध समस्या तथा उपकल्पना को ध्यान में रखकर करना होता हैं। डिजाइन ऐसा होना चाहिए जिसमें बहिरंग चरों का नियंत्रण अधिकतम हो, प्रयोगात्मक प्रसरण का सृजन अधिक-से-अधिक हो तथा त्रुटि प्रसरण की उत्पत्ति कम-से-कम हो।

a. **प्रयोज्यों का चयन करना तथा समूहों में आबंटित करना-** प्रयोगकर्ता अपने प्रयोग में सम्मिलित करने के लिए कुछ व्यक्तियों का चयन करता है जिसे प्रतिदर्श कहा जाता है। प्रतिदर्श का चयन एक जीवसंख्या से यादृच्छिक रूप से किया जाता है ताकि उस प्रतिदर्श को जीवसंख्या का प्रतिनिधि माना जा सके। प्रतिदर्श का यादृच्छिक चयन वैसे चयन को कहा जाता है जिसमें जीव संख्या के प्रत्येक सदस्य को प्रतिदर्श में शामिल किये जाने की संभावना बराबर-बराबर होती है तथा किसी भी एक सदस्य का चयन किया जाना दूसरे सदस्य पर निर्भर नहीं करता है।

प्रतिदर्श का चयन कर लेने के बाद तथा डिजाइन के प्रकार को निश्चित कर लेने के बाद प्रयोगकर्ता प्रतिदर्श को विभिन्न समूहों में यादृच्छीकरण की प्रक्रिया द्वारा आबंटित करता है। उदाहरणस्वरूप, मान लिया जाय कि प्रयोगकर्ता ने 40 प्रयोज्यों का एक प्रतिदर्श चुना है जिसे वह दो समूहों में यादृच्छिक ढंग से आबंटित करना चाहता है। इस प्रक्रिया को वह सिक्का उछाल कर सम्पन्न कर सकता है। जैसे वह यह निर्णय कर सकता है कि यदि सिक्का उछालने पर चित्त आयेगा तो प्रयोज्य संख्या 1 समूह 'अ' में रखा जायेगा परन्तु यदि पट आयेगा तो उस प्रयोज्य को समूह 'ब' में रखा जायेगा। इसी प्रक्रिया को फिर अन्य सभी प्रयोज्यों पर तब तक दुहराया जायेगा जब तक कि समूह 'अ' में प्रयोज्यों की संख्या 20 न हो जाय। इस तरह से यादृच्छिक आबंटन की प्रक्रिया द्वारा प्रयोज्यों को दो समूह में बाँट दिया जाता है। डिजाइन के अनुसार प्रयोज्यों को निर्धारित समूहों जैसे तीन समूह, चार समूह आदि में इसी तरह से आबंटित कर दिया जाता है। समूह 'अ' तथा समूह 'ब' के तैयार हो जाने पर प्रयोगकर्ता को यह निर्णय करना होता है कि इसमें कौन समूह नियंत्रित समूह की भूमिका निभायेगा तथा कौन समूह प्रयोगात्मक समूह की

भूमिका में रहेगा। इसका निर्णय भी वह सिक्का उछाल कर अर्थात यादृच्छिक रूप से कर लेता है। चित आने पर समूह 'अ' को प्रयोगात्मक समूह की भूमिका या पट आने पर समूह 'ब' को प्रयोगात्मक समूह की भूमिका (जैसा प्रयोगकर्ता सिक्का उछालने पहले निर्णय कर चुका होता है) में रखा जा सकता है।

किसी भी प्रयोग में प्रयोज्यों के कितने समूह होंगे, यह इस बात पर निर्भर करता है कि प्रयोग में स्वतंत्र चर की संख्या कितनी है। प्रत्येक स्वतंत्र चर में कितने स्तर हैं तथा बहिरंग चरों का स्वरूप क्या है। अगर किसी प्रयोग में एक ही स्वतंत्र चर है जिसके दो स्तर हैं तो इसमें समूह की संख्या मात्र दो होगी- एक प्रयोगात्मक समूह तथा दूसरा नियंत्रित समूह। जैसे, अगर पुरस्कार का प्रभाव सीखने की प्रक्रिया पर अध्ययन किया जाना है तो हम इसके लिए दो समूह तैयार कर सकते हैं-एक समूह में पुरस्कार दिया जायेगा (प्रयोगात्मक समूह) तथा दूसरे में पुरस्कार नहीं दिया जायेगा (नियंत्रित समूह)। परन्तु यदि हम इस स्वतंत्र चर (यानी पुरस्कार) के तीन स्तर कर देते हैं जैसे, श्रेष्ठ पुरस्कार, मध्यम पुरस्कार तथा निम्न पुरस्कार। तो इसमें प्रयोज्यों के समूह की संख्या तीन हो जायेगी। एक समूह निम्न पुरस्कार की अवस्था के लिए। दूसरा समूह मध्यम पुरस्कार की अवस्था के लिए तथा तीसरा समूह निम्न पुरस्कार की अवस्था के लिए। प्रायः प्रत्येक समूह में प्रयोज्यों की संख्या बराबर-बराबर रखी जाती है हालांकि यह कोई आवश्यक नहीं है। परन्तु ऐसा होने से सांख्यिकीय विश्लेषण में कुछ सुविधा होती है।

ix) **प्रयोगात्मक कार्यविधि का उल्लेख करना-** प्रयोग के इस चरण में आँकड़ों का संग्रहण किया जाता है। अतः प्रयोगकर्ता आँकड़ों के संग्रहण की विस्तृत कार्यविधि की एक रूपरेखा तैयार करता है जिसमें यह स्पष्टतः उल्लेखित होता है कि प्रयोज्यों के साथ किस ढंग का विवेक किया जायेगा, किस ढंग से उद्धीपनों को प्रयोज्यों के सामने रखा जायेगा तथा प्रयोज्यों द्वारा किये गये अनुक्रियाओं को कैसे निरीक्षण किया जायेगा तथा उसे कैसे रिकार्ड किया जायेगा। अगर प्रयोज्य मानव हैं, तो उन्हें दिया जाने वाला नियम की रूपरेखा प्रयोगकर्ता द्वारा तैयार कर ली जाती है। प्रयोगकर्ता शोध या प्रयोग सभी पहलुओं को उनके सामने इस ढंग से उपस्थित करता है कि प्रयोज्यों की रूचि प्रयोग में बढ़ जाती है अगर प्रयोग का स्वरूप काफी जटिल है, तो प्रयोगकर्ता प्रयोज्यों की एक छोटी संख्या लेकर अग्रगामी प्रयोग भी कर लेता है ताकि उसे इस बात का अंदाज हो कि कहीं मुख्य प्रयोग की कार्य-विधि में परिवर्तन करने की जरूरत है या नहीं।

x) **साक्ष्य रिपोर्ट तैयार करना-** प्रयोग के आँकडों सांख्यिकीय मूल्यांकन कर लेने के बाद एक साक्ष्य रिपोर्ट तैयार किया जाता है। साक्ष्य रिपोर्ट वह रिपोर्ट होता है जिसमें इस बात का उल्लेख हो कि उपकल्पना में स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर में व्यक्त प्रयोगात्मक संबंध हो सके इसमें सांख्यिकीय मूल्यांकन के बाद पाये गये या नहीं। यदि संबंध पाया गया तो साक्ष्य रिपोर्ट को स्वीकारात्मक माना जाता है परन्तु यदि संबंध नहीं पाया, या उसके किसी से संबंध पाया गया, तो साक्ष्य रिपोर्ट नकारात्मक माना जाता है। उदाहरणस्वरूप, मान लिया जाय। उपकल्पना- 'पुरस्कार सीखने की प्रक्रिया को तीव्र करती है'। इसकी जाँच को मान लिया

जाय के दो समूह लिया गया-एक प्रयोगात्मक समूह जिसे सीखने के लिए पुरस्कार दिया गया तथा दूसरा नियंत्रित समूह जिसे सीखने के लिए पुरस्कार नहीं दिया गया। यदि प्रयोगात्मक समूह द्वारा पाठ को सीखने में लिया गया माध्य समय तथा त्रुटि नियंत्रित समूह द्वारा सीखने में लिये गये माध्य समय तथा त्रुटि से कम है तो इसका मतलब यह हुआ कि उपकल्पना स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर में व्यक्त संबंध सही है। अतः यहाँ साक्ष्य रिपोर्ट को स्वीकारात्मक माना जायेगा।

xi) साक्ष्य रिपोर्ट के आधार पर उपकल्पना के बारे में अनुमान लगाना- प्रयोग के इस चरण में प्रयोगकर्ता साक्ष्य रिपोर्ट के आधार पर उपकल्पना के बारे में यह अंदाज लगाता है कि वह सत्य है या असत्य है। यदि साक्ष्य रिपोर्ट स्वीकारात्मक है तो उपकल्पना को सत्य मान लिया जाता है। और उसकी संपुष्टि हुई समझी जाती है। परन्तु यदि साक्ष्य रिपोर्ट नकारात्मक है तो उपकल्पना को असत्य मान लिया जाता है और इस तरह उसकी संपुष्टि नहीं हो पाती है।

xii) परिणाम का सामान्यीकरण करना- प्रयोग के इस अन्तिम चरण में प्रयोगकर्ता एक प्रतिदर्श पर किये अध्ययन से प्राप्त परिणाम को उस पूरे जीवसंख्या के लिए सही ठहराना चाहता है जिससे प्रयोज्यों का अर्थात् प्रतिदर्श का चयन किया गया था। प्रयोग का परिणाम कहाँ तक जीव संख्या के लिए सामान्यीकृत किया जा सकता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि जीवसंख्या को प्रयोगकर्ता ने कहाँ तक स्पष्टतः परिभाषित किया तथा साथ-ही-साथ उससे प्रतिदर्श का चयन यादृच्छिक ढंग से किया था या नहीं। यदि जीवसंख्या स्पष्टतः परिभाषित किया गया होता है तथा उससे प्रतिदर्श का चयन यादृच्छिक ढंग से किया गया होता है तब तो परिणाम का सामान्यीकरण पूरे विश्वास के साथ किया जा सकता है अन्यथा परिणाम मात्र प्रतिदर्श के लिए सही हो सकता है, जीवसंख्या के लिए नहीं।

इस तरह से हम देखते है कि मनोवैज्ञानिक तथा शैक्षिक प्रयोग में कुल 13 चरण हैं जो एक क्रम में प्रयोगकर्ता द्वारा अनुसरण किये जाते हैं। प्रयोग की विश्वसनीयता इस बात पर निर्भर करती है कि प्रयोगकर्ता कहाँ तक प्रत्येक चरण की जरूरतों को सफलतापूर्वक पूरा कर पाया है।

2.4 सह-सम्बन्धात्मक शोध का अर्थ

सह सम्बन्धात्मक शोध भी आनुभविक शोध का एक प्रकार है। इस शोध का स्वरूप भी प्रयोगात्मक होता है तथा इसमें भी समस्या का तथ्यपूर्ण मूल्यांकन किया जाता है। परन्तु सामान्य अवलोकन की तुलना में सह-सम्बन्धात्मक शोध में शोधकर्ता द्वारा स्वतंत्र चर में अपेक्षित हस्तचालन करके फिर उसके प्रभाव का आश्रित चर पर अवलोकन किया जाता है। हस्तचालन या जोड़-तोड़ का कार्य शोधकर्ता सीधे न करके चयन प्रक्रिया द्वारा करता है तथा फिर एक स्वाभाविक परिस्थिति में इनके विभिन्न स्तरों के प्रभाव का अध्ययन करता है कि कहाँ तक स्वतंत्र चर के

विभिन्न स्तरों का प्रभाव आश्रित चर पर पड़ रहा है या किस सीमा तक आश्रित चर की निर्भरता स्वतंत्र चर पर है। दूसरे शब्दों में, सह सम्बन्धात्मक शोध में शोधकर्ता यह देखना चाहता है कि स्वतंत्र चर में चयन प्रक्रिया द्वारा किया गया जोड़-तोड़ आश्रित चर से किस प्रकार सम्बन्धित है। इसे एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। मान लीजिए कि कोई शोधकर्ता समस्या समाधान योग्यता और बुद्धि के बीच सम्बन्ध का अध्ययन करना चाहता है। इसके लिए एक ही आयु-समूह के विभिन्न बुद्धि-स्तर वाले बच्चों का वह चयन करेगा और फिर प्रत्येक बुद्धि-स्तर वाले बच्चों की समस्या समाधान क्षमता का मापन करेगा। शोधकर्ता द्वारा यहाँ बुद्धि के विभिन्न स्तरों का निर्धारण सीधे न करके चयन द्वारा किया जायेगा क्योंकि बुद्धि की उपज नहीं हो सकती, उसे जब चाहें बढ़ा दें और जब चाहें घटा दें- ऐसा नहीं हो सकता। अतः यहाँ बुद्धि एक ऐसा चर है जो यदि स्वतंत्र चर के रूप में कार्यरत है तो शोधकर्ता उसका हस्तचालन यानी, उसमें जोड़-तोड़ चयन प्रक्रिया के द्वारा ही कर सकता है। जैसे यहाँ शोधकर्ता यदि बुद्धि स्तर के आधार पर बच्चों का तीन समूह बनाता है तो वह एक समूह में 90 से 110 बुद्धि-लब्धि वाले बच्चे को रख सकता है, दूसरे समूह में 70 से 90 के मध्य बुद्धि-लब्धि वाले बच्चे को रख सकता है तथा तीसरे समूह में 110 से ऊपर के बुद्धि-लब्धि वाले बच्चे को रख सकता है। इन तीनों ही समूह में जो भी प्रयोज्य (बच्चे) रखे जायेंगे उनमें बुद्धि-लब्धि की मात्रा पहले से उपलब्ध है। शोधकर्ता का काम तो उनकी बुद्धि को मापना, बुद्धि-लब्धि को निर्धारित करना और फिर बुद्धि-लब्धि के आधार पर सम्बन्धित समूह में डाल देना है। यह कार्य शोधकर्ता चयन प्रक्रिया के द्वारा करता है। फिर इन तीनों ही समूह के बच्चों को किसी समस्या का समाधान करने को देता है और यह निरीक्षण करता है कि कौन-सा समूह समस्या समाधान की योग्यता में बेहतर है तथा कौन-सा मध्य स्तर या निम्न स्तर का है। शोधकर्ता तीनों ही समूह की औसत समस्या-समाधान क्षमता का निर्धारण कर इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता है कि जिन बच्चों में अधिक बुद्धि होती है उनमें समस्याओं के समाधान की योग्यता भी अधिक होती है।

स्पष्ट है कि प्रस्तुत उदाहरण में बुद्धि एक ऐसा स्वतंत्र चर है जिसमें चयन द्वारा जोड़-तोड़ ही संभव है। ऐसा नहीं हो सकता कि शोधकर्ता जब चाहे किसी बच्चे की बुद्धि में वृद्धि कर दे और जब चाहे कमी कर दें। इस तरह के स्वतंत्र चर को जिसमें हस्तचालन चयन द्वारा ही संभव है, 'टाइप-एस' स्वतंत्र चर कहते हैं। व्यक्ति की आयु, उसका यौन, उसकी संवेगात्मकता आदि ऐसे चर हैं जिनका हस्तचालन चयन द्वारा ही संभव है। इन्हें सीधे हस्तचालित नहीं किया जा सकता।

इस प्रकार हम देखते है कि सह-सम्बन्धात्मक शोध में स्वतंत्र चर का आश्रित चर पर प्रभाव तो देखा जाता है, परन्तु स्वतंत्र चर का हस्तचालन सीधे न करके चयन द्वारा किया जाता है। चूँकि शिक्षा, मनोविज्ञान, योग आदि के क्षेत्र में स्वतंत्र चर प्रायः इस प्रकार के होते हैं कि उनका हस्तचालन चयन द्वारा ही संभव होता है, अतः इन क्षेत्रों में सह-सम्बन्धात्मक शोध का प्रचलन काफी अधिक है। मनोविज्ञान एवं योग में सह-सम्बन्धात्मक शोध का प्रयोग

ज्यादातर मनोवैज्ञानिक परीक्षण के निर्माण तथा उपयोग में किया जाता है। इसके अतिरिक्त, विकासात्मक मनोविज्ञान, पशु, मनोविज्ञान आदि क्षेत्रों में भी सह-सम्बन्धात्मक शोध किए जाते हैं।

सह सम्बन्धात्मक शोध की विशेषताएँ -

सह-सम्बन्धात्मक शोध का अपना खास महत्व है। इस शोध विधि की सबसे बड़ी खासियत यह है कि इसके द्वारा अध्ययन किए जाने वाले चर प्राकृतिक परिवेश में विराजमान होते हैं और उन्हें उसी रूप में उपयुक्त मापनी द्वारा माप लिया जाता है। प्रयोगात्मक शोध में स्वतंत्र चर में सीधे हस्तचालन के कारण यह गुण नहीं पाया जाता।

सह-सम्बन्धात्मक शोध की दूसरी विशेषता होती है-चरों के बीच कार्यात्मक सम्बन्ध का सममित होना। सह-सम्बन्धात्मक शोध एक ऐसा शोध है जिसमें यदि दो चरों (क और ख) के बीच उच्च सह-सम्बन्ध पाया जाता है तो हम जिस दावे के साथ कह सकते हैं कि चर 'क' ने चर 'ख' को प्रभावित किया, ठीक उतने ही दावे के साथ यह भी कह सकते हैं कि चर 'ख' ने चर 'क' को प्रभावित किया। यानी, सह-सम्बन्धात्मक शोध में जिस प्रकार स्वतंत्र चर के आधार पर आश्रित चर का पूर्वकथन कर सकते हैं, उसी प्रकार आश्रित चर के आधार पर स्वतंत्र चर का पूर्व कथन भी कर सकते हैं।

यानी, 'क' जितना प्रभावित 'ख' को कर रहा है, 'ख' भी उतना ही प्रभावित 'क' को भी कर रहा है। इसे एक उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है। मान लीजिए, एक शोधकर्ता निर्भरता उन्मुखता का किशोरों की उपलब्धि-अभिप्रेरणा पर प्रभाव देखना चाहता है। समान उम्र और लिंग के 10 प्रयोज्यों पर वह निर्भरता उन्मुखता और उपलब्धि-अभिप्रेरणा मापनी का प्रयोग कर प्रदत्त संग्रहित करता है। फिर प्रयोज्यों की निर्भरता-उन्मुखता एवं उपर्लिब्ध-अभिप्रेरणा के बीच सह-सम्बन्ध निकालता है जो उच्च ऋणात्मक प्राप्त होता है। यानी, जिन प्रयोज्यों में निर्भरता उन्मुखता ज्यादा पायी जाती है उनमें उपलब्धि अभिप्रेरणा कम पाई जाती है। यहाँ प्राप्त परिणाम न सिर्फ यह बतलाता है कि निर्भरता-उन्मुखता उपलब्धि-अभिप्रेरणा का निर्धारक है बल्कि ठीक विपरीत यह भी कहा जा सकता है कि उपलब्धि अभिप्रेरणा निर्भरता-उन्मुखता का निर्धारक है क्योंकि हो सकता है कि जिन किशोरों में उपलब्धि-अभिप्रेरणा निम्न स्तर की हो उनमें निर्भरता-उन्मुखता अधिक पाई जाती हो। इस प्रकार, सह-सम्बन्धात्मक शोध द्वारा प्राप्त परिणाम स्वतंत्र चर और आश्रित चर में सममित कार्यात्मक सम्बन्ध के सूचक होते हैं न कि असममित- जैसा कि प्रयोगात्मक शोध में होता है।

1) सह सम्बन्धात्मक शोध की सीमाएँ-

सह-सम्बन्धात्मक शोध की सीमाओं में एक है चरों का ढीला नियंत्रण। चूँकि सह-सम्बन्धात्मक शोध में कुछ ऐसे चर होते हैं जिनका सही-सही नियंत्रण करना शोधकर्ता के लिए कठिन होता है, अतः इसका कुप्रभाव आश्रित चर पर पड़ने से रोका नहीं जा सकता। जैसे- ऊपर दिए गए उदाहरण में शोधकर्ता यदि समस्या समाधान योग्यता और

बुद्धि के बीच के सम्बन्ध का अध्ययन करना चाहता है तो शोध में शामिल किए गये सभी प्रयोज्यों की आयु का एक समान होना आवश्यक है अन्यथा, आयु के साथ मिलकर समस्या समाधान योग्यता को प्रभावित कर सकता है। परन्तु, चूँकि आयु का नियंत्रण चयन प्रक्रिया द्वारा किया जाता है, अतः यह नियंत्रण प्रयोगात्मक शोध की तरह सख्त न होकर ढीले किस्म का होता है।

सह-सम्बन्धात्मक शोध की दूसरी सीमा है स्वतंत्र चर और आश्रित चर के बीच कार्य-कारण सम्बन्ध या कारण एवं परिणाम सम्बन्ध का निश्चित न होना। इस शोध के आधार पर जो परिणाम प्राप्त होते हैं उससे यह पता नहीं चलता कि प्राप्त परिणाम का कारण क्या है? उदाहरण स्वरूप, यदि अधिक बुद्धि वाले बच्चे में समस्या समाधान की योग्यता अधिक हो तो इससे यह पता नहीं चलता कि समस्या समाधान योग्यता का अधिक होना अधिक बुद्धि का परिणाम है। यानी, बुद्धि कारण है और समस्या समाधान फल है। समस्या समाधान योग्यता का बेहतर होना आयु अधिक होने, अनुभव अधिक होने के कारण भी होता है। इस प्रकार, सह-सम्बन्धात्मक शोध चरों के बीच कारण एवं परिणाम सम्बन्ध के निश्चितता की मात्रा कम कर देता हैं।

2.5 प्रयोगात्मक तथा सहसम्बन्धात्मक शोध में अन्तर

प्रयोगात्मक तथा सहसम्बन्धात्मक शोधों के अर्थ एवं विशेषताओं पर प्रकाश डालने के क्रम में हम चर्चा कर चुके हैं कि इन दोनों ही शोधों में स्वतंत्र एवं आश्रित चर उपस्थित होते हैं तथा दोनों ही शोधों का स्वरूप आनुभविक होता है। फिर भी इन दोनों शोधों में निम्नलिखित भिन्नताऐं हैं -

i. प्रयोगात्मक शोध में जहां स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ प्रयोगात्मक रूप से यानी, सीधे किया जाता है, वहीं सहसम्बन्धात्मक शोध में स्वतंत्र चर में चयन के द्वारा जोड़-तोड़ या हस्तचालन का कार्य किया जाता है।

ii. प्रयोगात्मक शोध में शोधकर्ता स्वतंत्र चर एवं आश्रित चर के बीच कार्य-तथा-प्रभाव सम्बन्ध बड़े विश्वास के साथ स्थापित कर पाता है वहीं सहसम्बन्धात्मक शोध में स्वतंत्र चर तथा आश्रित के बीच कार्य-तथा-कारण सम्बन्ध स्थापित करना कठिन है।

2.6 सारांश

प्रयोगात्मक शोध में अध्ययन नियंत्रित परिस्थिति में किया जाता है। यह किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन की सर्वश्रेष्ठ विधि है। मनोविज्ञान एवं अन्य के क्षेत्र में किए जाने वाले प्रयोग में दो व्यक्तियों का होना प्रायः आवश्यक होता है- एक प्रयोगकर्ता और दूसरा प्रयोज्य। प्रयोगात्मक शोध में नियंत्रित परिस्थिति में किसी स्वतंत्र चर में हस्तचालन कर उसके प्रभाव का निरीक्षण आश्रित चर पर किया जाता है। प्रयोगात्मक शोध के दो प्रकार हैं-प्रयोगशाला प्रयोग शोध तथा क्षेत्र प्रयोग विधि।

सहसम्बन्धात्मक शोध भी आनुभविक शोध का एक प्रकार है। इसमें शोधकर्ता आश्रित चर पर स्वतंत्र चर के प्रभाव का अध्ययन करता है। वह स्वतंत्र चर का हस्तचालन सीधे न करके चयन प्रक्रिया द्वारा करता है। सहसम्बन्धात्मक शोध में कार्यरत स्वतंत्र चर 'टाइप-एस' प्रकार का होता है।

2.7 शब्दावली

- **प्रयोग:** नियंत्रित परिस्थिति में किया गया क्रमबद्ध निरीक्षण ही प्रयोग कहलाता है।
- **'टाइप-एस' स्वतंत्र चर:** जिस स्वतंत्र चर में हस्तचालन सीधे न करके चयन प्रक्रिया के द्वारा किया जाता है उसे 'टाइप-एस' स्वतंत्र चर कहते हैं।
- **'टाइप-ई' स्वतंत्र चर:** जिस स्वतंत्र चर में हस्तचालन सीधे यानी, संक्रियात्मक रूप से किया जाता है, उसे 'टाइप-ई' स्वतंत्र चर कहते हैं।

2.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1) जिस चर को प्रयोगकर्ता द्वारा हस्तचालित किया जाता है उसे .... चर कहते हैं।
2) प्रयोग में जिस चर को नियंत्रित किया जाता है उसे कहते है .... ।
3) जब कोई प्रयोग किसी बंद कमरे की नियंत्रित परिस्थिति में किया जाता हैं तो उसे .... शोध कहते हैं।
4) जब शोधकर्ता किसी क्षेत्र परिस्थिति में या वास्तविक परिस्थिति में स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ कर उसके प्रभाव का अध्ययन करना चाहता है तो इसे .... शोध कहते हैं।
5) सहसम्बन्धात्मक शोध में स्वतंत्र चर का स्वरूप .... प्रकार का होता है। (टाईप-ई/टाईप-एस)
6) सहसम्बन्धात्मक शोध में स्वतंत्र चर एवं आश्रित चर के बीच 'कारण एवं परिणाम' सम्बन्ध .... होता है? (निश्चित/अनिश्चित)

उत्तर:1) स्वतंत्र चर 2) बहिरंग चर 3) प्रयोगशाला प्रयोग 4) क्षेत्र प्रयोग 5) टाइप-एस 6) अनिश्चित

2.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- अरूण कुमार सिंह (1998) मनोविज्ञान,समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल-बनारसीदास, दिल्ली।
- एच.के. कपिल (2001) अनुसंधान विधियां (व्यवहारपरक विज्ञानों में), एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा।

- एफ.एन. करलिंगर (1964) फाउण्डेशन्स ऑफ विहैवियरल रिसर्च, हॉल्ट, रिनेहार्ट एवं विंसटन, इंक, न्यूयार्क।

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. प्रयोगात्मक शोध से आप क्या समझते हें? इसकी विशेषताओं एवं सीमाओं का उल्लेख करें।
2. सहसम्बन्धात्मक शोध के गुण-दोषों का वर्णन करें।
3. एक प्रयोगात्मक शोध की रूपरेखा प्रस्तुत करें।
4. प्रयोगात्मक प्रयोग शोध प्रयोग एवं क्षेत्र प्रयोग शोध प्रयोग में अन्तर स्थापित करें।
5. संक्षिप्त टिप्पणी लिखें-

   i) प्रयोगशाला प्रयोग शोध ii) 'टाइप-एस' स्वतंत्र चर

   iii) चर iv) क्षेत्र प्रयोग शोध

इकाई-3 एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध
(Ex-post facto Research)

इकाई संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध का अर्थ

3.3.1 एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध का महत्व

3.3.2 एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध के लाभ

3.3.3 एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध की सीमाएँ

3.3.4 एक्स-पोस्ट फैक्टो के दोषों का निराकरण

3.4 एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध एवं प्रयोगात्मक शोध में अन्तर

3.5 सारांश

3.6 शब्दावली

3.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.9 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

पूर्व की इकाई में आपने प्रयोगात्मक शोध के स्वरूप व विशेषताओं का अध्ययन किया, इसके विभिन्न प्रकारों की जानकारी हासिल की तथा प्रयोगात्मक एवं सह-सम्बन्धात्मक शोध में अन्तर करना सीखा।

प्रस्तुत इकाई में आप एक ऐसे शोध के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे जिसे एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध या घटनोत्तर शोध के रूप में जाना जाता है। यह एक ऐसा शोध है जिसका बड़े पैमाने पर इस्तेमाल समाजशास्त्रीय एवं शैक्षिक शोधों में होता है।

इस इकाई के अध्ययन से आपको फायदा यह होगा कि आप शोध की कुछ नई विमाओं को जान सकेंगे, साथ-ही दैनिक जीवन में घटित होने वाली घटनाओं के अध्ययन में इस शोध विधि की उपयोगिता पर विचार कर सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि आप

- एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध के संप्रत्यय को समझ सकें।
- एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध के लाभ-हानि पर प्रकाश डाल सकें।
- एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध तथा प्रयोगात्मक शोध में अन्तर कर सकें तथा
- एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध की सीमाओं के निवारण के तरीके बता सकें।

3.3 एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध का अर्थ

अभी तक आपने प्रयोगात्मक शोध और उसके विभिन्न रूपों का अध्ययन किया। इसमें आपने देzखा कि किस प्रकार एक शोधकर्ता स्वतंत्र चर में हस्त चालन कर उसके विभिन्न स्तरों का प्रभाव आश्रित चर पर अवलोकित करता है।

आइए, अब एक ऐसे शोध की चर्चा करें जिसका स्वरूप तो अप्रयोगात्मक होता है परन्तु वह भी आनुभविक शोध ही है। इसे एक्स-पोस्ट फैक्टो या कारणात्मक-तुलनात्मक शोध के नाम से भी जानते हैं। यह एक अप्रयोगात्मक शोध इसलिए है क्योंकि इसमें शोधकर्ता का स्वतंत्र चरों पर कोई सीधा नियंत्रण नहीं होता है क्योंकि उनकी अभिव्यक्ति प्रयोग प्रारंभ होने के पहले ही हो चुकी होती है या फिर उनका स्वरूप ही कुछ ऐसा होता है जिनमें जोड़-तोड़ या हस्तचालन किया ही नहीं जा सकता। दरअसल, अप्रयोगात्मक शोध में स्वतंत्र चर और आश्रित चर के विशेष सम्बन्धों के बारे में इन दोनों तरह के चरों में हुए सहवर्ती परिवर्तनों के आधार पर मात्र एक अंदाज लगाया जाता है। मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा के क्षेत्र में बहुत सारे ऐसे चर हैं जिनमें जोड़-तोड़ करना सम्भव नहीं है। व्यक्ति की बुद्धि, उसकी उपलब्धि, अभिक्षमता, सामाजिक वर्ग, घरेलू पृष्ठभूमि आदि ऐसे चर हैं जिनका नियंत्रित अन्वेषण तो संभव है, परन्तु इनमें जोड़-तोड़ करके प्रयोग करना कठिन है।

एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध के साथ भी इसी तरह की स्थिति बनती है। इसमें भी शोधकर्ता किसी स्वतंत्र चर का हस्त चालन कर उसके प्रभाव का सीधे अध्ययन करने की स्थिति में नहीं होता, बल्कि वह किसी 'प्रभाव' के आधार पर उसके संभावित कारणों का पता लगाने की कोशिश करता है। यहाँ 'प्रभाव' आश्रित चर होता है तथा

पहले बीत चुकी घटनाएँ, जिन्हें 'कारण' कहा जाता है। स्वतंत्र चर होते हैं। इस प्रकार, एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध में स्वतंत्र चर की अभिव्यक्ति आश्रित चर के सामने आने के बहुत पहले ही हो चुकी होती है। यही कारण है कि इस तरह के शोध में शोधकर्ता चाहकर भी स्वतंत्र चर में किसी तरह का कोई जोड़-तोड़ नहीं कर सकता है। इस तरह से एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध का मुख्य उद्देश्य इस मौलिक प्रश्न का उत्तर देना होता है कि कोई विशेष घटना, परिणाम, अवस्था या अन्य प्रकार के व्यवहार के साथ कौन-कौन से कारक सम्बन्धित होते हैं।

उपर्युक्त विवेचना पर यदि हम ध्यान दें तो एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध को निम्न प्रकार परिभाषित कर सकते हैं- ''एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध एक ऐसा आनुभविक शोध है जिसमें शोधकर्ता चरों के बीच के सम्बन्ध के बारे में ऐसे स्वतंत्र चरों के आधार पर अनुमान लगाता है जिसकी अभिव्यक्ति पहले हो चुकी होती है। इस तरह के शोध में शोधकर्ता को स्वतंत्र चरों की अभिव्यक्ति पर कोई नियंत्रण नहीं रहता है क्योंकि वे प्रभाव दिखाने के बहुत पहले घटित हो चुके होते हैं।''

उपरोक्त परिभाषा से यह स्पष्ट है कि एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध में शोधकर्ता स्वतंत्र चर की स्वयं नियन्त्रित नहीं करता है, बल्कि आश्रित चर के आधार पर उसकी खोज करता है। स्पष्टतः यह स्थिति वास्तविक प्रायोगिक स्थिति से विचलित व भिन्न होती है। अतः मर्टन एवं मैक्सवैबर ने इस प्रकार की शोध विधि की आलोचना करते हुए इसे 'काल्पनिक प्रयोग' की संज्ञा दी है। चैपिंन और ग्रीनवुड ने भी एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध को एक ऐसा अर्द्ध प्रयोग बताया है, जिसमें स्वतन्त्र चरों को अनुरूपण तथा सांकेतिक साधनों के द्वारा नियन्त्रण में लाने का प्रयास किया जाता है।

3.3.1 एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध का महत्व-

इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि सामाजिक तथा शैक्षिक क्षेत्रों में होने वाले अधिकांश शोधों का स्वरूप घटनोत्तर अथवा एक्स-पोस्ट फैक्टो ही होता है। इसका एक मुख्य कारण यह है कि इन क्षेत्रों की विषय-सामग्री का स्वरूप ही ऐसा है, जिसका अध्ययन प्रायः एक्स-पोस्ट फैक्टो विधि के माध्यम से ही अधिक उपयुक्त रहता है। उदाहरणार्थ कुछ सामाजिक घटनाएँ ऐसी होती हैं, जिसका प्रयोगात्मक अध्ययन प्रायः सम्भव नहीं होता, जैसे भीड़ का व्यवहार। यह ऐसा व्यवहार है, जिसका वस्तुतः प्रयोगशाला में अध्ययन उपयुक्त नहीं होता, क्योंकि भीड़ का व्यवहार कृत्रिम रूप से प्रयोगशाला में पुनरावृत्ति नहीं की जा सकती, और अगर की भी जाती है, वह कृत्रिम भीड़ की होगी-प्राकृतिक व स्वाभाविक भीड़ नहीं। दंगा का अध्ययन भी देगा होने के उपरान्त ही संभव है। इसे प्रयोगशाला में उत्पन्न कराकर फिर इसका प्रायोगिक अध्ययन करना संभव नहीं। इसी प्रकार, सामाजिक संस्थायें, संरचनायें, नेतृत्व, संस्कृति, अभिवृत्ति, निष्पत्ति, शैक्षिक उपलब्धि व बालक की मानसिक ग्रन्थि आदि ऐसे अनेक विषय है, जिनसे एक्स-पोस्ट फैक्टो अध्ययन ही अधिकतर उपयुक्त रहता है।

इन क्षेत्रों में एक्स-पोस्ट फैक्टो विधि द्वारा अध्ययन का एक दूसरा आधार यह भी है कि विज्ञान का उद्देश्य केवल दो चरों के अन्तर्सम्बन्धों के विषय में केवल भविष्य कथन की ही क्षमता को प्राप्त करना नहीं है, बल्कि उनके अन्तर्सम्बन्धों को समझना भी एक आवश्यक तथा महत्वपूर्ण तत्व है। उदाहरणार्थ यदि एक अध्ययनकर्ता नगरीकरण के प्रभाव का अध्ययन मानसिक स्वास्थ्य पर करना चाहता है, तब वह यहाँ भले ही एक वास्तविक प्रायोगिक अध्ययन करने में सफल न हो, परन्तु यदि यहाँ अध्ययनकर्ता अपने प्रतिदर्श का स्वरूप यादृच्छिक रखता है, और नगरीकरण व मानसिक स्वास्थ्य का एक वस्तुपरक मापदण्ड प्रस्तुत है, और फिर निष्पक्ष आँकड़ों के आधार पर निष्कर्ष निकालता है, तब इस प्रकार प्राप्त निष्कर्ष भले ही उच्च वैज्ञानिक मापदण्ड पर वैध न हों, फिर भी, ऐसे एक्स-पोस्ट फैक्टो अध्ययनों से व्यावहारिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण तथा वैज्ञानिक स्तर की व्यापक जानकारी उपलब्ध होती है।

इसके अतिरिक्त सामाजिक व शैक्षिक शोधों में अत्यधिक प्रचलित विधियाँ- जैसे, व्यक्ति इतिहास, अनुदैर्ध्य अध्ययन तथा नैदानिक अध्ययन भी एक्स-पोस्ट फैक्टो अध्ययन के ही अंश है। अतः सामाजिक व शैक्षिक शोधों में एक्स-पोस्ट फैक्टो विधि का उपयोग अत्यन्त महत्वपूर्ण है, तथा एक प्रकार से अनिवार्य भी है।

3.3.2 एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध के लाभ-

एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध के निम्नलिखित लाभ हैं-

1) इस शोध का संचालन प्रयोगात्मक शोध की तुलना में सरल है क्योंकि यहां स्वतंत्र चरों में जोड़-तोड़ करने का झंझट नहीं रहता है।
2) इससे दो या दो से अधिक चरों में साहचर्यात्मक सम्बन्ध ज्ञात करने में महत्वपूर्ण सहायता मिली है तथा इससे एक घटना से सम्बन्धित विभिन्न तत्वों के सूक्ष्म विश्लेषण में पर्याप्त सहायता मिलती है।
3) ऐसे अनुसन्धान द्वारा प्राप्त साहचर्यात्मक सम्बन्धों की जानकारी के आधार पर विभिन्न चरों में अधिकांशतः प्रायोगिक अध्ययनों के लिए उपयोगी परिकल्पनाओं की रचना में तर्क संगत व महत्वपूर्ण सहायता मिलती है।
4) एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध द्वारा दो चरों में व्याप्त सहसम्बन्ध गुणांक के आधार पर उनके घटित होने के विषय में साधारणतः सफल भविष्य कथन भी किये जा सकते हैं।
5) कुछ सामाजिक तथा शैक्षिक क्षेत्रों में, मुख्यतः उन स्थितियों में इस विधि का विशेष योगदान है जिसमें प्रायः प्रायोगिक विधि का उपयोग नहीं हो सकता क्योंकि वहां स्वतंत्र चरों में जोड़-तोड़ संभव नहीं होता।

6) नैदानिक शोधों में भी इस शोध विधि का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि निदान के अध्ययन का स्वरूप घटनोत्तर ही रहता है। अतः निदान की स्थिति में घटनोत्तर अध्ययन की उपयुक्तता अपेक्षाकृत अधिक रहती है और इस स्थिति में प्रायोगिक पद्धति की अनुप्रयुक्ति साध्य ही नहीं होती है।

7) जहां 'प्रभाव' के आधार पर 'कारणों' का अध्ययन करना हो वहां एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध ही बेहतर है।

3.3.3 एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध की सीमाएँ-

एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध की उपरवर्णित लाभों के बावजूद यह शोध बहुत लोकप्रिय नहीं है क्योंकि इसकी निम्नलिखित सीमाएँ हैं -

1) चूंकि शोधकर्ता स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ नहीं कर पाता, अतः स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर के सम्बन्ध के बारे में यथार्थ ढंग से किसी प्रकार का कोई पूर्व कथन करना कठिन होता है।

2) इस शोध में दो चरों के बीच साहचर्यात्मक स्म्बन्ध की जानकारी मिलती है, परन्तु कारणात्मक सम्बन्ध की जानकारी नहीं मिल पाती है।

3) शोधकर्ता का चूंकि सम्बन्धित चरों पर नियंत्रण नहीं होता, अतः वह आश्रित चर से सम्बन्धित स्वतंत्र चर का अन्य स्वतंत्र चर में खोज करता है। इस प्रकार ऐसे अध्ययन में अध्ययनकर्ता का सम्बन्धित चरों पर प्रायोगिक पद्वति की स्थिति जैसा नियंत्रण नहीं रहता।

4) चरों पर नियंत्रण के अभाव में एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध से प्राप्त निष्कर्षो के विषय में केवल अनुमान ही लगाये जा सकते हैं, इससे निश्चित व विश्वसनीय निष्कर्ष उपलब्ध नहीं होते।

5) प्रयोगात्मक शोध की अपेक्षा एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध की प्रक्रिया अधिक विषम होती है, क्योंकि इसका प्रक्रम स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर के प्रतिमान पर आधारित नहीं होता बिल्क इसमें आश्रित चर के आधार पर प्रतिगामी रूप में स्वतंत्र चर को अन्य अनेक स्वतंत्र चरों में खोज की जाती है।

6) इसमें प्रयोज्यों का आवंटन यादृच्छिकृत आधार पर सम्भव नहीं होता। अतः ऐसे अनुसंधान द्वारा प्राप्त निष्कर्षा में असंगत चरों के प्रभाव की भरमार रहती है। इस कारण इसके द्वारा प्राप्त निष्कर्षों में विश्वसनीयता का स्तर प्रायः निम्न श्रेणी का ही रहता है।

7) एक्स पोस्ट फैक्टो द्वारा शोध में एक परिकल्पना के परीक्षण से दो चरों के सम्बन्ध में सह सम्बन्धात्मक अध्ययनों के आधार पर केवल अनुमान ही लगाये जा सकते हैं। ऐसे अध्ययनों से विभिन्न चरों में निश्चित प्रक्रार्यात्मक सम्बन्धों के अभाव में आवश्यक भविष्यकथन की शक्ति उपलब्ध नहीं होती।

3.3.4 एक्स पोस्ट फैक्टो शोध के दोषों का निराकरण-

एक्स पोस्ट फैक्टो शोध के प्रति सबसे बड़ी आपत्ति यह उठाई जाती है कि इसके द्वारा दो या दो से अधिक चरों में कारणता के सम्बन्ध को स्थापित नहीं किया जा सकता। इस कारण ऐसे शोध से प्राप्त निष्कर्ष उच्च वैज्ञानिक स्तर के नहीं होते। परन्तु इस सम्बन्ध में लैथ्रोप का कहना है यदि एकल पोस्ट फैक्टो अध्ययन द्वारा कारणता के तथ्य के विषय में अनुमान नहीं लगाया जा सकता, तब इसका अर्थ यह नहीं है कि इस शोध विधि तंत्र का परित्याग ही कर दिया जाय। इस शोध विधि के दोषों को दूर करने की विधि तथा इसकी उपादेयता पर प्रकाश डालते हुए लैथ्रोप ने आगे चल कर लिखा है, सौभाग्य से, एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा विभिन्न एक्स पोस्ट फैक्टो अध्ययनों के माध्यम से कारणता के अनुमान के लक्ष्य की ओर अग्रसर हुआ जा सकता है। यह विधि संकेन्द्रित प्रमाण की है।

लैथ्रोप ने इस सम्बन्ध में एक परम्परागत उदाहरण फेफड़े के कैंसर से सम्बन्धित सिगरेट धूम्रपान का दिया है। उसके अनुसार इस विषय पर पहले कुछ अध्ययनों का स्वरूप एक्स पोस्ट फैक्टो ही था। चूंकि इस प्रकार का अध्ययन प्रायोगिक विधि द्वारा उपयुक्त नहीं था, अतः एक्स पोस्ट अध्ययनों के आधार पर सिगरेट धूम्रपान से कैंसर के रोग के होने को निर्णायक रूप से सिद्ध नहीं किया जा सकता था। अतः शोध के इस प्रक्रम में अनेक वैकल्पिक व्याख्याओं को प्रस्तुत किया गया। कैंसर के रोग के लिए एक व्याख्या यह दी गयी कि किसी एक विचलित गुणसूत्र के कारण व्यक्ति में फेफड़े के कैंसर की ग्रहणशीलता, तथा साथ ही साथ, सिगरेट धूम्रपान की तीव्र इच्छा प्रेरित होती है, जिससे फेफड़े के कैंसर तथा सिगरेट-धूम्रपान में अत्यधिक सहचारिता देखने में आती है। इस रोग के सम्बन्ध में एक व्याख्या संवेगात्मक तनाव की दी गयी और बताया गया कि संवेगात्मकता की तीव्र इच्छा भी उदेलित होती है, और यही कारण है कि धूम्रपान तथा लंग कैंसर में अत्यधिक सह सम्बन्ध पाया जाता है। संक्षेप में इस प्रकार की व्याख्याओं पर आधारित अनेक सूक्ष्म एक्स पोस्ट फैक्टो अभिकल्पों के अध्ययपनों के आधार पर अब ऐसे प्रमाण संचित हो पाये हैं कि उनके आधार पर अब सिगरेट धूम्रपान व कैंसर में कारणता के सम्बन्ध की अधिकांशतः निर्णायक रूप से स्थापित कर दिया गया है। इस सम्बन्ध में ऐसे बहु-पक्षीय एक्स फैक्टो अध्ययनों के आधार पर यू.एस.ए. के सर्जन जनरल का कहना है कि इस समय तक जो प्रमाण संचित हो सके हैं, उसके आधार पर अब यह स्पष्टतः पता लगता है लंग कैंसर की बढ़ती हुई संख्या में एक मुख्य प्रेरणात्मक कारण धूम्रपान है।

संक्षेप में एक्स पोस्ट फैक्टो अनुसंधान के अन्तर्गत आश्रित चर से सम्बन्धित विभिन्न स्वतंत्र चरों को विभिन्न वैकल्पिक परिकल्पनाओं में विभाजित किया जाता है और फिर उनके परीक्षणों से जो प्रमाण संचित होते हैं, उनके सापेक्षिक भार के आधार पर सम्बन्धित चरों के विषय में कारणता के सम्बन्ध की उपयुक्तता का विशिष्ट सांख्यिकीय विधियों द्वारा विश्लेषण तथा आंकन किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में अध्ययनकर्ता को तत्व विश्लेषण व आंशिक सहसम्बन्ध जैसी विधियों के उपयोग से महत्पूर्ण सहायता मिल सकती है।

3.4 एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध तथा प्रयोगात्मक शोध में अन्तर

मनोवैज्ञानिक शोधों में प्रयोगात्मक शोध तथा एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध का उपयोग ज्यादा होता है। इन दोनों ही शोधों में शोधकर्ता अपने अध्ययन के आधार पर आश्रित चर के बारे में कुछ पूर्वानुमान लगाता है। फिर भी इन दोनों में निम्नलिखित अन्तर है।

1) एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध की प्रक्रिया प्रयोगात्मक शोध प्रक्रिया से पर्याप्त मात्रा में भिन्न होती है। प्रयोगात्मक प्रक्रिया अपेक्षाकृत सरल तथा तर्क-संगत होती है। इसमें परिकल्पना की रचना का स्वरूप भी बोधगम्य तर्क पर आधारित रहता है। तथा इसका प्रतिमान भी वैज्ञानिक विचारधारा के अनुकूल रहता है, जैसे- यदि ग है, तब ल है। इसके विपरीत, एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध का प्रक्रम विषम होता है। इसमें यदि ल परतन्त्र चर है, तब इसमें स्वतन्त्र चर x_1, x_2, x_3, x_4 कुछ भी हो सकते हैं। यहाँ शोधकर्ता को यह स्थापित करना पड़ता है कि इन स्वतन्त्र चरों में से परतन्त्र चर का किस विशेष स्वतन्त्र चर से सम्बन्ध है। इस प्रकार, प्रयोगात्मक शोध में जहाँ स्वतन्त्र चर के आश्रित चर पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन प्रत्यक्षतः किया जाता है, वहाँ एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध में अप्रत्यक्षतः तथा प्रतिगामी रूप से आश्रित चर पर पड़ने वाले स्वतंन्त्र चर के प्रभाव को अन्य अनेक संयुक्त स्वतन्त्र चरों में से एक दूसरे से विलग करना पड़ता है।

2) एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध का स्वतन्त्र चर पर नियन्त्रण नहीं होता, और न ही वह उसमें इच्छानुसार कुछ हेर-फेर ही कर सकता है। परन्तु प्रयोगात्मक शोध में कम से कम ऐसा स्वतन्त्र चर अवश्य होता है जिस पर शोधकर्ता का पूर्ण नियन्त्रण रहता है, और जिसमें वह सामान्यतः इच्छानुसार हेरफेर कर सकता है।

3) प्रायोगिक अनुसन्धान में साधारणतः उपलब्ध प्रयोज्यों को दो समूहों में यादृच्छिक अथवा संयोगिक रूप से आवंटित किया जा सकता है, और इस प्रकार अध्ययन से सम्बन्धित दोनों समूहों को एक दूसरे के अनुरूप किया जा सकता है। क्योंकि जब दो समूचों में प्रयोज्यों का वितरण यादृच्छिकरण प्रक्रम पर आधारित रहता है, तब सैद्धान्तिक रूप से दोनों समूहों के विषय में समतुल्य होने की उपधारणा रहती है। इसी प्रकार, जब इस प्रकार से निर्मित दोनों समूहों में से एक का प्रयोगिक स्थिति व दूसरे का प्रयोग की नियन्त्रित स्थिति के लिए यादृच्छिक आधार पर चयन किया जाता है, तब इस प्रक्रिया से उनके पारस्परिक रूप से सन्तुलित व समतुल्य हो जाने की सैद्धान्तिक प्रसम्भाव्यता में और भी अधिक वृद्धि की जा सकती है। सिद्धान्तः प्रयोज्यों की ऐसी प्रतिचयन पद्धति से उच्च वैज्ञानिक स्तर के निष्कर्ष उपलब्ध होते हैं। परन्तु एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध में प्रयोज्यों का स्वरूप यादृच्छीकरण पर आधारित न होकर स्वयं चयन पर आधारित रहता है। इसका कारण यह है कि एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध में शोधकर्ता को उन्हीं व्यक्तियों को प्रयोज्यों के रूप में लेना पड़ता है, जिनमें आश्रित चर देखने में आता है। इस स्थिति में उसकी प्रायः प्रतिचयन पद्धति के उपयोग का अवसर ही नहीं मिलता।

उदाहरणार्थ, यदि फेफड़े के कैन्सर के रोगियों में सिगरेट धूम्रपान के घटनाक्रम का अध्ययन करना है, तब यहाँ अध्ययनकर्ता को ऐसे रोगियों की खोज करनी पड़ेगी, जो कि फेफड़े के कैन्सर से पीड़ित विधि द्वारा नहीं किया जाता, बल्कि ऐसी स्थिति में, उन सब व्यक्तियों को अध्ययन में सम्मिलित कर किया जाता, फेफड़े के कैन्सर से पीड़ित होते हैं। अतः अध्ययन के लिए उनका चयन ही हो जाता है, और प्रयोज्यों के ऐसे चयन को ही स्वयं-चयन कहते हैं। इस प्रकार एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध में प्रयोज्यों का स्वरूप स्वयं चयनित रहता है।

4) प्रायोगात्मक शोध द्वारा प्राप्त निष्कर्ष अधिक विश्वसनीय व वैज्ञानिक होते हैं, क्योंकि ऐसे अध्ययन में प्रयोज्यों के चयन का आधार प्रसम्भाव्यता सिद्धान्त अथवा यादृच्छिकरण प्रक्रम होता है। इसके विपरीत एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध द्वारा प्राप्त निष्कर्ष इतने विश्वसनीय नहीं होते। इसका कारण यह है कि इसके प्रयोज्यों के चयन की प्रक्रिया स्वयं-चयन पर आधारित होती है, और स्वयं-चयन पर आधारित प्रयोज्यों पर किये गये अध्ययन से वैज्ञानिक परिणाम उपलब्ध नहीं होते। वास्तव में, जब तक प्रयोज्यों के चयन का आधार यादृच्छिक प्रतिचयन नहीं होता, तब तक उनमें असंगत चरों के प्रभाव की भरमार रहती है, और ऐसे प्रतिदर्श पर आधारित निष्कर्ष को प्रायः विश्वसनीय व वैध नहीं माना जाता है।

प्रयोज्यों के प्रतिचयन के तरीकों को लेकर प्रयोगात्मक एवं एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध की विश्वसनीयता का स्तर अलग-अलग होता है तथा एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध की विश्वसनीयता स्तर कम होता है। इस सम्बन्ध में लैथ्रोपैको का कहना है कि एक वास्तविक प्रयोग में प्रसंभाव्यता की मात्रा से यह पता लगता है कि प्राप्त परिणामों में जो प्रसम्भाव्यता देखने में आयी है वह घटित होती, यदि अभिक्रियाओं में वास्तविक अन्तर न हो तो। जहाँ तक एक्स-पोस्ट फैक्टो अध्ययन का सम्बन्ध है, इसमें प्रभव्यता की मात्रा से यह पता लगता है कि परिणामों में जो प्रसम्भाव्यता देखने में आयी है, वह देखने में न आती, यदि अध्ययन के लिए चयन किये गये समूहों में प्रारम्भिक अन्तर न होते।

5) अधिकांश प्रयोगात्मक शोध के आधार पर प्रायः दो चरों में व्याप्त कारणता के सम्बन्ध को स्पष्ट किया जा सकता है, क्योंकि इनके अन्तर्गत स्वतन्त्र चर का प्रत्यक्ष रूप से आश्रित चर पर प्रभाव का गहन अध्ययन किया जाता है। परन्तु एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध के द्वारा ऐसे दो चरों में कारणता का सम्बन्ध वैध रूप से स्थापित करना कठिन होता है, क्योंकि, इसमें अधिकांशतः यह स्थापित करना संशयात्मक रहता है कि आश्रित चर पर विभिन्न चरों में से जिस एक स्वतन्त्र चर के सम्बन्ध का अनुमान लगाया गया है, क्या वह अनुमान विश्वसनीय तथा वैध है? अतः एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध के माध्यम से प्रायः दो या दो से अधिक चरों में केवल साहचर्यात्मक सम्बन्ध को सिद्ध करना अत्यधिक संदिग्ध रहता है।

3.5 सारांश

एक्स पोस्ट फैक्टो शोध एक ऐसा शोध है जिसमें शोधकर्ता किसी 'प्रभाव' के आधार पर उसके संभावित कारणों का पता लगाने की कोशिश करता है। इस शोध में 'प्रभाव' आश्रित चर होता है तथा 'कारण' स्वतंत्र चर होता है। शोधकर्ता काम 'प्रभाव' उत्पन्न करने वाले कारणों का पता लगाना, यानी स्वतंत्र चरों की जानकारी प्राप्त करना होता है। भीड़, दंगा, सम्बन्ध-विच्छेद आदि जैसे सामाजिक घटनाओं के अध्ययन हेतु एक्स पोस्ट फैक्टो शोध सर्वाधिक लोकप्रिय विधि है।

3.6 शब्दावली

- **कार्य-कारण सम्बन्ध:** इसे प्रभाव-कारण सम्बन्ध भी कहते हैं जो यह बताता है कि कोई कार्य किन कारणों से सम्पन्न हुआ या किसी प्रभाव का मुख्य कारण क्या-क्या है।

3.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1) एक्स पोस्ट फैक्टो शोध है एक -

(अ) प्रयोगात्मक शोध (ब) अप्रयोगात्मक शोध (स) में दोनों (द) इनमें से कोई नहीं

➢ निम्नलिखित में कौन-सा कथन सही है और कौन-सा गलत -

2) एक्स-पोस्ट फैक्टो शोध में शोधकर्ता का स्वतंत्र चरों पर कोई सीधा नियंत्रण नहीं रहता।

3) प्रयोगात्मक शोध की तुलना में एक्स पोस्ट फैक्टो शोध से प्राप्त निष्कर्ष की विश्वसनीयता अधिक होती है।

उत्तर: 1) ब 2) सही 3) गलत

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- अरूण कुमार सिंह (1998) मनोविज्ञान,समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल-बनारसीदास, दिल्ली।
- एच.के. कपिल (2001) अनुसंधान विधियां (व्यवहारपरक विज्ञानों में), एच.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा।
- एफ.एन. करलिंगर (1964) फाउण्डेशन्स ऑफ विहैवियरल रिसर्च, हॉल्ट, रिनेहार्ट एवं विंसटन, इंक, न्यूयार्क।

3.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. एक्स पोस्ट फैक्टो शोध के लाभ एवं सीमाओं का उल्लेख करें।

2. एक्स पोस्ट फैक्टो शोध से आप क्या समझते हैं? प्रयोगात्मक शोध से यह किस प्रकार भिन्न है?
3. एक्स पोस्ट फैक्टो शोध के महत्व पर प्रकाश डालें।
4. एक्स पोस्ट फैक्टो शोध के दोष बतायें तथा दोषों के निराकरण हेतु उपाय सुझायें।

इकाई 4. शोध अभिकल्प:- अर्थ एवं उद्देश्य

(Research Design: Meaning and Objectives)

इकाई संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 शोध अभिकल्प का अर्थ एवं विशेषताएँ

4.4 शोध अभिकल्प का उद्देश्य

4.5 सारांश

4.6 शब्दावली

4.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.9 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

सामाजिक शोध में शोध अभिकल्प की भूमिका काफी महत्वपूर्ण होती है। मनोविज्ञान में तो इसका महत्व और भी अधिक है। किसी भी प्रकार के शोध चाहें वह प्रयोगात्मक हो या अप्रयोगात्मक हो का परिणाम एवं निष्कर्ष शोध अभिकल्प पर निर्भर करता है। यदि शोध अभिकल्प त्रुटिपूर्ण होगा तो उसका परिणाम एवं निष्कर्ष भी त्रुटिपूर्ण ही होगा। ऐसी स्थिति में वैध निष्कर्ष के लिए आवश्यक है कि उचित शोध अभिकल्प हो।

इस इकाई में शोध अभिकल्प क्या है, इसकी विशेषताओं एवं उद्देश्यों के सम्बन्ध में विस्तृत वर्णन किया गया है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह जान सकेंगे कि -

- शोध अभिकल्प क्या है तथा इसकी क्या विशेषता होती है।
- शोध अभिकल्प के उद्देश्यों के सम्बन्ध में विस्तृत जानकरी होगी।

4.3 शोध अभिकल्प का अर्थ एवं विशेषताएँ

शोध अभिकल्प वैज्ञानिक शोध प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग है। किसी भी प्रकार के शोध का परिणाम एवं निष्कर्ष शोध प्रारूप पर निर्भर करता है। यदि शोध प्रारूप या अभिकल्प दोषपूर्ण है तो वैसी स्थिति में शोध के परिणाम एवं निष्कर्ष की वैधता समाप्त हो जाती है।

शोध अभिकल्प एक ऐसी योजना होती है जिससे यह पता चलता है कि शोध में कितने स्वतंत्र चर प्रयुक्त हुए हैं। उनके कितने स्तर हैं, वाह्य चरों के नियंत्रण हेतु किन तकनीकों का उपयोग किया गया है। आश्रित चरों का मापन किस रूप में किया गया है। इस प्रकार स्पष्ट है कि शोध अभिकल्प शोध समस्याओं के बारे में उत्तर प्राप्त करने की एक वैज्ञानिक परियोजना या रूपरेखा है। करलिंगर के अनुसार- ''शोध अभिकल्प नियोजित अन्वेषण की एक ऐसी योजना, संरचना एवं व्यूहरचना होती है जिसके आधार पर अनुसंधान प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किए जाते हैं और प्रसरण पर नियंत्रण किया जाता है।'

शोध 'योजना' से तात्पर्य शोध के कार्यक्रम को प्रस्तुत करना है ओर इसके अंतर्गत समस्या को सीमाबद्ध करना, परिकल्पना की रचना करना तथा प्राप्त होने वाले ऑंकड़ों का विश्लेषण करना है। इससे स्पष्ट है कि शोध अभिकल्प शोध के विषयों के बारे में एक अनुभवसिद्ध आनुभविक सबूत प्रदान करने की एक वैज्ञानिक परियोजना है। अनुसंधान या शोध संरचना से तात्पर्य अनुसंधान के प्रतिमान से है। जिसमें शोध में शामिल किए गए चरों के सम्बन्धों का अध्ययन करने का एक विशेष प्रारूप होता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि शोध अभिकल्प शोध की एक ऐसी संरचना होती है जिसके द्वारा शोध में प्रयुक्त होने वाले चरों की संख्या, उनके स्तर या मूल्य तथा उनके उपयोग हेतु की जाने वाली सभी संक्रियाओं का एक प्रतिमान प्रस्तुत किया जाता है।

शोध प्रारूप का एक तीसरा पक्ष व्यूहरचना का है। इसमें ऑंकड़ों का संकलन तथा विश्लेषण प्रक्रिया पर प्रकाश डाला जाता है। इसमें यह भी स्पष्ट किया जाता है कि शोध उद्देश्य की पूर्ति किस प्रकार अधिक साध्य होगी और इस प्रक्रिया में आने वाली समस्याओं एवं कठिनाइओं का निराकरण कैसे किया जा सकेगा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि शोध प्रारूप या अभिकल्प एक ऐसी योजना है जिससे यह पता चलता है कि शोध में कितने स्वतंत्र चर है, उनके कितने स्तर हैं, बाह्य चरों को नियंत्रित करने की किन-किन तकनीकों का उपयोग किया गया है तथा आश्रित चरों का मापन किस रूप में हुआ है इस प्रकार स्पष्ट है कि शोध प्रारूप शोध समस्याओं के उत्तर प्राप्त करने की एक वैज्ञानिक योजना है। हम यह भी कह सकते हैं कि शोध अभिकल्प शोध की एक ऐसी योजना तथा संरचना होती है जिसके द्वारा शोध समस्या का उपयुक्त उत्तर तैयार किया जाता है। दूसरे शब्दों में - शोध अभिकल्प शोधकर्ता को शोध के वास्तविक लक्ष्य तक पहुँचने में मदद करता है।

उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर ही कहा जाता है कि शोध अभिकल्प किसी भी समस्या के शोध की एक परियोजना, संरचना एवं व्यूहरचना होती है।

4.4 शोध अभिकल्प का उद्देश्य

शोध अभिकल्प के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

1- शोध प्रश्नों का सही उत्तर ढूँढ़ना।

2- प्रसरण को नियंत्रित करना।

3- सामान्यीकरण की क्षमता।

1- शोध प्रश्नों का सही उत्तर ढूँढ़ना: शोधकर्ता शोध अभिकल्प के आधार पर शोध समस्याओं या प्रश्नों का एक वैध तथा वस्तुनिष्ठ उत्तर ढूँढ़ने का प्रयस करता है। इस प्रकार से शोध प्रारूप के द्वारा शोधकर्ता शोध समस्याओं के समाधान से सम्बन्धित कुछ अनुभवसिद्ध प्रमाण जुटाता है तथा शोधकर्ता को एक अंतिम निष्कर्ष पर पहुँचनेमें भी मदद करता है। एक वैज्ञानिक शोध प्रारूप यह भी बतलाता है कि प्रेक्षण की संख्या कितनी होनी चाहिए। कौन सा चर सक्रिय चर है तथा कौन सा चर गुण चर है। सक्रिय चर में कैसे जोड़-तोड़ किया जा सकता है।"

2- प्रसरण को नियंत्रित करना: शोध अभिकल्प का उद्देश्य विभिन्न तरह के प्रसरण को नियंत्रित भी करना होता है। शोध प्रारूप एक नियंत्रण प्रक्रिया के रूप में कार्य करता है। नियंत्रण प्रक्रिया के रूप में शोध प्रारूप तीन प्रकार के प्रसरणों के क्रमबद्धीकरण पर जोर देता है -

क- प्रयोगात्मक प्रसरण की उच्चतम सीमा प्राप्त करना- प्रयोगात्मक प्रसरण से तात्पर्ण आश्रित चर में उत्पन्न किए गए वैसे प्रसरण से होता है जिसे शोधकर्ता स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ करके उत्पन्न करता है। अक्सर शोधकर्ता यह प्रयास करता है कि वह अपने शोध में प्रयोगात्मक प्रसरण को उच्चतम सीमा तक बढ़ा देता कि उस शोध से अधिक से अधिक वस्तुनिष्ठ तथा वैध आंकड़ा प्राप्त हो सके।

ख- बाह्य प्रसरण को नियंत्रित करना- शोध प्रारूप का एक उद्देश्य यह भी होता है कि प्रयोगात्मक स्थिति में बाधा पहुँचाने वाले बाह्य चरों को नियंत्रित किया जाय। जिससे उससे उत्पन्न प्रसरण की मात्रा पर रोक लगाई जा सके। बाह्य चरों को नियंत्रित करने के लिए मुख्य रूप से विलोपन, दशाओं की स्थिरता, संतुलन, प्रतिसंतुलन, समेलन एवं चादृच्छिकीकरण जैसी तकनीकों या विधियों का उपयोग किया जाता है।

ग- त्रुटि प्रसरण को कम से कम करना- शोध अभिकल्प का तीसरा तकनीकी कार्य है प्रयोग या शोध में त्रुटिप्रसरण को कम से कम करना। त्रुटिप्रसरण वैसे प्रसरण को कहा जाता है जो प्रयोग या शोध में वैसे कारकों से उत्पन्न होते हैं जो नियम से बाहर होते हैं। इसमें कुछ कारक प्रयोज्यों से सम्बन्धित होते हैं। त्रुटि प्रसरण को कम करने का सबसे अच्दा ढंग यह है कि प्रयोग या शोध काफी नियंत्रित अवस्था में किया जाय। प्रयोग या शोध में विश्वसनीय उपकरणों या मापनियों का उपयोग हो। यदि शोध में विश्वसनीय, वैध एवं मानकीकृत परीक्षणों का उपयोग होता हैं तो निश्चित रूप से त्रुटि प्रसरण कम होगा।

3- सामान्यीकरण की क्षमता: एक अच्छे शोध अभिकल्प का यह भी उद्देश्य होता है कि इसके द्वारा किए गए अध्ययनों से जो प्राप्त परिणाम होते हैं उनका अधिक से अधिक जनसंख्या के ऊपर सामान्यीकरण किया जा सके। अतः स्पष्ट है कि एक अभिकल्प के द्वारा जितनी अधिक सामान्यीकरण की क्षमता उपलब्ध होती है वह अभिकल्प उतना ही अधिक उत्तम होगा।

4.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह जान चुके हैं कि शोध अभिकल्प या प्रारूप क्या है। इसकी क्या विशेषताएँ एवं उद्देश्य होते हैं। शोध अभिकल्प एक ऐसी योजना होती है जिससे यह पता चलता है कि शोध में कितने स्वतंत्र चर प्रयुक्त हुए हैं। उनके कितने स्तर हैं। बाह्य चरों के नियंत्रण हेतु किन तकनीकों का उपयोग किया गया है। आश्रित चरों का मापन किस रूप में किया गया है। शोध अभिकल्प शोधकर्ता को शोध के वास्तविक लक्ष्य तक पहुँचने में मदद करता है। शोध अभिकल्प का मुख्य उद्देश्य होता है - शोध प्रश्नों का सही उत्तर ढूँढ़ना, प्रसरण को नियंत्रित करना एवं सामान्यीकरण की क्षमता।

4.6 शब्दावली

- **शोध अभिकल्प:** शोध अभिकल्प नियोजित अन्वेषण की एक ऐसी योजना, संरचना एवं व्यूहरचना होती है जिसके आधार पर शोध के प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किए जाते हैं और प्रसरण पर नियंत्रण किया जाता है।
- **प्रसरण का नियंत्रण:** शोध में कई प्रकार के प्रसरण पाये जाते हैं जिनका शुद्ध एवं वैध परिणाम पाने के लिए नियंत्रण आवश्यक होता है। शोध प्रारूप एक नियंत्रण प्रक्रिया के रूप में कार्य करता है। इस नियंत्रण की प्रक्रिया में शोध प्रारूप तीन तरह के प्रसरणों के क्रमबद्धीकरण पर जो देता है - प्रयोगात्मक प्रसरण की उच्चतम सीमा प्राप्त करना, बहिरंग प्रसरण को नियंचित करना एवं त्रुटि प्रसरण को कम से कम करना।

4.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. शोध अभिकल्प का मुख्य उद्देश्य होता है शोध प्रश्नों का सही उत्तर ढूँढ़ना। सत्य/असत्य
2. शोध प्रारूप एक ------ के रूप में कार्य करता है।
3. बहिरंग प्रसरण के नियंत्रण से सभी --- प्रसरण नियंत्रित हो जाते हैं।

शोध प्रारूप का एक मुख्य उद्देश्य प्रयोगात्मक प्रसरण को ---- तक बढ़ाना होता है।

उत्तर : 1-सत्य 2- नियंत्रण प्रक्रिया 3-आवांछित 4- उच्चतम सीमा

4.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- कपिल, डा0 एच0 के0 (810): अनुसंधान विधियाँ- व्यवहारपरक विज्ञानों में, हर प्रसाद भार्गव पुस्तक प्रकाशक, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- त्रिपाठी, जयगोपाल (807): मनोविज्ञान एवं शिक्षा में शोध पद्धतियाँ, एच0 पी0 भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- त्रिपाठी, प्रो0 लाल बचन एवं अन्य (808): मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतियाँ, एच0 पी0 भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।

- सिंह, अरूण कुमार (809), मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल- बनारसी दास, पटना एवं वाराणसी।
- Goode, W.J. & Hatt, P. K. (781): Methods in Scoial Research
- Festinger and Katz : Research method in Behavioural Sciences.
- Kerlinger, F.N. (786): Foundations of Behavioural Research
- Mc Guin, F.J. (790) : Experimental Psychology

4.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. शोध अभिकल्प के अर्थ एवं उसकी विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।
2. शोध अभिकल्प शोध समस्याओं के उत्तर प्राप्त करने की एक वैज्ञानिक योजना है, स्पष्ट कीजिए।
3. शोध अभिकल्प के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।

इकाई 5. शोध अभिकल्प के प्रकार:- अन्तःसमूह, अन्तर समूह एवं कारकीय (Types of Research Design: Within Group, Between Group and Factorial)

इकाई संरचना

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 अभिकल्प के प्रकार
5.4 समूह अन्तर्गत अभिकल्प
5.5 समूहान्तर अभिकल्प
5.6 कारकीय अभिकल्प
5.7 सारांश
5.8 शब्दावली
5.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.11 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

विभिन्न विद्वानों ने शोध का वर्गीकरण अपने-अपने दृष्टिकोण के आधार पर किया है, जिन्हें दो प्रकारों में बाँटा गया है - प्रयोगात्मक शोध तथा अप्रयोगात्मक शोध। प्रयोगात्मक शोध में जिन प्रारूप एवं अभिकल्पों का प्रयोग होता है उन्हें प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प तथा अप्रयोगात्मक शोध में जिन शोध प्रारूपों का उपयोग होता है, उन्हें अप्रयोगात्मक शोध अभिकल्प कहते हैं । प्रायोगिक अभिकल्पों में कई अभिकल्प ऐसे हैं जिनका उपयोग अप्रयोगात्मक शोधों में भी किया जा सकता है। अतः समग्रता के दृष्टि से शोध अभिकल्प का प्रयोग करना उचित प्रतीत होता है।

इस इकाई में मुख्य रूप से तीन अनुसंधान अभिकल्पों - समूह अंतर्गत, समूहान्तर एवं कारकीय अभिकल्पों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगे:

- शोध अभिकल्प के कौन-कौन से प्रकार हैं।

- समूह अन्तर्गत अभिकल्प क्या है और कब इसका उपयोग करते हैं।
- समूहान्तर अभिकल्प क्या है और कब इसका उपयोग करते हैं।
- कारकी अभिकल्प का उपयोग कब किया जाता है।

5.3 अभिकल्प के प्रकार

विभिन्न विद्वानों ने अनुसंधान अभिकल्पों का वर्गीकरण अपने-अपने दृष्टिकोण के आधार पर किया है। इनमें से कुछ विद्वानों द्वारा दिए गए दृष्टिकोण को यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

मैग्यूगन ने निम्नांकित प्रायोगिक अभिकल्पों का वर्णन किया है -

1. **यादृच्छिकीकृत द्विसमूह अभिकल्प -** इसमें प्रतिदर्श का चयन समष्टि से यादृच्छिकीकृत ढंग से किया जाता है। प्रत्येक इकाई का समूहों में भी वर्गीकरण यादृच्छिक ढंग से ही किया जाता है। इसमें स्वतंत्र चर की शून्य मात्रा तथा एक निश्चित मात्रा होती है। किस समूह को शून्य मात्रा तथा किस समूह को एक निश्चित मात्रा देनी है इसका भी निर्धारण यादृच्छिक ढंग से किया जाता है। जिस समूह को स्वतंत्र चर की शून्य मात्रा दी जाती है उसे नियंत्रित समूह तथा जिस समूह को एक निश्चित मात्रा दी जाती है उसे प्रायोगिक समूह कहते हैं। दोनों समूहों के आश्रित चर का मापन कर अंतर की सार्थकता ज्ञात किया जाता है।
2. **समेलित द्विसमूह अभिकल्प -** इस अभिकल्प में प्रयोज्यों का वर्गीकरण दो समूहों में उनकी उन विशेषताओं के आधार पर किया जाता है जो आश्रित चर से प्रभावपूर्ण ढंग से सहसम्बन्धित होते हैं। इन समेलित समूहों का वर्गीकरण प्रयोगात्मक एवं नियंत्रित समूह के रूप में यादृच्छिक आधार पर ही किया जाता है। बाकी सभी प्रक्रियाएँ यादृच्छिक द्विसमूह अभिकल्प के आधार पर ही पूरी की जाती हैं।
3. **दो से अधिक यादृच्छिकीकृतसमूह अभिकल्प -** इसमें भी अपेक्षित संख्या में प्रयोज्यों का चुनाव समष्टि से यादृच्छिक ढंग से किया जाता है। प्रतिदर्श से समूहों में प्रयोज्यों का वितरण भी यादृच्छिक ढ़ंग से किया जाता है। इतना ही नहीं किस तीन या इससे अधिक समूह पर स्वतंत्र चर के मूल्यों का उपयोग किया जाय इसका भी निर्धारण यादृच्छिक ढ़ंग से ही किया जाता है। स्वतंत्र चर की न्यूनतम या शून्य मात्रा वाला समूह इसमें नियंत्रित समूह कहा जाता है। इसमें स्वतंत्र चर दो से अधिक संख्या में दिया जाता है। आश्रित चर के जो मूल्य प्राप्त होते हैं उनकी आपस में तुलना की जाती है।
4. **कारकीय अभिकल्प -** इसमें दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों को एक ही प्रयोग में अध्ययन हेतु प्रयुक्त करते हैं। इसमें दो या अधिक चरों के प्रभाव के साथ-साथ उनकी अंतः क्रियाओं का भी अध्ययन किया जाता है।
5. **प्रयोजानान्तर्गत या समूहान्तर्गत अभिकल्प-** इस अभिकल्प में एक ही समूह पर प्रयोग किया जाता है। इसमें प्रत्येक का प्रयोज्य को विभिन्न प्रायोगिक मूल्य या दशाएँ प्रस्तुत की जाती हैं और उन भिन्न-भिन्न

दशाओं में प्राप्त प्रदत्तों की आपस में तुलना किया जाता है। इसमें स्वतंत्र चर वही होते हैं जिसका सक्रिय रूप से नियोजन किया जा सकता है।

इसी से मिलते-जुलते अन्य वर्गीकरण के अनुसार शोध प्रारूपों का वर्गीकरण निम्नलिखित रूप से किया गया है।

1. समूहों के अंतर वाले अभिकल्प

(i) यादृच्छिकृत समूहों वाले अभिकल्प - इसके अंतर्गत मैग्यूगन द्वारा वर्णित यादृच्छिकीकृत दो समूह तथा दो से अधिक समूहों वाले अभिकल्प आते हैं।

(ii) समेलित समूह वाले अभिकल्प - इस प्रकार के अभिकल्प में दो या दो से अधिक समेलित समूहों का उपयोग किया जाता है।

(iii) यादृच्छिकीकृत खण्ड़ों वाले अभिकल्प - इस प्रकार के अभिकल्प में उपर्युक्त दोनों अभिकल्पों का समन्वय निहित है। इसमें प्रयोज्यों को कई खण्डों या समूहों में बाँट दिया जाता है।

(iv) लैटिन वर्ग वाले अभिकल्प - जब प्रायोगिक दशाएँ 4 से 9 के बीच होती है तब इस प्रकार के अभिकल्प का प्रयोग किया जाता है। इसमें प्रयोगात्मक दशाओं के वर्ग निर्मित किए जाते हैं। जिसमें प्रत्येक दशा, प्रत्येक वर्ग में एक बार उपस्थित होती है।

(v) कारकीय अभिकल्प - इसमें दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों के प्रभावों तथा अंतक्रियात्मक प्रभावों का अध्ययन किया जाता है।

2. **समूहान्तर्गत अभिकल्प -** इस प्रकार के अभिकल्प में प्रत्येक प्रयोज्य को प्रत्येक प्रायोगिक मूल्य दिया जाता है।इस अभिकल्प को एक समूह अभिकल्प या प्रयोजनान्तर्गत अभिकल्प भी कहते हैं।
3. **अर्द्ध प्रायोगिक अभिकल्प -** इसमें दो या दो से अधिक समूहों वाले तथा एकल समूह वाले अभिकल्पों के आधारभूत तत्वों का उपयोग किया जाता है।

जहोदा आदि ने प्रायोगिक अभिकल्पों को आश्रित चर का मापन स्वतंत्र चर के पूर्व या पश्चात कब किया गया है के आधार पर विभाजित किया है -

(1) केवल पश्चात प्रयोग - इसमें आश्रित चर का मापन स्वतंत्र चर के प्रयोग के बाद ही किया जाता है।

(2) पूर्व-पश्चात प्रयोग - इसमें आश्रित चर का मापन स्वतंत्र चर के उपयोग के पूर्व तथा पश्चात दोनों ही दशाओं में किया जाता है। इसमें कई प्रकार के अभिकल्पों का प्रयोग किया जाता है।

लिण्डक्विस्ट ने मूलभूत छः प्रायोगिक अभिकल्पों का वर्णन किया है -

(1) सरल यादृच्छिक अभिकल्प - इसमें यादृच्छिकीकृत रूप से समष्टि से चुने गए सभी प्रतिदर्श पर प्रत्येक प्रायोगिक मूल्य का उपयोग किया जाता है।

(2) समुपचार स्तर अभिकल्प - इसमें स्वतंत्र चर के विभिन्न मूल्यों का उपयोग समेलित समूहों पर किया जाता है ।

(3) समुचार प्रयोज्य अभिकल्प - इस प्रकार के अभिकल्पों में सभी समुपचारों को क्रमिक रूप से उन्हीं प्रयोज्यों पर प्रयुक्त किया जाता है।

(4) यादृच्छिक पुनरावृत्ति अभिकल्प - इसमें सरल यादृच्छिक प्रकार के प्रयोग को दोहराया जाता है। इसमें प्रत्येक पुनरावृत्ति हेतु एक समष्टि से प्रतिदर्श का चयन किया जाता है।

(5) कारकीय अभिकल्प - इसमें दो या अधिक स्वतंत्र चरों का एक साथ प्रयोग किया जाता है तथा उनके प्रभावों एवं अंतःक्रियाओं का साथ-साथ निरीक्षण किया जाता है।

(6) समुपचार-समूह अंतर्गत अभिकल्प - इस प्रकार के अभिकल्प में प्रत्येक समुपचार का उपयोग एक स्वतंत्र यादृच्छिक प्रतिदर्श पर किया जाता है। करलिंगर ने भी प्रायोगिक अभिकल्प के प्रकारों का वर्णन किया है। परन्तु जो विभिन्न विद्वानों द्वारा अनुसंधान अभिकल्पों का प्रतिपादन किया गया है सबका मूल्यांकन अनुसंधान समस्या के प्रश्नों के वैध, वस्तुनिष्ठ, परिशुद्ध उत्तरों के आधार पर सामान्यीकरण करना है।

5.4 समूह अन्तर्गत अभिकल्प

जब अधिक संख्या में प्रयोज्य उपलब्ध नहीं होते हैं तब ऐसी परिस्थिति में समूहान्तर अभिकल्पों का उपयोग करना कठिन होता है। इसके अलावा भी अनेक ऐसी समस्याएँ होती है जिनके अध्ययन में समूहान्तर अभिकल्पों का उपयोग करना उचित नहीं होता है। एक और कारण यह है कि समूहान्तर अभिकल्पों में विभिन्न समुपचारों के लिए अलग-अलग प्रयोज्य हों जो यादृच्छिक ढंग से चुने गए हों और समूहों में वर्गीकरण भी यादृच्छिक ढंग से किया गया हो। ऐसा इसलिए किया जाता है कि प्रासंगिक विशेषताओं में एक दूसरे के समान हो जाँच, परन्तु ऐसा वास्तव में हो नहीं पाता है। प्रायोगिक उपचारों में प्रयोज्य समूहों का समान होना आवश्यक होता है। ऐसा यदि सावधानी पूर्वक किया भी जाय तब भी अनेक कारणें से प्रयोज्य समूहों में समतुल्यता नहीं रहती है, जिसके कारण प्रदत्तों में त्रुटि-प्रसरण की मात्रा अधिक होती है। इसीलिए इन कठिनाइयों को देखते हुए समूह अंतर्गत अभिकल्प का उपयोग अध्ययनों में किया जाता है। इस प्रकार के अभिकल्पों में सभी समुपचारों में एक ही प्रयोज्य समूह का उपयोग किया जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि सभी प्रयोगिक उपचारों में एक ही प्रयोज्य समूह का उपयोग गरने से प्रतिदर्श चयन भी उच्चावच की सम्भावना नहीं होती है। प्रयोगिक अध्ययन में प्रारम्भ से अंत तक प्रयोज्य प्रासंगिक चरों में स्थिरता की सम्भावना बनी रहती है।

समूह अंतर्गत अभिकल्पों में मुख्य रूप से दो प्रारूपों का उपयोग व्यापक स्तर पर किया जाता है। इन अभिकल्पों में एक समूहः दो दशाएँ तथा एक समूह: बहुल दशाएँ प्रमुख हैं।

एक समूह: दो दशाएँ अभिकल्प - यह अभिकल्प दो यादृच्छिक समूह का एक विकल्प है। इसमें एक समूह का प्रत्येक प्रयोज्य का उपयोग स्वतंत्र चर के दो अलग स्तरों पर या दो प्रायोगिक दशाओं में किया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक प्रयोज्य से दो प्राप्तांक प्राप्त होते हैं। ये दोनों ही प्राप्तांक आपस में सहसम्बन्धित होते हैं। इस अभिकल्प का उपयोग स्वतंत्र चर और आश्रित चर के बीच प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के अस्तित्व का सत्यापन करने के लिए किया जाता है। इस अभिकल्प के अंतर्गत उद्दीपक, संदर्भ एवं संकल्प संबंधित चरों में से किसी एक को स्वतंत्र चर के रूप में लेकर प्रयोज्यों के किसी अनुक्रिया, व्यवहार या निष्पादन पर उसके प्रभाव का निर्धारिण किया जाता है। स्वतंत्र चर के मूल्यों को लेकर दो प्रायोगिक दशाएँ बनाई जाती हैं। पहली दशा में स्वतंत्र चर का मूल्य कम तथा दूसरी दशा में उससे अधिक मूल्य रखा जाता है। कभी कभी प्रथम दशा में स्वतंत्र चर को अनुपस्थित रखकर या शून्य मूल्य पर और दूसरी दशा में पर्याप्त मूल्य रखकर इस अभिकल्प का उपयोग करते हैं। इनको अ और या प्रयोगिक दशा प्रथम एवं द्वितीय नाम दिया दिया जाता है। इस अभिकल्प के अन्र्तगत पहले आश्रित चर का मापन दशा अ या ब में फिर पूर्व निर्धारित अंतराल के बाद दशा ब या अ में किया जाता है। इस अभिकल्प के अंतर्गत क्रम प्रभाव एवं संवहन प्रभाव को नियंत्रित करने के लिए समूह के आधे प्रयोज्यों से पहले अ दशा तथा बाद में ब दशा में प्राप्तांक प्राप्त किया जाता है। शेष आधे प्रयोज्यों को पहले ब दशा फिर अ दशा में रखकर प्राप्तांक प्राप्त किया जाता है। प्राप्त प्राप्तांकों को निम्नलिखित सारिणी के प्रारूप में लिख लेते हैं।

प्रयोग	अ1	ब2
1		
2		
3		
4		
5		

प्रयोज्य	ब1	अ2
6		
7		
8		
9		
10		

एक समूह: दो से अधिक दशाएँ अभिकल्प

इस अभिकल्प में एक ही समूह के प्रयोज्यों का उपयोग करके तीन या तीन से अधिक प्रायोगिक उपचारों के अंतर्गत आश्रित चर का मापन किया जाता है। इस अभिकल्प को दो से अधिक यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प के विकल्प के रूप में अपनाया जाता है। अंतर केवल इतना होता है कि इस अभिकल्प के अंतर्गत एक ही प्रयोज्य समूह तीन या तीन से अधिक प्रायोगिक उपचारों में भाग लेता है और इस प्रकार प्रत्येक प्रयोज्य की लक्षित अनुक्रिया का मापन पुनरावृत्त होता है। इसके कारण इस अभिकल्प में प्राप्त प्रदत्तों में त्रुटि प्रसरण की मात्रा कम होती है।

इस प्रकार के अभिकल्प में जो अध्ययन किए जाते हैं उसमें वातावरण जनित प्रासंगिक चरों के नियंत्रण पर विशेष ध्यान रखना आवश्यक होता है क्योंकि प्राणीगत प्रासंगिक चरों का नियंत्रण तो प्रत्येक दशा में उन्हीं प्रयोज्यों के प्रयोग के उपयोग के कारण स्वतः समाप्त हो जाता है। इस अभिकल्प में सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु या यादृच्छिकीकृत खण्ड अभिकल्प हेतु प्रयुक्त एक दिशा प्रसरण विश्लेषण का उपयोग किया जाता है। जब आश्रित चर का स्वरूप कोटिक्रमिक या नामित होता है या अंतराली प्रकार का होते हुए भी प्रसरण विश्लेषण में निहित मान्यताओं की पूर्ति नहीं होती है तो अप्राचलिक सांख्यिकी परीक्षणों का उपयोग किया जाता है।

मूल्यांकन -

समूह अंतर्गत अभिकल्प का उपयोग काफी बचतपूर्ण है, क्योंकि इसमें सभी प्रयोज्यों के सभी दशाओं में प्राप्तांक उपलब्ध हो जाते हैं। जब प्रयोगात्मक परिस्थिति ऐसी होती है जिसमें प्रयोज्यों के मापन हेतु पर्याप्त व्यवस्था करनी पड़ती है, जिसमें व्याख्या के लिए समय, श्रम तथा उपकरणों आदि की अधिक व्यवस्था करनी पड़ती है तो ऐसी स्थिति में यह अभिकल्प अधिक उपयुक्त होता है। क्योंकि एक ही समूह के प्रयोज्यों पर सभी दशाओं में अध्ययन करना सरल होता है। इस अभिकल्प का उपयोग त्रुटि-प्रसरण को कम करता है। क्योंकि इस अभिकल्प में उन्हीं प्रयोज्यों के उपयोग के कारण त्रुटि-प्रसरण से व्यक्तिगत भिन्नता के अंश को कम कर दिया जाता है।

प्रदत्तों का सांख्यिकीय विश्लेषण: सांख्यिकी विश्लेषण के सभी प्रयोज्यों के लब्धांकों को स्तम्भ अ तथा ब में व्यवस्थित कर इसका परीक्षण किया जाता है कि स्वतंत्र चर में परिवर्तन के कारण आश्रित चर पर प्रयोज्यों के प्राप्तांकों के मध्मानों में सार्थक अंतर प्राप्त हुआ है या नहीं। इसमें शून्य परिकल्पना यह होती है कि स्वतंत्र चर का सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है तथा दोनों दशाओं में (अ एवं ब) प्राप्त मध्यमानों का अंतर शून्य है। प्रायोगिक परिकल्पना यह होती है कि दोनों माध्यमानों का अंतर शून्य से सार्थक स्तर पर अधिक या शून्य से कम है।

$H_o : M_a - M_b = 0$ या $M_a = M_b$

$H_A : M_a - M_b \# 0$ या $M_a - M_b > 0$ या $M_a - M_b < 0$

इसमें टी-अनुपात की गणना कर देखा जाता है कि शून्य परिकल्पना को अस्वीकृत किया जा सकता है या नहीं। टी-अनुपात की गणना के लिए इस सूत्र का प्रयोग किया जा सकता है-

$$t = \frac{\sum D}{\sqrt{[N\sum D^2 - \{\sum D)^2] / N-1}}$$

D= प्रत्येक प्रयोज्य के प्राप्तांक युग्मों का अंतर

D^2= प्राप्तांक युग्म के अंतर का वर्ग

N= प्रयोज्यों की संख्या

यदि मापे जाने वाले आश्रित चर का वितरण सामान्य नहीं है तथा अध्ययन गत समूह बहुत छोटा है तो फिर सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु अप्राचलिक सांख्यिकीय विधियों का उपयोग किया जाता है। इस स्थिति में चिह्न परीक्षण या बिल काक्सन के कोटि परीक्षण का उपयोग करना उचित होता है।

अनेक विशेषताओं के बावजूद इस अभिकल्प की कुछ परिसीमाएँ भी हैं: एक प्रायोगिक दशा के उपयोग का प्रभाव दूसरी प्रायोगिक दशा के आश्रित चर के मापन पर पड़ता है। इस अभिकल्प में प्रयोग समूह जब बहुत छोटा होता है तब प्रतिनिधित्वपूर्णता की कमी रहती है, इसके कारण परिणामों के सामान्यीकृत करने की सापेक्षिक रूप से कम क्षमता रहती है। इसमें एक दशा के उपयोग का अनुभव दूसरे समुपचारों के प्रभावों को त्रुटिपूर्ण बनाता है। इस अभिकल्प में वातावरणजनित प्रासंगिक चरों का प्रभाव सापेक्षिक रूप से अधिक रहता है।

5.5 समूहान्तर अभिकल्प

समूहान्तर अभिकल्प यादृच्छिक समूह अभिकल्प का ही रूप है। इस अभिकल्प को द्विसमूह या दो स्वतंत्र समूह अभिकल्प भी कहते हैं। इसमें प्रत्येक प्रायोगिक उपचार के लिए एक अलग प्रयोज्य समूह का उपयोग किया जता है। दो यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प में दो प्रयोज्य समूहों की जरूरत पड़ती है। दो से अधिक यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प में कम से कम तीन या चार या पाँच या इससे अधिक प्रयोज्य समूहों का उपयोग किया जाता है। इन अभिकल्पों का उपयोग करने के पूर्व अध्ययन की समस्या के अनुसार लक्षित समष्टि से वांछित संख्या में यादृच्छिक रीति से प्रयोज्यों को चयन कर पुनः यादृच्छिक ढ़ंग से समूहों में विभक्त कर दिया जाता है। प्रत्येक उप समूह में अध्ययन की जाने वाली अनुक्रिया या उसके व्यवहार का मापन पूर्व निर्धारित प्रायोगिक उपचार करने के बाद किया जाता है। प्रायोगिक उपचारों में भिन्नता के आधार पर इसका परीक्षण किया जाता है कि मापी गई अनुक्रियाओं में सार्थक भिन्नता उत्पन्न हुई या नहीं।

दो यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प-

इस अभिकल्प में शोध के इस आधारभूत प्रश्न का उत्तर देने के लिए किया जाता है कि कोई निश्चित पूर्ववर्ती घटना या दशा पश्च घटना या दशा को उत्पन्न करती है या नहीं। इसमें पूर्ववर्ती घटना या दशा, स्वतंत्र चर एवं परिवर्ती घटना या दशा को आश्रित चर कहा जाता है। इसमें स्वतंत्र चर के दो मूल्यों का उपयोग किया जाता है। प्रत्येक मूल्य के उपयोग को प्रायोगिक उपचार कहा जाता है। सामान्यतः स्वतंत्र चर के दो मूल्यों में एक का मूल्य या स्तर शून्य तथा दूसरे की एक निश्चित मात्रा होती है। जिस समूह पर शून्य मूल्य के स्वतंत्र चर को दिया जाता है उसे नियंत्रित समूह एवं जिस समूह पर स्वतंत्र चर का एक निश्चित मूल्य दिया जाता है उसे प्रायोगिक समूह कहते हैं। कभी-कभी एक समूह के लिए स्वतंत्र चर की एक छोटी मात्रा तथा दूसरे समूह के लिए उसकी बड़ी मात्रा रखी जाती है। ऐसी दशा में प्रत्येक प्रयोज्य समूह एक दूसरे के लिए नियंत्रित समूह का कार्य करता है। वैसे इन्हें प्रायोगिक समूह प्रथम एवं प्रायोगिक समूह द्वितीय कहा जाता है। अक्सर ऐसा करते हैं कि दोनों समूहों में प्रयोज्यों की समान

संख्या रहें। वैसे दोनों समूहों में थोड़ी कम एवं अधिक संख्या भी रह सकती है। स्वतंत्र चर के विभिन्न मूल्यों का परीक्षण प्रयोग स्थिति से अन्य प्रासंगिक चरों को नियंत्रित या स्थिर रखकर प्रेक्षण या मापन किया जाता है। इस अभिकल्प से प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण उपयुक्त सांख्यिकी के माध्यम से किया जाता है।

इस अभिकल्प में प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण के लिए उपयुक्त सांख्यिकी विधियों के चयन के लिए तीन मुख्य आधार होते हैं। प्रथम यह कि आश्रित चर का मापन अन्तराली पर कोटिक्रम या नामिक स्तर पर किया गया है। दूसरा यह है कि प्रत्येक समूह में लिए जाने वाले प्रयोज्यों की संख्या छोटी है या बड़ी। क्योंकि छोटी संख्या होने पर एक प्रकार की सांख्यिकी तथा बड़ी होने पर दूसरे प्रकार की सांख्यिकी विधियों का उपयोग किया जाता है। तीसरा यह है कि स्वतंत्र चर के प्रभावशाली होने पर दोनों समूहों के प्रदत्तों में सार्थक भिन्नता अवश्य होगी जिसके आधार पर प्रायोगिक परिकल्पना की पुष्टि हो जाती है। किन्तु सांख्यिकी विशेष का उपयोग करते समय शोधकर्ता शून्यय परिकल्पना को आधार बनाकर विश्लेषण की प्रक्रियां को आगे बढ़ाता है।

इस अभिकल्प में दोनों प्रयोज्य समूहों को आश्रित चर का लब्धांक अलग-अलग प्राप्त होता है। इन लब्धांकों के मध्यमानों की गणना कर ली जाती है। जब दोनों मध्यमानों के मूल्यों में अंतर पाया जाता है तब इसकी सार्थकता की जाँच की जाती है। इसमें विशेष रूप से दोनों मध्यमानों के अंतर को ही सार्थकता की जाँच के लिए विशेष रूप से टी-अनुपात की गणना की जाती है। जिसके लिए निम्नलिखित सूत्र का उपयोग किया जाता है।

$$t\text{ - अनुपात} = \frac{m_1 - m_2}{\sqrt{\left(\frac{ss_1 + ss_2}{(n_1 - 1) + (n_2 - 1)}\right)\left(\frac{1}{n_1} + \frac{1}{n_2}\right)}}$$

$m_1 - m_2$ = दो प्रयोज्य समूहों के मध्यमानों का अंतर

ss_1 = प्रथम समूह के मध्यमान से लब्धांकों के विचलन वर्गों का योग

ss_2 = द्वितीय समूह के मध्यमान से लब्धांकों के विचलन वर्गों का योग

n_1 तथा n_2 = प्रथम समूह एवं द्वितीय समूह में प्रयोज्यों की संख्या

$$ss = \sum x^2 - \frac{(\sum x)^2}{n}$$

$\sum x^2$ = समूह के लब्धांक वर्गों का योग

$(\sum x)^2$ = समूह के लब्धांक के योग का वर्ग

टी-अनुपात की गणना के बाद उसकी सार्थकता की जाँच के लिए स्वायत्तता अंशों का निर्धारण किया जाता है। स्वायत्तता अंश (df) = $(n_1-1) + (n_2-1)$। पुनः सारिणी से प्राप्त स्वायत्तता अंश पर टी-मूल्य को .05 या .01 पर

देखते हैं कि यह मूल्य जो प्राप्त हुआ है वह अधिक है या कम। अधिक होने पर वह टी-मूल्य सार्थक होगा और कम होने पर प्राप्त टी-मूल्य सार्थक नहीं होगा। इसी के आधार पर प्रयोगात्मक या शून्य परिकल्पना को स्वीकृत या अस्वीकृत करते हैं।

मूल्यांकन -

इस अभिकल्प में किए गए अध्ययन से यह जानकारी प्राप्त होती है कि कोई स्वतंत्र चर किसी आश्रित चर को प्रभावित करता है या नहीं। परन्तु इस अभिकल्प के माध्यम से किसी स्वतंत्र चर और आश्रित चर विशेष के बीच प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के स्वरूप का स्पष्ट निरूपण नहीं किया जा सकता है। अनेक स्थितियों में दो यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प में किए गए प्रायोगिक अध्ययनों से चरों के प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के बारे में भ्रामक प्रदत्त भी प्राप्त होते हैं। इसमें स्वतंत्र चर के मात्र एक मूल्य या अधिक से अधिक दो मूल्यों का ही प्रयोग किया जा सकता है। प्रयोज्य समूहों की संख्या के कम होने पर दोनों में प्रारम्भिक समतुल्यता भी संदिग्ध हो जाती है।

दो से अधिक यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प

इस अभिकल्प के अंतर्गत यादृच्छिक रीति से गठित तीन या चार या इससे अधिक समूहों का उपयोग होता है। इसके अंतर्गत लक्षित समष्टि से यथेष्ट संख्या में प्रयोज्यों का चयन करके यादृच्छिक ढंग से 3,4,5 या 7 समूहों में बाँट लिया जाता है। प्रथम समूह को स्वतंत्र चर का शून्य मूल्य, दूसरे को अल्प मात्रा में और इसी प्रकार बढ़ाते हुए अंतिम समूह को अधिकतम मूल्य को उपचार हेतु दिया जाता है। उपचार के बाद प्रत्येक समूह में आश्रित चर का मापन किया जाता है। अनेक दृष्टिकोणों से यह अभिकल्प महत्वपूर्ण है। इस अभिकल्प में एक ही साथ स्वतंत्र चर के कई मूल्यों के सापेक्षिक प्रभावों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। दो से अधिक समूहों वाले अभिकल्प के माध्यम से स्वतंत्र चर और आश्रित चर के प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के सही स्वरूप का निरूपण सम्भव होता है। यह अभिकल्प इस दृष्टिकोण से भी अधिक उपयोगी है कि स्वतंत्र चर के दो से अधिक मूल्यों को लिया जा सकता है और देखा जा सकता है कि स्वतंत्र चर में कितनी वृद्धि पर किस तरह का परिवर्तन आश्रित चर पर होता है।

दो से अधिक यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प के अंतर्गत किए गए प्रायोगिक अध्ययन से प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर स्वतंत्र चर एवं आश्रित चर के बीच प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के विषय में अनेक प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किए जाते हैं। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने के लिए अलग-अलग प्रकार की सांख्यिकीय विधियों का उपयोग किया जाता है। प्रमुख रूप से एक दिश प्रसरण विश्लेषण, कोटि परीक्षण, चिह्न परीक्षण आदि सांख्यिकीय विधियों का उपयोग इस अभिकल्प में प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु किया जाता है। जब प्राप्त प्रदत्तों के वितरण प्रकृत होते हैं तो एकदिश प्रसरण विश्लेषण ही किया जाता है।

5.6 कारकीय अभिकल्प

कारकीय अभिकल्प शोध प्रारूपों का अति विकसित एवं महत्वपूर्ण स्वरूप है, जिसमें एक से अधिक स्वतंत्र चरों के प्रभावों तथा अंतः क्रियाओं का एक ही प्रयोग में अध्ययन होता है। अर्थात् जब एक से अधिक स्वतंत्र चरों प्र्रभावों तथा उनकी आपसी अंतःक्रियाओं का एक ही प्रयोग या अनुसंधान में अध्ययन करना है तो हमें कारकीय अभिकल्प का उपयोग करना पड़ता है।

मैग्यूगन के अनुसार - "एक ही प्रयोग में दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों के अध्ययन के लिए एक संभव अभिकल्प कारकीय अभिकल्प है। एक पूर्ण कारकीय अभिकल्प वह है जिसमें प्रत्येक स्वतंत्र चर के चुने गए मूल्यों की सभी संभावित संयुक्तियों का उपयोग किया जाता है।"

करलिंगर ने कारकीय अभिकल्प को स्पष्ट करते हुए कहा है कि - "कारकीय अभिकल्प एक अनुसंधना संरचना है, जिसमें दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों को साथ-साथ जोड़ा जाता है जिससे आश्रित चर पर उनके द्वारा डाले गए स्वतंत्र तथा पारस्परिक अंतःक्रियाओं के प्रभावों को अध्ययन किया जा सके।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि -

1. कारकीय अभिकल्प में एक साथ दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों का अध्ययन किया जाता है।
2. प्रत्येक स्वतंत्र चरों के बीच पारस्परिक अंतःक्रिया के कारण आश्रित चर पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया जाता है।

कारकीय अभिकल्प में कारक से तात्पर्य स्वतंत्र चर से होता है। स्वतंत्र चर के संचालन के आधार पर दो प्रकार के स्वतंत्र चर (कारक) होते हैं। (i) वे कारक जिन्हें सक्रिय रूप से संचालित किया जा सकता है। (ii) वे कारक जिनका सक्रिय संचालन न होकर चयन किया जाता है। इन्हें चयन, वर्गीकरण या गुण कारक का नाम दिया जाता है। कारकीय अभिकल्पों में इन दोनों ही प्रकार के कारकों का उपयोग होता है। कारकीय अभिकल्प की प्रक्रिया पर प्रयुक्त कारकों की सक्रिय तथा चयन होने का प्रभाव पड़ता है।

कारकीय अभिकल्प में कम से कम दो कारक अवश्य होते हैं। वैसे इसमें अनेक कारकों को लेकर अध्ययन किया जा सकता है। कारकों की संख्या बढ़ा देने से अतःक्रिया प्रभावों की संख्या बहुत बढ़ जाती है। दो कारकों के होने पर मात्र एक अंतःक्रिया पंभाव होता है, जिसे द्विविध अंतःक्रिया कहा जाता है। तीन कारकों के होने पर त्रिविधि अ X ब, अ X स तथा ब X स और एक त्रिविध अंतःक्रिया प्रभाव अ X ब X स प्राप्त होते हैं।

इस अभिकल्प में प्रत्येक कारक के कम से कम दो मूल्य स्तर अवश्य होते हैं। कभी कभी एक कारक के दा या तीन तथा दूसरे कारक के तीन या चार या पाँच मूल्य या स्तर हो सकते हैं। कारकों की संख्या अध्ययनों के उद्देश्यों पर निर्भर करती है। अक्सर अध्ययनों में दा या तीन कारकों को लेकर प्रत्येक कारक के दो या तीन स्तर लिए जाते हैं।

कारकीय अभिकल्पों में प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर प्रत्येक काकक के अलग-अलग प्रभाव के साथ-साथ उनके संयुक्त या उनकी अंतःक्रिया से उत्पन्न प्रभाव की जानकारी प्राप्त होती है। अंतःक्रिया का तात्पर्य है एक कारक के किसी स्तर के प्रभाव पर दूसरे कारक के प्रभाव का निर्भर होना। कारकों के बीच सार्थक अंतःक्रिया के कई रूप हो सकते हैं।

कारकीय अभिकल्प में उपचारों की सभी सम्भव संयुक्तियों का योग कारकों के मूल्यों के गुणनफल के बराबर होता हैं। जब कारक दो हैं और प्रत्येक के मूल्य दो हैं तब चार सम्भव उपचार संयुक्तियाँ होती हैं। इसी प्रकार दो कारकों में एक के दो और दूसरे के तीन मूल्य होंगे तब 6 संयुक्तियाँ होंगी। जब दोनों के ही तीन-तीन मूल्य होंगे तो कुल 9 संयुक्तियाँ होंगी।

सामान्यतः कारकीय अभिकल्प में प्रत्येक संयुक्ति के लिए एक अलग उपसमूह का उपयोग किया जाता है। कारकीय अभिकल्पों में लिए जाने वाले उपसमूह में प्रयोज्यों की संख्या समान होती है।

कारकीय अभिकल्पों के प्रारूप-

कारकीय अभिकल्पों के प्रारूप कारकों की संख्या और प्रत्येक कारक के स्तरों की संख्या पर निर्भर करते हैं। कारकीय अभिकल्प में सामान्यतः दो या तीन कारकों को शामिल किया जाता है

1. द्विकारकीय अभिकल्प- कारकीय अभिकल्प का सरलतम रूप 2 X 2 कारकीय अभिकल्प है। इसमें दो स्वतंत्र चर तथा इनके दो-दो मूल्य या समुपचार निहित होते हैं।
2. द्वि X त्रि कारकीय अभिकल्प- इसके अंतर्गत किसी भी कारके के दो और दूसरे के तीन स्तर लिए जाते हैं। इसमें प्रयोग उपचार की 6 संयुक्तियाँ बनती हैं। प्रयोज्यों के 6 यादृच्छिकीकृत समूहों की जरूरत पड़ती है।
3. के X एल कारकीय अभिकल्प- द्विकारकीय अभिकल्प में किसी भी एक कारक के आवश्यकतानुसार 2, 3, 4, 5 स्तर और दूसरे कारक के 3,4 या 5 स्तर लिए जा सकते हैं।
4. त्रिकारकीय अभिकल्प- इसमें कभी-कभी तीन कारकों का उपयोग किया जाता है। इसके लिए एक कारक के 2, 3 या 4 स्तर तथा दूसरे कारक 2 या 3 स्तर और तीसरे कारक के भी 2 या 3 स्तर लिए जाते हैं। इनसे 2 X 2 X 2, 2 X 2 X 3, 2 X 3 X 3 X 3 और 2 X 3 X 4 कारकीय अभिकल्पों की संरचना होती है। इसके आधार पर जो प्रदत्त प्राप्त होंगे उनके आधार पर तीन कारकों के अलग-अलग प्रभावों, तीन द्विविध अंतः क्रिया तथा एक त्रिविध अंतक्रिया प्रभावों की जानकारी प्राप्त होगी।

कारकीय अभिकल्पों में किए गए अध्ययनों से जो प्रदत्त प्राप्त होते हैं उनसे परिशुद्ध परिणाम ज्ञत करने के लिए प्रसरण विश्लेषण किया जाता हैं। कारकीय अभिकल्पों में जितने कारक होते हैं प्रसरण विश्लेषण की उतनी दिशाएँ होती हैं। द्विकारकीय अभिकल्पों में प्रापत प्रदत्तों का प्रसरण विश्लेषण द्विदिश, त्रिकारकीय अभिकल्पों में त्रिदिश तथा चतुर्कारकीय अभिकल्प में चतुर्दिश प्रसरण विश्लेषण किया जाता है।

5.7 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात यह जान चुके हैं कि शोध अभिकल्प के प्रमुख प्रकार कौन-कौन से हैं और कब और किन दशाओं में किस अभिकल्प का उपयोग अनुसंधानकर्ता अपने अनुसंधानों में करता है। विशेषकर इस इकाई में समूह अंतर्गत अभिकल्प, समूहान्तर अभिकल्प एवं कारकीय अभिकल्प का विस्तृत वर्णन किया गया है। समूह अंतर्गत या प्रयोज्यान्तर्गत अभिकल्प में सभी प्रकार के प्रायोगिक उपचारों में एक ही प्रयोज्य समूह का उपयोग किया जाता है। इस अभिकल्प के अंतर्गत व्यापक स्तर पर दो प्रारूपों का अध्ययन हेतु उपयोग होता है - एक समूहः दो दशाएं अभिकल्प तथा एक समूहः बहु दशाएँ अभिकल्प। समूहान्तर अभिकल्प यादृच्छिक समूह अभिकल्प का ही रूप होता है। इस अभिकल्प को द्विसमूह या दो स्वतंत्र समूह अभिकल्प भी कहते हैं। इसमें प्रत्येक प्रायोगिक उपचार के लिए अलग-अलग प्रयोज्य समूह का उपयोग होता है। कारकीय अभिकल्प में एक से अधिक स्वतंत्र चरों के प्रभावों तथा अंतः क्रियाओं का एक ही प्रयोग में अध्ययन किया जाता है।

5.8 शब्दावली

- **समूह अंतर्गत अभिकल्प:** इस प्रकार के अभिकल्प में सभी प्रकार के प्रयोगिक उपचारों में एक ही प्रयोज्य समूह का उपयोग किया जाता है।
- **समूह अंतर अभिकल्प:** इस अभिकल्प को यादृच्छिकीकृत अभिकल्प भी कहा जाता है। इनके अंतर्गत प्रत्येक प्रायोगिक उपचार के लिए यादृच्छिक ढ़ंग से गठित पृथक प्रयोज्य समूह का मापन किया जाता है।
- **कारकीय अभिकल्प:** जब यादृच्छिकीकृत समूहों में किसी आश्रित चर का मापन दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों का प्रहस्तन कर किया जाता है और उनका स्वतंत्र चरों के भिन्नताकारी तथा संयुक्त प्रभावों का निर्धारण किया जाता है तो उसको कारकीय अभिकल्प कहा जाता है। दूसरे शब्दों में - जब एक ही अध्ययन में एक साथ दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों का प्रहस्तन करनेकी व्यवस्था हो तो उसे कारकीय अभिकल्प कहा जाता है।

5.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1) मैग्यूगन ने कितने प्रायोगिक अभिकल्पों का वर्णन किया है।

1-चार 2-पाँच 3-तीन 4-दो

2) लिण्डक्विस्ट ने मूलभूत ------ प्रायोगिक अभिकल्पों का वर्णन किया है।

3) समूह अंतर्गत अभिकल्प में सभी समुपचारों में -- समूह का अध्ययन हेतु उपयोग किया जाता है।

4) समूहान्तर अभिकल्पों में ------- प्रयोज्य समूह होते हैं।

5) कारकीय अभिकल्प में कारक से तात्पर्य ---- से होता है।

6) कारकीय अभिकल्पों में जितने कारक होते हैं ---- की उतनी दिशाएँ होती हैं।

उत्तर: 1. पाँच 2. छः 3.एक ही प्रयोज्य 4. अलग-अलग 5. स्वतंत्र चर 6. प्रसरण विश्लेषण

5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- कपिल, डा0 एच0 के0 (810): अनुसंधान विधियाँ- व्यवहारपरक विज्ञानों में, हर प्रसाद भार्गव पुस्तक प्रकाशक, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- त्रिपाठी, जयगोपाल (807): मनोविज्ञान एवं शिक्षा में शोध पद्धतियाँ, एच0 पी0 भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- त्रिपाठी, प्रो0 लाल बचन एवं अन्य (808): मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतियाँ, एच0 पी0 भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- सिंह, अरूण कुमार (809), मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल- बनारसी दास पटना एवं वाराणसी।
- Goode, W.J. & Hatt, P. K. (781): Methods in Scoial Research
- Festinger and Katz : Research method in Behavioural Sciences.
- Kerlinger, F. N. (786): Foundations of Behavioural Research
- Mc Guin, F.J. (790) : Experimental Psychology

5.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. मैग्यूगन द्वारा प्रस्तुत प्रायोगिक अभिकल्पों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. समूह अंतर्गत अभिकल्प का विस्तृत वर्णन करते हुए उसका मूल्यांकन कीजिए।
3. समूह अंतर अभिकल्प का विस्तृत वर्णन करते हुए उसका मूल्यांकन कीजिए।
4. कारकीय अभिकल्प क्या है, इसके विभिन्न प्रारूपों का वर्णन कीजिए।

\

इकाई 6. प्रदत्त संग्रहण की प्रविधियाँ- अवलोकन, प्रश्नावली, साक्षात्कार, श्रेणी मूल्यांकन, चिह्नांकन-सूची, समाजमिति (Technique of Data Collection: Observation, Questionnaires, Interview, Rating Scales, Check List, Sociometry)

इकाई संरचना

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 प्रदत्त संकलन की प्रविधियाँ

6.4 निरीक्षण विधि

6.5 प्रश्नावली विधि

6.6 साक्षात्कार

6.7 निर्धारण मापनियाँ

6.8 चिह्नांकन सूची (चेक लिस्ट)

6.9 समाजमिति

6.10 सारांश

6.11 शब्दावली

6.12 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

6.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

6.2 निबंधात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

अनुसंधान में प्रदत्त संकलन की विधियों का भी अत्यधिक महत्व है। समस्या के स्वरूप के आधार पर अनुसंधानकर्ता प्रदत्त संकलन हेतु विधियों का निर्धारण करता है। ऐसी अनेक अनुसंधान विधियाँ है जिनका प्रदत्त संकलन हेतु अनुसंधानकर्ता उपयोग करता है। ये प्रमुख विधियाँ हैं-प्रयोग विधि, निरीक्षण विधि, प्रश्नावली विधि, साक्षात्कार विधि रेटिंग मापनियाँ, चेकलिस्ट, समाजमिति आदि।

इस इकाई में प्रमुख रूप से निरीक्षण विधि, प्रश्नावली विधि, साक्षात्कार विधि, निर्धारण मापनियाँ, चिाह्नांकन सूची समाजमिति विधि का वर्णन किया जा रहा है। निरीक्षण विधि वैज्ञानिक अनुसंधान का एक प्रमुख साधन है। वैज्ञानिक विधि के रूप में निरीक्षण का कार्य पर्याप्त सावधानी तथा सतर्कता की अपेक्षा रखता है।

निरीक्षण विधि ही एक ऐसी विधि है जिसमें व्यवहार जैसा घटित हो रहा है वैसा ही अंकित किया जा सकता है। साक्षात्कार विधि में साक्षात्कर्ता एवं उत्तर दाता आमने-सामने बैठते हैं। इसमें साक्षात्कारकर्ता उत्तरदाता से मौखिक रूप से प्रश्न करता है और उत्तरदाता मौखिक रूप से उसका उत्तर देता है। प्रश्नावली विधि में उत्तर दाता के समक्ष सामान्यतया लिखित प्रश्नों का प्रपत्र या परीक्षण दिया जाता है, जिसका उत्तर वह स्वयं ही भरता है। अनुसंधानों में परीक्षणों एवं मापनियों का उपयोग वस्तुनिष्ठ मापन साधनों के रूप में किया जाता है। मापनी संकेतों या संख्याओं का एक सेट है। किसी उद्दीपन को मात्रात्मक रूप प्रदान करने हेतु चार प्रकार के मापको-नामिक, क्रम सूचक, अंतराली एवं अनुपातिक का उपयोग करते हैं। निर्धारण मापनियों का भी प्रयोग अनुसंधान में किया जाता है। निर्धारण मापनी किसी चर की मात्रा, तीव्रता एवं आकृति को निश्चित करती है। ये निर्धारण मापनियाँ भी पाँच प्रकार की होती हैं। अनुसंधान में प्रदत्त संकलन हेतु चेक लिस्ट (चिह्नांकनसूची) का भी उपयोग किया जाता है। जब छोटे समूह होते हैं एवं समूह की संरचना, उसके मनोबल या फिर समूह के सदस्यों के बीच पसंदगी-नापसंदगी, अंतः वैयक्तिक आकर्षण एवं विकर्षण का मापन करना होता है तब समाजमिति विधि का अनुसंधानकर्ता उपयोग करता है।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह जान सकेंगे कि -

- निरीक्षण विधि क्या है ? इसके गुण-दोष क्या हैं?
- प्रश्नावली विधि का किस प्रकार से अनुसंधान में उपयोग किया जाता है।
- साक्षात्कार की क्या तकनीक होती है ?
- निर्धारण मापनियों का किस प्रकार से अनुसंधान में उपयोग करते हैं।
- चेक लिस्ट के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी।
- समाजमिति विधि क्या है?

6.3 प्रदत्त संकलन की प्रविधियाँ

व्यवहारपरक विज्ञानों में शोध समस्या के वैज्ञानिक एवं उत्तम उत्तर प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक होता है कि प्रदत्त संकलन हेतु उपयुक्त विधि का उपयोग किया जाय। मनोविज्ञान, शिक्षा तथा समाजशास्त्र में शोध समस्याओं का वैज्ञानिक रूप से अध्ययन करने के लिए तथा उससे सम्बन्धित महत्वपूर्ण तथ्य एवं प्रदत्त संकलन हेतु कुछ खास-खास विधियों का प्रतिपादन किया गया है। ऐसी विधियों में कुछ प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित है -

1- प्रयोग विधि

2- निरीक्षण विधि

3- प्रश्नावली एवं अनुसूची

4- निर्धारण मापनी

5- साक्षात्कार

6- केस अध्ययन विधि

7- समाजमितीय विधि

8- संपेक्षी विधि

9- अर्थ विभेदक मापनी

10- क्यूसार्ट विधि

11- अभिवृत्ति मापन प्रविधियाँ

12- चिह्नांकन सूची (चेक लिस्ट)

इसमें से कुछ प्रमुख विधियों का विस्तारपूर्वक वर्णन आगे किया जा रहा है।

6.4 निरीक्षण विधि

व्यवहारपरक विज्ञानों में किसी भी शोध समस्या के अध्ययन एवं प्रदत्त संग्रह की यह एक पुरातन तथा आधुनिक विधि है। इसे प्रेक्षण विधि भी कहते हैं। इस विधि में शोधकर्ता व्यक्ति के व्यवहारों तथा घटनाओं के दृश्य तथा श्रव्य पक्षों को क्रमबद्ध ढंग से देख-सुन कर उसका रिकार्ड तैयार करता है। इसमें तथ्य संग्रह करते समय शोधकर्त्ता यह निरीक्षण करता है कि लोग क्या कर रहें थे और क्या कर रहें हैं। वह जो कुछ देखता एवं सुनता है उसका रिकार्ड कर लेता है। फिर बाद में सांख्यिकीय विश्लेषण कर, एक निश्चत निष्कर्ष पर पहुँचता है। विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने अपने-अपने ढंग से प्रेक्षण विधि को परिभाषित करने का प्रयास किया है। जहोदा और उनके साथियों के अनुसार - 'निरीक्षण हमारे दिन प्रतिदिन के जीवन की एक व्यापक क्रिया ही नहीं है, वरन् यह वैज्ञानिक अनुसंधान का एक प्रमुख साधन भी है।" गुडे एवं हाट के अनुसार - "विज्ञान निरीक्षण से प्रारम्भ होता है और अपने सिद्धान्तों की अंतिम पुष्टि के लिए पुनः निरीक्षण पर लौटना पड़ता है।" वैसे निरीक्षण या प्रेक्षण विधि को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है - "प्रेक्षण प्रदत्त या ऑंकड़े संग्रहण के रूप में एक ऐसी प्रविधि को कहा जाता है जिसके द्वारा विशिष्ट प्रकार की परिस्थितियों में प्राणियों से सम्बन्धित उन व्यवहारों का चयन, उत्तेजन, अभिलेखन एवं कूट संकेतन किया जाता है। जो शोध के उद्देश्यों से संगत होते हैं।"

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कह सकते हैं कि निरीक्षण या प्रेक्षण एक ऐसी वैज्ञानिक विधि है जिसमें निरीक्षणकर्त्ता प्राणियों के व्यवहारों का निरीक्षण एक विशेष परिस्थिति में करके उनसे प्राप्त ऑंकड़ों का विश्लेषण कर एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचता है।"

निरीक्षण विधि की मुख्य विशेषताएँ -

1- इस विधि में व्यवहार का ज्यों का त्यों अध्ययन किया जाता है।

2- इस विधि द्वारा अन्य विधियों के सापेक्ष अधिक वैध सामग्री का संकलन किया जाता है।
3- जब कभी व्यवहार का यथार्थ अंकन आवश्यक होता है तब निरीक्षण विधि में प्रयोग आवश्यक होता है।
4- जब व्यवहारों का वास्तविक स्थिति में निरीक्षण किया जाता है तब अति महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।
5- जो उत्त्रदाता शाब्दिक रूप से उत्तर नहीं दे सकते हैं ऐसी स्थिति में निरीक्षण विधि ही प्रदत्त संकलन हेतु उपयुक्त होती है।
6- इस विधि का उपयोग एक प्रारम्भिक, पूरक, सहायक तथा मुख्य पद्धति के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

निरीक्षण विधि की परिसीमाएँ

1- घटना के दौरान ही उसका निरीक्षण किया जाता है। अतः जिन परिस्थितयों का हम अध्ययन करना चाहते हैं उनके घटित होने तक प्रतीक्षा करना पड़ता है।
2- घटना के घटित होने के साथ-साथ उस समय उस स्थान पर निरीक्षणकर्त्ता की उपस्थिति भी आवश्यक है।
3- घटनाओं के समय के विस्तार की दृष्टि से भी निरीक्षण पद्धति का प्रयोग सीमित है।
4- व्यवहार के अनेक ऐसे पक्ष हैं जिनका लोग विवरण देने को तो राजी हो सकते हैं लेकिन उनके निरीक्षण की अनुमति नहीं दे सकते।

निरीक्षण के प्रकार -

निरीक्षण में मुख्य रूप से तीन तरह की समस्याएँ आती हैं जिनके आधार पर निरीक्षण विधि के प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं –

1. निरीक्षण में कितना नियंत्रण हो तथा कितनी स्वच्छन्दता रखी जाय इसके आधार पर निरीक्षण विधि के मुख्य दो प्रकार होते हैं --

(क) **नियंत्रित निरीक्षण** - इस तरह के निरीक्षण में निरीक्षणकर्ता एक निश्चित एवं स्पष्ट नियम के अनुसार प्रेक्षण या निरीक्षण करता है। इस तरह के निरीक्षण में स्थिति यदा-कदा स्वाभाविक भी हो सकती है, परन्तु अक्सर स्थिति काफी नियंत्रित होती है। जिससे अवांछनी तत्वों का प्रभाव न पड़ सके। इसमें निरीक्षणकर्ता पूर्व योजना के अनुसारप्रेक्षण करता है। नियंत्रित प्रेक्षण का मुख्य उद्देश्य एक वस्तुनिष्ठ, विश्वसनीय एवं वैध ऑंकड़ों को संग्रह करना होता है। नियंत्रित स्थितियों में प्राप्त ऑंकड़े और उसके आधार पर प्राप्त निष्कर्ष अधिक विश्वसनीय एवं वैध होते हैं।

(ख)**अनियंत्रित निरीक्षण** - इस प्रकार के निरीक्षण या प्रेक्षण में अक्सर एक स्वाभाविक परिस्थिति होती है। ऐसी परिस्थिति में दूसरे व्यक्तियों को यह जानकारी रहती है कि उनके व्यवहारों का प्रेक्षण किया जा रहा है। इस प्रकार के प्रेक्षण में कोई स्पष्ट नियम नहीं अपनाया जाता है। इसलिए इस प्रकार के निरीक्षण को अक्रमबद्ध निरीक्षण कहते हैं। संक्षेप में कहें तो ऐसे निरीक्षण में न तो प्रेक्षण पर नियंत्रण रहता है और न

ही प्रेक्षित घटनाओं के घटित होने के स्वरूप पर ही कोई नियंत्रण रहता है। इसलिए ऐसे अनुसंधान को वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता है।

1- **प्रेक्षक की भूमिका** - प्रेक्षण की जाने वाली परिस्थिति में तटस्थ की हो या सक्रिय भागीदारी की, इस आधार पर निरीक्षण विधि के निम्नलिखित प्रकार होते हैं -

(i) **सहभागी निरीक्षण -** इस प्रकार के निरीक्षण में प्रेक्षणकर्त्ता व्यक्तियों के क्रिया-कलापों में स्वयं सक्रिय रूप से भाग लेता है और साथ ही साथ उनके व्यवहारों का प्रेक्षण भी करता है। अतः इस प्रकार के प्रेक्षण में प्रेक्षणकर्ता उस परिस्थिति का एक सक्रिय भाग बन जाता है जिसका प्रेक्षण किया जा रहा होता है। इस प्रकार की परिस्थिति में प्रेक्षक अपना परिचय सदस्यों से छिपाकर रखता है। इसमें प्रेक्षक को उन व्यक्तियों के साथ जिनके व्यवहारों का प्रेक्षण करना होता है सौहार्दपूण सम्बन्ध बनाकर रखना चाहिए। उनसे अपने को श्रेष्ठ नहीं समझना चाहिए।

(ii) **असभागी निरीक्षण** - वैसे प्रेक्षण को कहते हैं जिसमें प्रेक्षक व्यक्तियों के व्यवहारों का निरीक्षण एक स्वाभाविक परिस्थिति में तो करता है परन्तु स्वयं व्यक्तियों के क्रिया-कलापों में हाथ नहीं बटॉता है। ब्लैक तथा चैम्पियन के अनुसार -"असहभागी निरीक्षण एक ऐसी विधि है जिसमें अध्ययनकर्त्ता दूसरे व्यक्तियों के व्यवहारों का निरीक्षण एक स्वाभाविक परिस्थिति में करता है लेकिन प्रेक्षित व्यवहारों में वास्तविक सहभागी के रूप में कार्य नहीं करता है।" इस प्रकार का प्रेक्षण संगठित या संरचित होता है। इसमें प्रेक्षक इस बात की पूर्ण योजना पहले ही बना लेता है कि स्वाभाविक परिस्थिति का स्वरूप कैसा होगा। प्रेक्षकों की उपस्थिति से उत्पन्न होने वाली समस्याओं का समाधान कैसे किया जा सकता है, ऑकड़ों में कहाँ तक सदृश्यमूलता होगी तथा किस ढ़ंग से इसका विश्लेषण किया जाय। असहभागी प्रेक्षण में प्रेक्षणकर्ता अक्सर व्यक्तियों के बीच बैठकर ही उनके व्यवहारों का प्रेक्षण करता है। इसे असहभागीता प्रेक्षण भी कहा जाता है।

2- प्रेक्षण प्रेक्षित व्यवहारों को विभिन्न वर्गों या श्रेणियों में बाँटकर या प्रेक्षित व्यवहार की विशेषताओं या मात्राओं के आधार पर निरीक्षण विधि के निम्नलिखित प्रकार है।

(i) **वर्गीकरण व्यवस्था -** इस विधि में प्रेक्षणकर्त्ता व्यक्तियों के व्यवहारों को विभिन्न वर्गो में बाटते हुए उसका अभिलेखन करता है। वर्गीकरण व्यवस्था के स्वरूप से तात्पर्य है वर्गों के प्रकार, वर्गों की संख्या, विभिन्न प्रकार के व्यवहारों के अध्ययन में उन वर्गो की उपयोगिता की सीमा आदि से होता है। इस विधि का महत्वपूर्ण लाभ यह है कि इस विधि द्वारा संग्रह किया गया तथ्य विश्वसनीय होता है। लेकिन इसमें समय एवं धन अधिक लगता है।

(ii) **रेटिंग या निर्धारण व्यवस्था** - इसमें शोधकर्त्ता किसी वस्तु, व्यक्तियों, घटना को एक दिए गए वर्ग मापनी के रूप में मापता है। रेटिंग मापनी के कई प्रकार हैं। समस्याओं के स्वरूप के आधार पर इनका अनुसंधान में उपयोग किया जाता है।

6.5 प्रश्नावली विधि

प्रश्नावली व्यवहारपरक शोध में प्रदत्त संकलन करने की एक लोकप्रिय एवं प्रचलित साधन है। प्रश्नावली एक ऐसे प्रश्नों की माला होती है जिसमें शोध समस्या से सम्बन्धित कई प्रश्न दिए होते हैं तथा जिसे उत्तरदाता प्रश्नों को ध्यानपूर्वक पढ़कर उनका उत्तर अपने अनुभव के आधार पर देता है और पुनः शोधकर्त्ता को उसे लौटा देता है। गुडे तथा हाट ने प्रश्नावली को परिभाषित करते हुए कहा है कि ''सामान्यतः प्रश्नावली से तात्पर्य एक ऐसे साधन से होता है जिसमें एक प्रपत्र के सहारे प्रश्नों के उत्तर दिए जाते हैं तथा जिसे उत्तरदाता स्वयं भरते हैं।''

उक्त परिभाषा के आधार पर हम कह सकते हैं कि प्रश्नावली में प्रश्नों की कड़ी या माला होती है। प्रश्नावली को एक प्रपत्र के रूप में तैयार किया जाता है, जिसमें प्रश्न, उसके उत्तर एवं उसके उत्तर के लिए जगह, उत्तरदाता का नाम, पता, योग्यता आदि लिखने के लिए भी स्थान होता है। इसमें उत्तरदाता प्रश्नों को स्वयं पढ़ता है तथा उसका उत्तर देता है।

प्रश्नावली के प्रकार -

प्रश्नावली के प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैं -

1- **संरचित प्रश्नावली** - इस प्रकार की प्रश्नावली में प्रश्नों की प्रकृति वस्तुनिष्ठ, सीमित तथा प्रतिबन्धित होती है। इसमें प्रश्नों के उत्तर दिए रहते हैं। उनमें से किसी एक उपयुक्त उत्तर का चयन उत्तरदाता को करना होता है। इसमें सूचनादाता या उत्तरदाता की उत्तर देने की प्रकृति अधिकांशतया सीमित या प्रतिबन्धित ही रहती है।

2- **असंरचित प्रश्नावली -** इस प्रकार की प्रश्नावली में प्रश्नों के उत्तर नहीं दिए गए रहते हैं। उत्तरदाता पर किसी भी प्रकार का प्रतिबन्ध उत्तर देने पर नहीं रहता है। इसमें प्रश्नों का उत्तर वह खुलेकर देता है। जिसके कारण प्राप्त सूचना का स्वरूप विस्तृत, विवरणात्मक तथा गुणात्मक ही रहता है।

3- **मिश्रित प्रश्नावली** - इसमें संरचित तथा असंरचित दोनों ही प्रकार के प्रश्न दिए गए होते हैं। इसमें प्रायः विस्तृत तथा प्रतिबन्धित दोनों ही प्रकार की सूचनाएँ शामिल रहती हैं।

4- **चित्रमय प्रश्नावली -** इस प्रकार की प्रश्नावली में मुख्यतया चित्रों का प्रयोग किया जाता है, लेकिन अध्ययन की दृष्टि से यह काफी खर्चीली होती है।

एक उत्तम प्रश्नावली की विशेषताएँ-

एक उत्तम प्रश्नावली में निम्नलिखित विशेषताओं का होना आवश्यक है -

1- अध्ययन समस्या का स्वरूप सैद्धान्तिक व व्यावहारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होना चाहिए।
2- प्रश्नों की संख्या उपयुक्त होनी चाहिए।
3- प्रश्नों का स्वरूप मिश्रित होना चाहिए।
4- प्रश्नों की भाषा सरल, स्पष्ट एवं निष्पक्ष होनी चहिए।
5- प्रश्नों की प्रकृति उपयुक्त होनी चाहिए।
6- प्रश्नों का अनुक्रम तर्कसंगत होना चाहिए।
7- प्रश्नों का स्वरूप ऐसा हो जिससे वस्तुपरक परिणाम प्राप्त हो सकें।
8- प्रश्नावली का विश्वसनीयता गुणांक उच्च स्तर का होना चाहिए।
9- वैधता गुणांक प्रश्नावली का उच्च होना चाहिए।
10-प्रश्नावली आकर्षक होनी चहिए।
11-प्रश्नावली में निर्देश पूर्ण एवं स्पष्ट होना चाहिए।
12-प्रश्नावली की लम्बाई कम होनी चाहिए।
13-प्रश्नावली में ऐसे ही प्रश्न पूछे जाँच जिसका उत्तर निसंकोच उत्तर दाता दे सकें।

प्रश्नावली विधि के लाभ -

1- इसमें विशाल तथा व्यापक समष्टि के अध्ययन की सुगमता होती है।
2- प्रश्नावली द्वारा अध्ययन में निष्पक्ष उत्तर प्राप्त होने के कारण अध्ययन की काफी सुगमता रहती है।
3- प्रश्नावली द्वारा अध्ययन वस्तुपरक एवं तर्क संगत प्रश्नों की रचना पर आधारित होता है। अतः अध्ययन में एकरूपता होती है।
4- प्रश्नों का स्वरूप प्रायः द्विविध प्रकार का होने से अध्ययन की जाने वाली समस्या के विभिन्न पक्षों का अध्ययन भी हो जाता है।
5- प्रश्नावली विधि द्वारा प्राप्त परिणाम वस्तुपरक होते हैं।
6- प्रश्नावली द्वारा अध्ययन में काफी सरलता एवं सुविधा रहती है।
7- समय कम एवं धन की भी बचत हो जाती है।

प्रश्नावली की सीमाएँ -

1- केवल उच्च स्तर के शिक्षित व्यक्तियों का ही अध्ययन प्रश्नावली द्वारा हो पाता है।
2- प्रश्नावली द्वारा प्रतिदर्श के पक्षपातपूर्ण प्रतिचयन की सम्भावना अधिक रहती है।
3- सार्वभौमिक प्रश्नों की रचना में कठिनाई होती है।
4- उत्तरदाता अधिकांश उत्तरों को पूरित नहीं करते हैं।
5- गहन तथा सतत् अध्ययन प्रश्नावली के द्वारा नहीं किया जा सकता है।

6.6 साक्षात्कार

साक्षात्कार विधि में साक्षात्कारकर्त्ता एवं उत्तरदाता दोनों ही आमने सामने बैठते हैं। इसमें साक्षात्कारकर्त्ता अपनी आवश्यकतानुसार विभिन्न प्रश्न मौखिक रूप से उत्तरदाता से पूछता है और उत्तरदाता मौखिक रूप से उनके उत्तर देता है।

मैकोबी एंव मैकोबी के अनुसार- "साक्षात्कार से तात्पर्य आमने-सामने शाब्दिक आदान-प्रदान से है, जिसमें एक व्यक्ति जो साक्षात्कारकर्त्ता होता है, दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों से मतों, विश्वासों आदि के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने का प्रयास करता है।"

करलिंगर के अनुसार - "साक्षात्कार आमने-सामने अन्तः-व्यक्तित्व भूमिका की वह स्थिति है जिसमें एक व्यक्ति जिसका साक्षात्कार किया जा रहा है, उत्तरदाता से अपने अनुसंधान समस्या के उद्देश्यों के अनुरूप निर्मित प्रश्नों को पूछकर उनके उत्तर प्राप्त करना चाहता है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि साक्षात्कार विधि में आमने-सामने प्रश्नोत्तर के रूप में शाब्दिक आदान-प्रदान के द्वारा साक्षात्कारकर्त्ता, उत्तरदाता से उसकी जानकारी की घटनाओं, अनुभवों, विश्वासों, मतों, भावनाओं, भूतकालीन व्यवहारों तथा भावी योजनाओं आदि के बारे में सूचना संग्रहित करता है। साक्षात्कार में विशेषकर साक्षात्कारकर्त्ता उत्तरदाता से मौखिक प्रश्न पूछता है। उत्तरदाता प्रश्नों का उत्तर साक्षात्कारकर्त्ता की ओर उन्मुख होकर देता है। शाब्दिक आदान-प्रदान का उद्देश्य अनुसंधान समस्या हेतु तथ्यों के एकत्रीकरण से होता है। साक्षात्कार में विशेष रूप से तथ्यों की जानकारी एवं कार्यों के औचित्य से सम्बन्धित प्रश्न पूछे जाते हैं।"

साक्षात्कार में प्रयुक्त प्रश्नों का प्रारूप दो प्रकार का होता है--

1- सीमित विकल्प या बन्द प्रश्न होते हैं।

2- दूसरे खुले या मुक्त प्रश्न होते हैं, जिसमें उत्तरदाता अपनी इच्छानुसार उत्तर देता है।

साक्षात्कार के प्रकार -

अनुसंधान में प्रयुक्त साक्षात्कार पद्धति के दो मुख्य प्रकार हैं -

1- **मानकीकृत साक्षात्कार** - इसमें उत्तरदाताओं से पूछे जाने वाले प्रश्नों का निर्धारण साक्षात्कार शुरू करने के पूर्व ही कर लिया जाता है। सभी प्रश्नों का क्रम उसकी भाषा, उसका क्रम बदलने की छूट साक्षात्कारकर्त्ता को नहीं रहती है। इसमें सभी कुछ पहले से ही निर्धारित रहता है।

2- **अमानकीकृत साक्षात्कार-** इसमें पूछे जाने वाले प्रश्न पूर्व निर्धारित नहीं रहते हैं। प्रश्नों की भाषा, उनके क्रम परिवर्तन की छूट साक्षात्कारकर्त्ता को रहती है। प्रयोज्य के अनुरूप साक्षात्कारकर्त्ता प्रश्नों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर लेते हैं।

इसमें सामान्यतया खुले एवं मुक्त-प्रश्नों का प्रयोग किया जाता है। समाज मनोवैज्ञानिकों द्वारा अनुसंधानों में दोनों ही प्रकार के साक्षात्कार का उपयोग पर्याप्त रूप से किया जाता है। कुछ विद्वानों ने मानकीकृत एवं अमानकीकृत के स्थान पर संरचित एवं असंरचित शब्दों का प्रयोग किया है। वास्तव में कोई भी साक्षात्कार परिस्थित न तो पूर्ण मानकीकृत या संरचित होती है और न ही अमानकीकृत या असंरचित होती है।

साक्षात्कार विधि के प्रमुख चरण -

साक्षात्कार विधि के प्रमुख चरण निम्नलिखित होते हैं -

1- साक्षात्कार हेतु पूर्व तैयारी
2- मैत्रीपूर्ण वातावरण का निर्माण
3- प्रश्नों को पूछना
4- प्रतिक्रियाओं को प्राप्त करना
5- कथित सामग्री का अंकन
6- प्रतिचयन पर ध्यान
7- साक्षात्कर्त्ता - त्रुटि पर नियंत्रण
8- साक्षात्कार की परिसमाप्ति
9- साक्षात्कार प्रतिवेदन की रचना तथा प्रस्तुतीकरण

साक्षात्कार पद्धति की प्रमुख समस्यायें -

साक्षात्कार विधि में अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं जिनका निराकरण करना आवश्यक होता है -

1- साक्षात्कार के प्रश्नों का गठन सावधानी पूर्वक करना चाहिए।
2- साक्षात्कार सामग्री के अंकन की मूल समस्या होती है। इसके लिए सरलतम विधि का उपयोग करना चाहिए ।
3- साक्षात्कार कर्त्ता-त्रुटि के स्रोत-इसका तात्पर्य है कि अक्सर साक्षात्कारकर्त्ता द्वारा पक्षपातपूर्ण ढंग से सामग्री का अंकन होने लगता है, इससे उसे बचना चाहिए। साक्षात्कार तथ्यों की विश्वसनीयता एवं वैधता की भी समस्या उत्पन्न होती है। साक्षात्कार द्वारा प्राप्त तथ्यों की विश्वसनीयता एवं वैधता तभी पायी जायेगी जब साक्षात्कार हेतु अपनाई गई विशिष्ट तकनीक का उपयोग हुआ हो। यह भी ध्यान देना होगा कि प्रश्न वही पूछे जाँच जो समस्या से सम्बन्धित हों। यह भी साक्षात्कारकर्त्ता को ध्यान देना होगा कि उत्तरदाता पूछे गए प्रश्नों का जबाब ठीक ढ़ंग से दे रहा है कि नहीं।

साक्षात्कार विधि के लाभ -

1- साक्षात्कार का प्रयोग अधिक व्यापक संख्या पर किया जा सकता है। इसका प्रयोग शिक्षित तथा अशिक्षित दोनों ही वर्गो पर किया जा सकता है।

2- परिस्थिति के अनुसार इस विधि में परिवर्तन किया जा सकता है।
3- साक्षात्कार में उत्तरदाता के उत्तर देते समय अन्य व्यवहारिक प्रतिक्रियाओं को भी देखने की सुविधा होती है।
4- साक्षात्कार में प्राप्त उत्तरों की जाँच करने की अधिक सुविधा है।
5- साक्षात्कार में प्रश्न मौखिक रूप से पूछे जाते हैं।
6- साक्षात्कार में प्रायः सभी प्रश्नों के उत्तर प्राप्त हो जाते हैं।

साक्षात्कार विधि की परिसीमाएँ -

1- कुछ उत्तरदाता प्रश्नों के उत्तर देने में कठिनाई का अनुभव करते हैं जबकि वे ही लोग लिखित रूप से उत्तर आसानी से दे देते हैं।
2- साक्षात्कारकर्त्ता त्रुटि के उत्पन्न होने की सम्भावना अधिक रहती है।
3- साक्षात्कार करते समय सभी प्रयोज्यों के लिए परिस्थितियों की एकरूपता बनाये रखने में कठिनाई होती है।
4- साक्षात्कार में गोपनीयता नहीं रहती है। इसलिए अधिकांश उत्तरदाता सही एवं खुलेकर उत्तर देने में संकोच करते हैं।

6.7 निर्धारण मापनियाँ

निर्धारण मापनी को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है कि यह मापनियों मूल्यांकन की जाने वाली वस्तु के विभिन्न खण्डों की ओर ध्यान आकर्षित करती हैं। किन्तु इसमें इतने प्रश्न या वर्ग नहीं होते जितने जाँच सूची या प्राप्तांक कार्ड में होते हैं- गुड तथा स्केट

वान डैलोन के अनुसार - "निर्धारण मापनी किसी चर की मात्रा, तीव्रता एवं आवृत्ति को निश्चित करती है।" वास्तव में मापनी विधि एक सातत्य पर किसी वस्तु को क्रम देने की विधि है।

निर्धारण मापनियों के प्रकार -

सामान्य रूप से जिन निर्धारण मापनियों का उपयोग अनुसंधानों में किया जाता है उन्हें पाँच वर्गों में आंकिक, चित्रित, मानक, संचयी बिन्दु तथा बाधिक चयन में वर्गीकृत किया जा सकता है। इनका विस्तृत वर्णन नीचे किया जा रहा है।

1- **आंकिक निर्धारण मापनियाँ-** इन्हें एकीकृत तथा विशेष वर्ग की मापनियाँ भी कहा जाता है। इन मापनियों में निर्धारक सीमित संख्या में कुछ वर्गों का चयन करता है तथा उन्हें उनके मापनी मूल्य के अनुसार क्रमबद्ध कर लेता है। विभिन्न विद्वानों ने अलग-अलग ढंग से बिन्दुओं का निर्धारण किया है। कोई 5 तो कोई 7 या कोई 11 बिन्दुओं का प्रयोग निर्धारण मापनियों में किया है। इन मापनियों के केन्द्र में मध्य बिन्दु होता है।

जिनके दोनों ओर समान अंतराल पर अन्य वर्ग स्थित होते हैं। इस प्रकार की मापनी का उदाहारण निम्नवत है। एक व्यक्ति का अपने मित्र के प्रति व्यवहार का निर्धारणः

10	9	8	7	6	5	4	3	2	1	0
अत्यधिक सुखदायी	अत्याधिक सुखदायी	अति सुखदायी	साधारण सुखदायी	कुछ	तटस्थ	कुछ दुखदायी	साधारण दुखदायी	अति दुखदायी	अत्यधिक दुखदायी	अत्यधिक काल्पनातीत कल्पनातीत

कुछ आंकिक मापनियों में अंक नहीं दिए रहते हैं बल्कि निर्धारक को अपने निर्णय केवल संकेतों के आधार पर देने होते हैं तथा निर्धारक बाद में इन पर अंक निर्धारित कर लेता है। उदहारणार्थ-

1	2	3	4	5
अत्याधिक सृजनात्मक	सृजनात्मक	साधारण	असृजनात्मक	अत्याधिक असृजनात्मक

उक्त संकेतों को 1 से 5 तक अंक दिए जाते हैं।

2- **चित्रित निर्धारण मापनियाँ -** इस प्रकार की मापनियों को अनेक रूपों में दर्शाया जाता है - एक ही रेखा को अनेक भागों में विभक्त कर या उसे एक सातत्य के रूप में रखकर। इस प्रकार की मापनी में निर्धारक उपयुक्त स्थान पर चिह्न मात्र लगाकर अपने निर्धारण को व्यक्त कर सकता है। निर्धारक का पथ प्रदर्शन के लिए इस प्रकार की मापनियों में हर मापनी बिन्दु पर संक्षिप्त निर्देशित कथन लिखे रहते हैं। इन कथनों द्वारा निर्धारक अपने निर्धारण का स्थानीयकरण कर सकता है। चित्रित मापनियों का निर्माण करते समय दो बातें पर ध्यान रखना चाहिए-

(i) अति के कथनों को जहाँ तक हो सके उसे उपेक्षित करना चाहिए।

(ii) विवरणात्मक कथनों को इस प्रकार रखना चाहिए कि सम्भवतया वे मापनी के आंकिक मूल्यों के निकट हो।

3- **मानक निधारण मापनी-** इसमें कुछ मानक विन्यास निर्धारकों को दिए रहते हैं। मानक प्रायः साधारण संकेतों से अधिक होते हैं। इसमें निर्धारण मापनी मूल्यों का पहले से ही निर्धारण कर लिया जाता है। इस मापनी में निर्धारण हेतु पाँच विशेषताओं का चयन किया जाता है। जब व्यक्ति से व्यक्ति का इन निर्धारित विशेषताओं के आधार पर मिलान करना होता है तब पॉचों विशेषताओं के आधार पर व्यक्तियों को क्रम में रखना होता है। इस प्रकार प्रत्येक सूची में प्रथम स्थान वाले व्यक्ति को मापनी में सर्वोत्तम विशेषता का प्रतिनिधित्व करने के लिए चयन कर लेते हैं। इसी प्रकार सबसे निम्न स्थान पाने वाले व्यक्ति का मापनी के निम्नतम स्थान का प्रतिनिधित्व करने के लिए निर्धारित कर लिया जाता है। मापनी के अन्य स्थानों के लिए इसी प्रकार व्यक्तियों का चयन कर लिया जाता है।

4- **संचयी बिन्दुओं द्वारा निर्धारण-** इसमें किसी व्यक्ति के अंक मापनी पर उसके द्वारा प्राप्त समस्त अंकों का औसत होता है। इसमें बिन्दुओं का चयन मानवीय निर्णय पर निर्भर करता है। इस प्रकार की मापनियों का प्रयोग कार्य पर लगे हुए व्यक्तियों के कार्य का मूल्यांकन करने के लिए किया जा सकता है।

5- **बाधिक चयन निर्धारण मापनी-** इस विधि में निर्धारक को यह नहीं बताना होता है कि किसी व्यक्ति में अमुक विशेषता है या नहीं बल्कि उसे विशेषताओं के युग्मों में से यह बताना होता है कि कौन सी विशेषताओं से वह दूसरे से अधिक है। इस युग्म में से एक समग्र विशेषता को बताने के लिए वैध होती है तथा दूसरी नहीं।

निर्धारण मापनियों का मूल्यांकन -

ये मापनियाँ युग्म तुलना और श्रेणी विधि की अपेक्षा अनेक दृष्टियों से उत्तम है। निर्धारण विधियों में युग्म तुलना एवं श्रेणी विधि से कम समय लगता है। इसका प्रयोग अधिक विस्तृत क्षेत्र पर किया जा सकता है। इस विधि में कुछ त्रुटियाँ भी हैं। इसमें सतत् त्रुटि, उदारता त्रुटि, तार्किक त्रुटि, विरोधी त्रुटि पाई जाती है।

6.8 चिह्नांकन सूची (चेक लिस्ट)

चिह्नांकन सूची का रूप बहुत कुछ अनुसूची के समान होता है। परन्तु चिह्नांकन सूची में जो प्रश्न होते हैं उनका स्वरूप अनुसची के प्रश्नों की तरह मुक्तोत्तर नहीं होता है। चिह्नांकन सूची में एक प्रश्न से सम्बन्धित वैकल्पिक उत्तर प्रश्न के ठीक नीचे दिए रहते हैं या फिर उनके उत्तर केवल हाँ व नहीं या पता नहीं के आधार पर ही होते हैं। संक्षेप में इस विधि के अंतर्गत सूचनादाता को दिए गए प्रश्न के उत्तर दिए गए वैकल्पिक उत्तरों में से किसी एक उत्तर को एक चिह्न के द्वारा जैसे - ठीक है, चित्र के द्वारा व्यक्त करना होता है। जैसे -

प्र0 मुझे अक्सर नींद आती रहती है।

1. हाँ 2. पता नहीं 3. नही

प्र0 क्या आप अंग्रेजी समाचार पत्र नियमित रूप से पढ़ते हैं?

1. हाँ 2. नही

प्र0 निम्नलिखित खेलों में आप किस खेल को प्रायः अधिक पसंद करते हैं।

1-फुटबाल 2-क्रिकेट 3-हाकी 4- बालीबाल

चिह्नांकन सूची में वैकल्पिक उत्तरों का स्वरूप जिस प्रकार एक व्यक्ति के व्यक्तित्व, उसकी अभिरूचि, अभिवृत्ति से सम्बन्धित रहता है ठीक उसी प्रकार इसके द्वारा एक समूह, समुदाय, संस्था, संगठन, योजना के प्रति भी उपयुक्त वैकल्पिक उत्तरों की रचना की जा सकती है और सम्बन्धित इकाई के प्रति आवश्यक वस्तुपरक जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

चिह्नांकन सूची की रचना में ध्यान देने योग्य बातें -

1- सबसे पहले इसमें सम्बन्धित इकाई के विभिन्न पक्षों की विस्तृत जानकारी अध्ययनकर्त्ता को होनी चाहिए। इसके लिए सम्बन्धित साहित्य का उसे गहन अध्ययन करना चाहिए।
2- प्रश्नों की रचना तथा सम्बन्धित वैकल्पिक उत्तरों का स्वरूप व्यावहारिक होना चाहिए।
3- सम्बन्धित इकाई के अध्ययन का सम्बन्ध यथासम्भव व्यापक एवं सम्पूर्ण होना चाहिए।
4- प्रश्नों के प्रस्तुत करने की प्रक्रिया तर्कसंगत एवं क्रमबद्ध होनी चाहिए।
5- सूची में जिन विशेष शब्दों एवं पदों का उपयोग किया गया है, उनकी उपयुक्त संक्रियात्मक व्याख्या की जानी चाहिए।

6.9 समाजमिति

इस विधि का विकास जे0एल0 मोरेनों ने 734 में सामूकि मनोबल के मापन के लिए किया। सामाजिक अनुसंधानों में अक्सर इस विधि का उपयोग सामूहिक संगठन, समूह संरचना, सामाजिक स्थिति, सामाजिक अंतःक्रियाओं, आकर्षण-विकर्षण पसंदगी-नापसंदगी के अध्ययन हेतु किया जाता है। इस विधि में एक समूह के सदस्यों से गोपनीय ढ़ंग से पूछा जाता है कि वे समूह के किन सदस्यों के साथ किसी विशिष्ट क्रिया को करना पसंद करेंगे या नापसंद करेंगे। किनका व्यक्तित्व आपको आकर्षित करता है या अपने समूह के किस सदस्य के प्रति विकर्षण की प्रतिक्रिया करते हैं। इस प्रकार समाजमिति केवल समूह सदस्यों में विद्यमान पसंदगी-नापसंदगी या आकर्षण-विकर्षण के मूल्यांकन का माप है।

जैनिंग्स ने समाजमिति को परिभाषित करते हुए कहा है कि-“सामजमिति को एक ऐसा यंत्र माना जा सकता जिसके माध्यम से एक विशेष समाज, एक विशेष समूह में प्रचलित सम्पूर्ण संरचना को स्पष्ट रूप से तथा आलेखीय आधार पर प्रस्तुत किया जा सकता है।”

करलिंगर के अनुसार - “समाजमिति एक विस्तृत पद है जिससे अनेक विधियों का संकेत मिलता है। इन विधियों के द्वारा व्यक्तियों का चयन, सम्प्रेषण और अंतःक्रिया प्रतिमानों से सम्बन्धित ऑकड़ों का संकलन और विश्लेषण किया जाता है। ”

अतः वैयक्तिक सम्बन्धों को ज्ञात करने के लिए समाजमितीय को परिष्कृत किया गया है। इस विधि में सर्वप्रथम समाजमितिक मापदण्ड का निर्माण किया जाता है। इस मापदण्ड का कथन निश्चित संकृत्यों के रूप में किया जाता है।

मान लीजिए कि किसी समूह में अंतः वैयक्तिक आकर्षण का अध्ययन करना है। समूह के प्रत्येक सदस्य से यह पूछा जायेगा कि वह किसी व्यक्ति विशेष को किसी विशेष क्षेत्र में पसंद करता है या नापसंद करता है। चूँकि इस प्रकार का प्रश्न पूछना बहुत उचित नहीं होता है इसलिए इतना ही पूछा जाता है कि आप अमुक कार्य के लिए किसी व्यक्ति को अधिक पसंद करेंगे। समूह के सदस्यों से प्राप्त स्वीकृति या अस्वीकृति के आधार पर समाजमिति

प्रदत्तों की आख्या की जा सकती है। इन प्रदत्तों के आधार पर समाज आलेख की भी रचना की जा सकती है। वैसे समाजमिति विधि द्वारा प्राप्त आंकड़ों का निरूपण कई विधिओं द्वारा किया जा सकता है।

समाजमितीय विश्लेषण की विधियाँ -

समाजमितीय विश्लेषण की प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं-

1- आलेखीय विश्लेषण

2- समाज आलेख

3- समाज मितीय मैट्रिसेज

4- समाजमितीय सूचनाएँ

समाज आलेख -

समाजमितीय विश्लेषण की उपर्युक्त विधियों में से समाजमिति विधि द्वारा प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण करने हेतु प्रमुख रूप से समाज आलेख प्रविधि का उपयोग किया जाता है। इस विधि में समूह के प्रत्येक सदस्य से यह प्रश्न पूछा जाता है कि आपके समूह का नेता कौन है या आप सबसे अधिक किसे पसंद या नापसंद करते हैं या किसका व्यक्तित्व अपको आकर्षित या विकर्षित करता है। प्राप्त पसंदगी, नापसंदगी, स्वीकृति-अस्वीकृति, आकर्षण या विकर्षण के आधार पर रेखा चित्र बनाया जाता है। इसे ही समाज आलेख कहते हैं। समाज आलेख की रचना में सर्वप्रथम प्रत्येक व्यक्ति को एक वृत्त के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। पुनः एक व्यक्ति के वृत्त से एक तीर उस व्यक्ति के वृत्त तक खींचा जाता है। जिसे वह पहला व्यक्ति पसंद करता है। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति से प्रश्न किए जाते हैं तथा प्रत्येक वृत्त से दूसरे वृत्त तक तीर के निशान अंकित किए जाते हैं। समाज आलेख में जिस व्यक्ति को सबसे अधिक मत प्राप्त होते हैं या जिस व्यक्ति को सर्वाधिक पसंद किया जाता है या जिस व्यक्ति पर सर्वाधिक निशान होते हैं वह व्यक्ति ही नेता होता है। एक समूह में एक या अधिक नेता हो सकते हैं। समूह में जिस व्यक्ति को नेता के बाद बहुमत प्राप्त होता है वह समूह का उपनायक या गौड़ नेता कहलाता है। समूह में कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं जो दूसरों को तो पसंद करते हैं, परन्तु उन्हें कोई पसंद नहीं करता है, ऐसे व्यक्तियों को बहिष्कृत या एकाकी कहा जाता है। जब व्यक्ति आपस में एक दूसरे को पसंद करते हैं तो ऐसे सम्बन्धों को युगल सम्बन्ध का नाम दिया जाता है। जब एक सदस्य दूसरे को दूसरा तीसरे को तीसरा पहले को चुनता या पसंद करता है तो ऐसे सम्बन्धों को त्रिकोणात्मक सम्बन्ध कहते हैं। ऐसे सम्बन्ध समूह में गुटबंदी के प्रतीक होते हैं। समूह में कई त्रिकोणात्मक सम्बन्ध बनते है तब समूह असंगठित हो जाता है। ऐसी स्थिति में समूह का मनोबल गिरता है। कभी-कभी समूह में ऐसा भी होता है कि एक सदस्य दूसरे को दूसरा तीसरे को तीसरा चौथे को और चौथा पाँचवे व्यक्ति को पसंद करता है तो ऐसे-सम्बन्धों को कड़ी का सम्बन्ध कहते हैं। इस प्रकार कई प्रकार के सम्बन्धों का अध्ययन समाजमिति विधि द्वारा हो जाता है। एक काल्पनिक उदाहरण द्वारा प्राप्त पसंदगी को समाज आलेख के द्वारा यहाँ स्पष्ट किया जा रहा है। समूह में दस सदस्य हैं, उनकी पसंदगी का विवरण इस चित्र में दिया गया है।

पसंदगी का विवरण

क्र0सं0	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
1			✓							
2			✓							
3		✓								
4			✓							
5			✓							
6							✓			
7								✓		
8									✓	
9							✓			
10	✓									
योग	1	1	4	0	0	0	2		1	0

समाजमिति विधि के लाभ -

समाजमिति विधि के कुछ प्रमुख लाभ निम्नलिखित है -

1- इस विधि द्वारा समूह की संरचना एवं समूह के सम्बन्धों का जितना अच्छा अध्ययन किया जा सकता है उतना अन्य विधियों द्वारा नहीं।

2- समूह सम्बन्धशीलता का अध्ययन सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

3- नेतृत्व एवं सामूहिक मनोबल का अध्ययन भी इस विधि द्वारा किया जा सकता हैं।

4- एक समूह में सदस्यों की स्थिति का भी अध्ययन किया जा सकता है।

समाज विधि के दोष -

समाज विधि के कुछ प्रमुख दोष निम्नलिषित हैं -

1- इस विधि का अक्सर एक पूरक विधि के रूप में उपयोग किया जाता है।
2- इसका उपयोग केवल छोटे समूहों पर ही हो सकता है।
3- इस विधि द्वारा प्राप्त तथ्य अधिक मात्रात्मक नहीं होते हैं।
4- अधिकांश मनोवैज्ञानिक इस विधि को क्रमबद्ध एवं वैज्ञानिक विधि नहीं मानते हैं।

6.10 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान चुके हैं कि अनुसंधानों में प्रदत्त संकलन की कौन-कौन सी प्राविधियाँ होती हैं। विशेषकर निरीक्षण विधि, प्रश्नावली, साक्षात्कार, निर्धारण मापनियाँ, चेकलिस्ट एवं समाजमिति विधि के बारे में आपने विस्तृत अध्ययन किया होगा। प्रदत्त संकलन की इन प्रविधियों का मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में विशेषरूप से उपयोग किया जाता है। निरीक्षण विधि जो प्रदत्त संकलनकी एक उपयुक्त एवं महम्वपूर्ण विधि है। इसमें व्यक्तियों के व्यवहारों एवं घटनाओं के दृश्य तथा श्रव्य पक्षों को क्रमबद्ध ढंग से देख-सुनकर उसका रिकार्ड तैयार किया जाता है। निरीक्षण विधि को मुख्यतः विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया गया है। इन आधारों पर यह विधि छः प्रकार की होती है - नियंत्रित, अनियंत्रित, सहभागी, असहभागी, वर्गीकरण व्यवस्था एवं निर्धारण व्यवस्था। प्रश्नावली एक ऐसे प्रश्नों की माला होती है जिसमें शोध समस्या से सम्बन्धित कई प्रश्न होते हैं। प्रश्नावली मुख्यतः चार प्रकार की होती है - संरचित, असंरचित, मिश्रित एवं चित्रमय। साक्षात्कार विधि में साक्षात्कारकर्त्ता एवं उत्तरदाता दोनों ही आमने-सामने बैठते हैं। साक्षात्कारकर्त्ता आवश्यकतानुसार विभिन्न प्रश्न उत्तरदाता से पूछता है। साक्षात्कार दो प्रकार का होता है - मानकीकृत एवं अमानकीकृत। निर्धारण मापनी वह होती है जिसमें मूल्यांकन की जाने वाली वस्तु के विभिन्न खण्डों की ओर ध्यान आकर्षित किया जाता है। निर्धारण मापनियाँ पाँच प्रकार की होती है। आंकिक निर्धारण मापनियाँ, चित्रित निर्धारण मापनियाँ, मानक निर्धारण मापनी, संचयी बिन्दुओं द्वारा निर्धारण एवं बाधिक चयन निर्धारणमापनी। चिह्नांकन सूची का भी प्रदत्त संकलन में उपयोग किया जाता है।

समाजमिति विधि का सामाजिक मनोवैज्ञानिक अध्ययनों, अंतःवैयक्तिक आकर्षण- विकर्षण, पसंदगी-नापसंदगी लोगों के बीच शक्ति सम्बन्ध, समूह संशक्तिशीलता, समूहमनोबल आदि के अध्ययन में प्रयुक्त किया जाता है। इस विधि में सर्वप्रथम समाजमितिक मापदण्ड का नियोजन किया जाता है। इस मापदण्ड का कथन निश्चित संकृत्यों के रूप में किया जाता है। समाजमिति विधि में लिखित या मौखिक रूप से प्रदत्त प्राप्त किए जा सकते हैं। इस विधि से विशेष रूप से अंतः वैयक्तिक सम्बन्धों का मापन होता है।

6.11 शब्दावली

- **निरीक्षण या प्रेक्षण:** विज्ञान निरीक्षण से प्रारम्भ होता है और अपने सिद्धान्तों की अंतिम पुष्टि के लिए पुनः निरीक्षण पर ही लौटना पड़ता है। निरीक्षण या प्रेक्षण को यंग के शब्दों में इस प्रकार व्यक्त कर सकते है- प्रेक्षण-नेत्र माध्यम से किया गया स्वाभाविक घटनाओं के सम्बन्ध में एक ऐसा क्रमबद्ध तथा विचारपूर्वक

अध्ययन है जो कि उनके घटित होने के समय पर किया जाता है। प्रेक्षण का उद्देश्य विषम सामाजिक घटनाओं, संस्कृति के प्रतिरूपों या मानव व्यवहार के अंतर्गत सार्थक अंतः सम्बन्धित तत्वों के स्वरूप तथा विस्तार को ज्ञात करना होता है।

- **प्रश्नावली:** सामान्यतः प्रश्नावली शब्द से एक ऐसे उपकरण का बोध होता है जिसमें प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने के लिए कई प्रपत्र का उपयोग किया जाता है। जिसे सूचनादाता अपने आप भरता है।
- **साक्षात्कार:** साक्षात्कार से तात्पर्य एक ऐसी स्थिति से है, जिसमें एक व्यक्ति साक्षात्कारकर्ता आमने-सामने के पारस्परिक मौखिक आदान प्रदान से दूसरे व्यक्ति या व्यक्तियों को सूचना देने या अपने विचार तथा विश्वास व्यक्त करने के लिए प्रेरित करने का प्रयार करता है।
- **निर्धारण मापनी:** निर्धारण मापनी के अंतर्गत विभिन्न उद्दीपकों के प्रति निर्धारकों को अपना निर्धारण प्रत्येक उद्दीपक के प्रति एकल आधार पर तथा मात्रात्मक आधार पर व्यक्त करना होता है। यह मात्रात्मक आधार पर एक विशिष्ट संख्या, आलेखी निरूपण तथा शाब्दिक अंकन कुछ भी हो सकता है। इस प्रक्रिया के अंतर्गत एक निर्धारक एक उद्दीपक के प्रति अपने निर्णय की अभिव्यक्ति दिए गए एक स्केल पर किसी एक निश्चित बिन्दु के द्वारा ही उस उद्दीपक को दिए गए विभिन्न संवर्गो में से किसी एक संवर्ग में रखकर व्यक्त करता है।
- **चेकलिस्ट(चिह्नांकन सूची):** इस विधि के अंतर्गत सूचनादाता को दिए गए प्रश्न के उत्तर व काल्पनिक उत्तरों में से किसी एक उत्तर को एक चिह्न के द्वारा व्यक्त करना होता है।
- **समाजमिति:** समाजमिति एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा समूहों में व्यक्तियों की स्वीकृति या अस्वीकृति के विस्तार के मापन के आधार पर उनकी सामाजिकस्थिति, संरचना तथा विकास का अन्वेषण, वर्णन एवं मूल्यांकन किया जाता है। इस विधि के द्वारा नेतृत्व, पूर्वाग्रह एवं मनोबल का भी मापन होता है।
- **समाज आलेख:** समाजमिति विधि द्वारा प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण एवं प्रदर्शन कई विधियों द्वारा किया जाता है। इसमें से एक विधि समाज आलेख है। इसमें रेखा चित्रों के माध्यम से प्रत्येक सदस्य की पसंदगी या नापसंदगी को दर्शाया जाता है। इसी को समाज आलेख कहते हैं।

6.12 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1) निरीक्षण विधि को ------ कहते हैं।
2) निरीक्षण विधि में व्यवहारों का ---- अध्ययन किया जाता है।
3) सहभागी निरीक्षण में प्रेक्षणकर्ता ---- भाग लेता है।
4) असहभागी निरीक्षण में प्रेक्षणकर्ता स्वयं व्यक्तियों के क्रियाकलापों में --- बताता है।
5) प्रश्नावली एक ऐसे प्रश्नों की ---- होती है जिसमें शोध समस्या से सम्बन्धित कई प्रश्न दिए होते हैं।
6) प्रश्नावली का इनमें से कौन सा प्रकार नही हैं?

1- संरचित प्रश्नावली 2- असंरचित प्रश्नावली 3-मिश्रित प्रश्नावली
4- निर्धारण व्यवस्था

7) एक उत्तम प्रश्नावली में प्रश्नों की प्रकृति उपयुक्त होनी चाहिए - सत्य/असत्य

8) साक्षात्कार में साक्षात्काकर्ता एवं उत्तरदाता दोनों ही ---- बैठते हैं।

9) साक्षात्कार के मुख्य तीन प्रकार होते हैं - सत्य/असत्य

10) निर्धारण मापनियों के प्रमुख प्रकार हैं –
1- दो 2-पाँच 3-छः 4-तीन

11) समाजमिति का विकास किसने किया?
i. जेनकिन्स ii. जे0एल0 मोरेनो iii. सिगमण्ड फ्रायड iv. गुडे एण्ड हाट

12) प्रदत्तों के निरूपण हेतु समाज आलेख का कहाँ उपयोग करते हैं?
1. निरीक्षण ii. साक्षात्कार iii. समाजमिति iv. प्रश्नावली

उत्तर: 1-प्रेक्षणविधि 2-ज्यों का ज्यों 3-सक्रिय रूप से 4- हाथ नहीं 5-माला 6-निर्धारण व्यवस्था 7-सत्य 8- आमने-सामने 9-असत्य 10-पाँच 11-जे0एल0 मोरेनो 12-समाजमिति

6.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- कपिल, डा0 एच0 के0 (810): अनुसंधान विधियाँ- व्यवहारपरक विज्ञानों में, हर प्रसाद भार्गव, पुस्तक प्रकाशक, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- भार्गव, महैंश (807): मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन, एच0पी0भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- श्रीवास्तव, डी0एन0 (801): सामाजिक मनोविज्ञान, साहित्य प्रकाशन, आगरा
- त्रिपाठी, जयगोपाल (807): मनोविज्ञान एवं शिक्षा में शोध पद्धतियाँ, एच0 पी0 भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- त्रिपाठी, प्रो0 लाल बचन एवं अन्य (808): मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतियाँ, एच0 पी0 भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- सिंह, अरूण कुमार (809), मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल- बनारसी दास पटना एवं वाराणसी।
- Goode, W.J. & Hatt, P. K. (781): Methods in Scoial Research
- Festinger and Katz : Research method in Behavioural Sciences.
- Kerlinger, F.N. (786): Foundations of Behavioural Research

- Mc Guin, F.J. (790) : Experimental Psychology

6.3 निबंधात्मक प्रश्न

1. निरीक्षण विधि को स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
2. निरीक्षण विधि के प्रकारों का वर्णन कीजिए।
3. प्रश्नावली विधि क्या है? इसके प्रमुख प्रकारों का वर्णन कीजिए।
4. एक उत्तम प्रश्नावली की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
5. प्रश्नावली के गुण-दोषों की विवेचना कीजिए।
6. साक्षात्कार प्रविधि क्या है? इसके प्रकारों का वर्णन कीजिए।
7. साक्षात्कार विधि के प्रमुख चरणों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
8. साक्षात्कार पद्धति के लाभ एवं परिसीमाओं का वर्णन कीजिए।
9. निर्धारण मापनियों के प्रमुख प्रकारों का वर्णन कीजिए।
10. समाजमिति का उदाहरण सहित वर्णन कीजिए।
11. निम्नलिखित पर टिप्पणियाँ लिखिए -

    i) समाज आलेख ii) असहभागी निरीक्षण

    iii) चेकलिस्ट iv) मानक निर्धारण मापनी

इकाई 7. नृवंशविज्ञान सहित परिचय(Introduction including ethnography)

इकाई संरचना

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 नृवंश विज्ञान का अर्थ एवम परिभाषा
7.4 नृवंश विज्ञान की मुख्य विशेषताएं
7.5 नृवंश विज्ञान डिजाइन
7.6 नृवंश विज्ञान विधि
7.7 नृवंश विज्ञान की तकनीक
7.8 नृवंश विज्ञान अनुसंधान की प्रकृति एवम संचालन
7.9 नृवंश विज्ञान का महत्त्व
7.10 नृवंश विज्ञान के लाभ
7.11 नृवंश विज्ञान के नुकसान
7.12 सारांश
7.13 शब्दावली
7.14 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
7.15 संदर्भ ग्रन्थ सूची
7.16 निबंधात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

नृवंश विज्ञान एक गुणात्मक अनुसन्धान हैI यह एक विशेष मानव समाज का वर्णनात्मक अध्ययन है,या इस तरह के अध्ययन को बनाने की एक प्रक्रिया हैI समकालीन नृवंश विज्ञान लगभग पूरी तरह से फील्डवर्क पर आधारित हैI नृवंश विज्ञान में अध्ययन का प्रमुख विषय लोगों की संस्कृति और रोजमर्रा की ज़िन्दगी हैI

नृवंश विज्ञान को सामाजिक जीवन और संस्कृति के एक विशिष्ट खाते के रूप में परिभाषित किया जाता हैI जो सामाजिक व्यवस्था में लोगों द्वारा वास्तव में किये जाने वाले कई विस्तृत टिप्पणियों के आधार पर होता हैI

नृवंशविज्ञानी विशिष्ट समूहों, समुदायों या संस्थानों का अध्ययन करते समय गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों शोध विधियों का उपयोग करते है, जो एक जटिल समाज का हिस्सा बनते हैI

7.2 **उद्देश्य**

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप

- नृवंश विज्ञान का अर्थ एवम परिभाषा समझ सकेंगे I
- नृवंश विज्ञान की विशेषताओं के बारे में जान पायेंगे।
- नृवंश विज्ञान का डिजाइन समझ सकेंगें।
- नृवंश विज्ञान की विधि और तकनीकों के बारे में जान पाएंगे।
- नृवंश विज्ञान अनुसंधान की प्रकृति एवम संचालन बता सकेंगे I
- नृवंश विज्ञान का महत्त्व बता सकेंगे I
- नृवंश विज्ञान के लाभ के बारे में जान पाएंगे I
- नृवंश विज्ञान के नुकसान के बारे में जान पाएंगे I

7.3 **नृवंश विज्ञान का अर्थ एवम परिभाषा**

नृवंश विज्ञान, नृविज्ञान अनुसंधान या ग्राम विज्ञान को सामाजिक अनुसंधान का एक तरीका माना जाता है जो सत्तर के दशक में उत्पन्न हुआ था I शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करने और शैक्षणिक स्तर पर समस्याओं को हल करने के लिए ग्रेट ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका और ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों में इसकी उत्पत्ति हुई हैI अनुसंधान ने हाल के दशकों में कई क्षेत्रों को सम्मिलित किया है नि: संदेह लोगो और उनके व्यवहार का अध्ययन कुछ ऐसा है जिसने समाजशास्त्रीय क्षेत्रों के मुद्दों को बेहतर ढंग से समझने के लिए शोधकर्ताओं का धयान आकर्षित किया है I
नृवंश विज्ञान शब्द ग्रीक भाषा के शब्द ethnos और grapho से मिलकर बना है, शब्द ethnos का अर्थ है ''जनजाति या लोग'' और grapho का अर्थ है " मै लिखता हूँ" या "वर्णन" I
इन शब्दो का मिलाकर अर्थ होता है "मैं जनजाति से लिखता हूँ" या "लोगों का वर्णन"I
नृवंश विज्ञान एक सामाजिक परिस्थिति में प्रतिभागियों के व्यवहार की जांच करता है और समूह के सदस्यों के इस तरह के व्यवहार की व्याख्या को भी समझता है। दीवान (2018) ने विस्तृत रूप से बताया कि यह व्यवहार उन बाधाओं को आकार दे सकता है जो प्रतिभागियों को उन स्थितियों के कारण महसूस होती हैं जो उस समाज में है,

जिसमें वे हैं। नृवंश विज्ञान, मानव समाजों और संस्कृतियों पर अनुभवजन्य डेटा की प्रस्तुति के रूप में,नृविज्ञान की जैविक, सामाजिक और सांस्कृतिक शाखाओं में अग्रणी था, लेकिन यह सामान्य रूप से समाजशास्त्रों में भी लोकप्रिय हो गया हैI नृवंश विज्ञान एक समग्र अध्ययन है और इसलिए इसमें एक इलाके का संक्षिप्त इतिहास, जलवायु और निवास का विश्लेषण शामिल है।

परिभाषाएं–

अर्नाल, डेल, रिंकोन और लेटोर के अनुसार, "नृवंश विज्ञान अनुसंधान एक विशिष्ट समाजशास्त्रीय सन्दर्भ के वर्णनात्मक और व्याख्यात्मक प्रश्नों का विश्लेषण और जोर देने के लिये सबसे लोकप्रिय तरीका हैI यह सामाजिक नृविज्ञान और शिक्षा के अध्ययन में व्यापक रूप से उपयोग किया गया है, यह मानवतावादी व्याख्यात्मक अनुसंधान के भीतर सबसे अधिक प्रासंगिक अनुसंधान विधियों में से एक माना जा सकता हैI"

रॉड्रिग्ज गोमेज के अनुसार, "नृवंश विज्ञान अनुसंधान विधि वह विधि है जिसके द्वारा आप एक विशेष सामाजिक इकाई के जीवन के मार्ग जानने के लिए एक विधि है, यह इकाई एक परिवार, एक वर्ग, एक संकाय या स्कूल हो सकता हैI"

वुड्स – अधिक सरल और सटीक परिभाषा में वुड्स ने इसे "व्यक्तियों के समूह के जीवन जीने के तरीके का वर्णन" के रूप में परिभाषित किया है I

हालांकि अलग –अलग वैज्ञानिकों ने अलग –अलग कथन है उन सभी में एक चीज समान है कि नृवंश विज्ञान के अध्ययन का उद्देश्य मनुष्य है, और एक समाज के सदस्य के रूप में उसका व्यवहार I

7.4 नृवंश विज्ञान की मुख्य विशेषताएं

डेल रिंकोन के अनुसार, सामाजिक अनुसंधान के एक रूप में नृवंशविज्ञान की विशेषताएं हैं:

घटना या एमिको चरित्र

- इसमें लोगों के उस समूह के प्रतिभागियों के "अंतः" दृष्टिकोण से सामाजिक घटनाओं की व्याख्या करना शामिल है। यह शोधकर्ता को यह समझने की अनुमति देता है कि सामाजिक जीवन क्या है.

- नृवंश विज्ञान में शोधकर्त्ता, समूह की मानसिक गतिविधियों के पैटर्न की तलाश करते है, यह उनके विचारों और विश्वासों को भाषा या अन्य गतिविधियों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है, और अपने समूह में कैसे व्यवहार करते को समझने का प्रयास किया जाता है।
- विवरण और व्याख्या के माध्यम से, शोधकर्त्ता समाज के सदस्य के रूप में देखी गई सामाजिक घटनाओं को जान सकते हैं। एमिक शब्द का अर्थ उन अंतरों से है जो एक ही संस्कृति में मौजूद हैं I
- अपेक्षाकृत स्थायी स्थायित्व,अपनी स्वीकृति और विश्वास प्राप्त करने के लिए शोधकर्त्ता को समूह में शामिल होना चाहिए। यह शोधकर्ता और समाज के सदस्यों के बीच संबंध बनाने की अनुमति देगा, एक ऐसा संबंध जो इसे समूह के विवरण से परिचित कराएगा I
- विशेषज्ञ के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वह जिस संस्कृति का अध्ययन कर रहा है, उसे समझे। इसके लिए, कई नृवंशविज्ञानियों ने पहले उस अनुभव को जीने का फैसला किया, क्योंकि इससे वे घटनाओं को देख सकते थे I

यह समग्र और प्रकृतिवादी है

- नृवंश विज्ञान में दो दृष्टिकोणों से देखे गए तथ्यों की सामान्य वास्तविकता का अध्ययन करें :
- पहली आंतरिक – जैसे की वह समूह का सदस्य था।
- दूसरा बाहरी – उस समाज के बाहरी व्यक्ति के रूप में शोधकर्त्ता की व्याख्या I

प्रेरक चरित्र

- अनुभव और अन्वेषण प्रतिभागी अवलोकन के माध्यम से सामाजिक परिदृश्य को जानने के लिए एक उपकरण हैं। इस रणनीति से आपको ऐसी जानकारी मिलती है जो वैचारिक श्रेणी उत्पन्न करती है.
- शोध का विचार मॉडल, परिकल्पना और व्याख्यात्मक सिद्धांतों के आधार पर उनका विश्लेषण करता है तथा सामाजिक घटनाओं के बीच नियमितता और संघों की खोज करता है.
- इस विधि में परिकल्पना के परीक्षण की बजाय सामाजिक घटनाओं की खोज पर जोर दिया गया है।

एक चक्रीय मॉडल का पालन

- नृवंशविज्ञान प्रक्रियाएं एक साथ ओवरलैप होती हैं। एकत्र किए गए डेटा और इसके स्पष्टीकरण से शोधकर्ता अधिक से अधिक नई जानकारी एकत्र करने के लिए काम करते हैं I

- इस विधि में मुख्य रूप से अनियंत्रित डेटा के साथ काम करना शामिल होता है। इस डेटा को विश्लेषणात्मक श्रेणियों के बंद सेट के सन्दर्भ में डेटा संग्रह के बिंदु पर कोडित नहीं किया गया था।
- डेटा संग्रह और व्याख्या के तरीकों की तुलना में क्षेत्र में निष्कर्षों को कैसे रिपोर्ट किया जाए, इस बारे में पद्धति संबंधी चर्चाएं अधिक ध्यान केंद्रित करती है।
- नृवंशविज्ञान या गुणात्मक अनुसंधान की एक विशिष्ट विशेषता यह है कि इसमें क्षेत्र अनुसंधान आवश्यक है; ये वास्तविक सामाजिक घटनाओं के अध्ययन से शुरू होती है और विश्लेषण की जाती हैं.

7.5 नृवंश विज्ञान डिजाइन

- नृवंशविज्ञान एक खोजी उपकरण है। शोधकर्ता इसे सामाजिक या सांस्कृतिक नृविज्ञान की एक शाखा मानते हैं, पहले इसका उपयोग आदिवासी समुदायों के विश्लेषण के लिए किया जाता था I
- हालांकि, यह वर्तमान में किसी भी समूह का अध्ययन करने के लिए लागू किया जाता है, क्योंकि यह एक सामाजिक घटना के संदर्भ पर ध्यान केंद्रित करता है I
- आमतौर पर नृवंशविज्ञान, रिपोर्ट अनुसंधान के सभी पहलुओं को एकीकृत करती है: इसे ध्यान में रखते हुए, रिपोर्ट में सैद्धांतिक और व्यावहारिक पृष्ठभूमि, उपयोग की गई विधियों और प्रक्रियाओं का विस्तृत विवरण, परिणाम और अंतिम निष्कर्ष शामिल होते हैI
- नृवंश विज्ञान डिजाइन का चयन करते समय कुछ महत्वपूर्ण बातों का ध्यान रखना चाहिए जैसे कि, घटना से संपर्क करने, अप्रत्याशित का सामना करने और आवश्यक जानकारी एकत्र करने के लिए एक खुली कार्य योजना को व्यवस्थित करने के लिए नृवंश विज्ञान अनुसन्धान को न्यूनतम और लचीला होना चाहिए.
- आपको यह जानना आवश्यक है कि प्रश्नों को कैसे बनाया जाए, कार्य के उद्देश्यों को कैसे निर्धारित किया जाए और अनुसंधान के क्षेत्र को अच्छी तरह से कैसे चुना जाए।.
- एक बार जब ये बिंदु स्पष्ट हो जाते हैं, तो नृवंशविज्ञानी अपने तरीकों और तकनीकों का मूल्यांकन और चयन करता हैI

7.6 **नृवंश विज्ञान विधि**

इस प्रकार के अनुसंधान में, आगमनात्मक विधियों का उपयोग किया जाना चाहिए। इसमें दो दृष्टिकोण हैं:

पहला- सिद्धांतों को तैयार करने के लिए देखे गए तथ्य, और

दूसरा - निष्कर्ष निकालने के लिए शोध का अध्ययन करता है I संक्षेप में, आगमनात्मक विधि विशेष से सामान्य में जाती है, इस प्रकार के अध्ययन में जिन मुख्य चरणों का पालन किया जाना चाहिए, उनमें निम्नलिखित शामिल हैं:

-जिस समूह में शोधकर्त्ता को शोध करना है, उस जगह पर उनके बीच रहकर सार्वजनिक, निजी, धार्मिक क्षेत्रों का संकेत देते हुए उस जगह की मैपिंग करनी चाहिए।

- समूह में रहकर ही शोधकर्त्ता को यह जानना चाहिए कि उस समूह की वंशावली, रिश्तेदारी और व्यक्तियों के बीच सम्बन्ध कैसे बनते है।

- अनौपचारिक साक्षात्कार का संचालन करें I

- औपचारिक साक्षात्कार आयोजित करेंI

- चर्चा समूहों को व्यवस्थित करेंI

- जीवन की कहानियाँ लीजिए: आत्मकथाएँ, व्यक्तित्व साक्षात्कार I

- समाज की उन मिथक और किवदंतियों को अनुसन्धान में शामिल करे जो उस समाज में गहरी बसी हैं।

- नृवंश विज्ञान का अध्ययन करने से यह पता चलता है कि संस्कृति कुछ विशिष्ट अवधारणाओं और अर्थो को कैसे समझती है। कभी –कभी एक ही शब्द का अलग –अलग जगहों पर अलग –अलग अर्थ होता है अतः नृवंशविज्ञानी उस समूह में रहकर उस समूह की संस्कृति को बेहतर समझ सकता है।

- यदि शोधकर्ता के लिए संभव हो तो उस संस्कृति का फ़ोटो व वीडियो भी लें।

- ऐसे मामले जिनमें डेटा उपलब्ध न हो तो, अपनी जाँच में जनगणना को शामिल करें।

- डेटा को सूक्ष्म करके संग्रहित करें।

7.7 **नृवंश विज्ञान की तकनीक**

7.7.1 प्रतिभागी अवलोकन-

यह जानकारी प्राप्त करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण तकनीक है। यह घटनाओं में शामिल लोगों के माध्यम से सामाजिक घटनाओं के विवरण और कथन पर आधारित है.

यह शोधकर्ता के अवलोकन पर आधारित है, जो पूछता है और जांच करता है कि क्या हुआ। लेकिन इसके लिए शोधकर्ता को समूह का विश्वास हासिल करना चाहिए और इसे एकीकृत करना चाहिए; इससे वह शोधकर्त्ता को एक अजनबी और घुसपैठिये के रूप में नहीं देखेंगे।

जब तक वे नृवंशविज्ञानियों के साथ अधिक सहज महसूस करते हैं, तब तक अधिक सहज और प्राकृतिक रूप से सामाजिक कार्य करेंगे। यहां तक कि नृवंशवैज्ञानिको और समूह के लोगों के बीच भावनाओं और संवेदनाओं का एक सम्बन्ध बन जायेगा, जो साक्षात्कार विधि के द्वारा डेटा एकत्र करने में मदद करेगा।

देखने का मतलब अवलोकन करना नहीं है, और यह प्रक्रिया केवल देखने के बारे में नहीं है। यह शोधकर्त्ता के प्रशिक्षण, तैयारी और शोध के डिजाइन में मदद करता है।

नृवंश विज्ञान अनुसन्धान में यह भी आवश्यक है कि उस समाज का हिस्सा बनने में शोधकर्त्ता को अपनी, खुद की मान्यताओं को खोए बिना उस संस्कृति में प्रवेश करना है।

दुर्खीम के अनुसार, दृश्य में आपको एक सामाजिक तथ्य चुनना चाहिए, अवलोकन के समय की योजना बनाएं, वर्णन करें कि क्या देखा गया है, नृवंश विज्ञान डेटा एकत्र करें और घटना में हर समय भाग लें।.

7.7.2 **औपचारिक साक्षात्कार**–

नृवंश विज्ञान में औपचारिक साक्षात्कार में शोधकर्त्ता और समूह के सदस्यों के बीच आमने – सामने की एक वार्तालाप होती है। यह एक नियोजित रणनीति है। इसे प्रश्नावली के माध्यम से संगठित और निर्देशित किया जाता है। इस प्रश्नावली को शोधकर्त्ता द्वारा पहले से तैयार किया जाता है। प्रश्नावली ऐसी होनी चाहिए कि उसके प्रश्नों द्वारा आपको उस समूह की संस्कृति और रीति –रिवाजों की विशिष्टताओं के बारे में पर्याप्त जानकारी मिल सके।

औपचारिक साक्षात्कार एक सहज वार्तालाप है। इसमें बातचीत और सुनने का संवाद है, इसलिए समूह के सदस्यों के साथ निकट सम्बन्ध स्थापित करने और विश्वास बनाने के लिए आँखों का संपर्क आवश्यक है।

7.7.3 सर्वेक्षण –

सर्वेक्षण विधि का उपयोग उन अध्ययनों में किया जाता है, जहाँ विश्लेषण की इकाई लोग होते है। इसमें एक संरचित प्रश्नावली होती है। जो विशिष्ट प्रश्नों पर आधारित होती है। ये प्रश्न खुले और बंद दोनों प्रकार के हो सकते है।

आपका डेटा किसी विशिष्ट स्थिति या घटना के साथ प्रत्येक व्यक्ति के व्यवहार, भावनाओं और विचारों के पैटर्न को प्रतिबिंबित कर सकता है. एक सर्वेक्षण करने के लिए, नमूना को चुना जाना चाहिए।

7.8 **नृवंश विज्ञान अनुसंधान की प्रकृति एवम संचालन**-

नृवंश विज्ञान में ,क्षेत्र में एकत्र किये गये डेटा और सामग्री का उपयोग एक प्रक्रिया को एक सिद्धांत विकसित करने में किया जाता है जिसमे कई साल लग सकते हैI जैसे ही नया डेटा उभरता है, पुराने डेटा और सिद्धांतों को समूह की संस्कृति और प्रथाओं की नई समझ और धारणा प्रदान करने के लिये बदल दिया जाता है इसलिए नृवंश विज्ञान एक सतत प्रक्रिया हैI नृवंश विज्ञान अनुसंधान का लक्ष्य लोगों के दिमाग में आयोजित नए सांस्कृतिक ज्ञान को स्थापित करना है, और यह ज्ञान परिणाम स्वरूप सामाजिक बातचीत ,आंतरिक भावनाओं और विरोधाभासों को कैसे प्रभावित करता हैI

किसी भी क्षेत्र की साइट नृवंश विज्ञान अनुसंधान के लिए एक व्यवस्था के रूप में काम कर सकती है उदाहरण के लिए, समाजशास्त्रियों ने स्कूलों, चर्चो, ग्रामीण और शहरी समुदायों में, विशेष रूप से सड़क के किनारों के आसपास, निगमों के भीतर और यहाँ तक की बार, ड्रग क्लब और स्ट्रिप क्लब में भी इस तरह का शोध किया हैI

नृवंश विज्ञान अनुसंधान का संचालन करने और एक नृवंश विज्ञान उत्पादन करने के लिए, शोधकर्त्ता आमतौर पर चुने हुए क्षेत्र में लम्बी अवधि में खुद को एम्बेड करते है वे ऐसा करते है, ताकि वे व्यवस्थित अवलोकन, साक्षात्कार और ऐतिहासिक और खोजी अनुसंधान में एक मजबूत डेटा सेट विकसित कर सकें ,जिसके लिए समान लोगों और सेटिंग्स के दोहराये जाने वाले सावधान अवलोकन की आवशयकता होती हैI

मानवविज्ञानी क्लिफोर्ड गिर्टर्ज ने इस प्रक्रिया को "मोटा विवरण" उत्पन्न करने के रूप में संदर्भित किया, जिसका अर्थ है कि एक विवरण जो सतह के नीचे खोदता हैI

7.9 **नृवंश विज्ञान का महत्त्व** –

नृवंशविज्ञानियों और सामाजिक वैज्ञानिकों के लिए नृवंश विज्ञान महत्त्वपूर्ण हैI जो लोगों के व्यवहार और बातचीत के लिए अग्रणी कई प्रश्नों की स्पष्ट समझ विकसित करने में मदद करता हैI यह किसी दिए गये समुदाय या संस्कृति के लोग कैसे व्यवहार करते है और क्यों करते है, के सवालों का जवाब देते है, और बातचीत करते हैI शोधकर्त्ता कई महत्वपूर्ण सवालों को एक अंदरूनी सूत्र के दृष्टिकोण से समझ सकते है, जिसे आमतौर पर ऐमिक परिप्रेक्ष्य कहा जाता हैI

आज की अनुसन्धान पद्धति में क्षेत्र व्यवस्था केवल सांस्कृतिक समुदायों तक सीमित नहीं है, बल्कि किसी भी क्षेत्र या साइट पर भी होती है, जो एक विशेष व्यवहार का गठन करती है। उदहारण के लिए डा. डी.एन.मजूमदार ने अपनी किताब रेसेस एंड कल्चर्स ऑफ़ इंडिया में भारत के कुछ राज्यों जैसे कि असम ,बंगाल ,बिहार ,चेन्नई ,मुम्बई ,मध्यप्रदेश ,आन्ध्रप्रदेश और उत्तर प्रदेश की कई जनजातियों पर शोध किया और उनके रहन -सहन ,रीति

-रिवाज ,खान –पान आदि के बारे में बारीकी से अध्ययन करके नृवंशविज्ञानी अनुसन्धान किया। इसमें उन्होंने असम की गारो ,मिकिर ,अबोर ,दाफला बंगाल और बिहार की पोलिया, मालेर, संथाल, मुंडा उड़ीसा और चेन्नई की खोंड, साओरा, लम्बाड़ी, सुगाली, कोटा मुंबई की भील, कतकरी और कोली मध्य प्रदेश के गोंड्स, कोय आंध्र प्रदेश के भात्रा, ध्रुवा, गाड़बा, चेंचू और उत्तर प्रदेश के थारू, बुक्सा, खासा, राजी और अन्य कई जनजातियों पर नृवंश विज्ञान अनुसन्धान किया और उनके दैनिक जीवन और बातचीत को व्यवस्थित रूप से अधययन किया और एक लिखित दस्तावेज तैयार किया। जो उन समुदायों के सामाजिक जीवन के रीती –रिवाजों और जीवन के तरीके पर प्रकाश डालता है।

ये महत्वपूर्ण मामले गहन अध्ययन के है। जो जलवायु परिवर्तन, वैश्वीकरण और प्रवास जैसे वैश्विक मुद्दों को सम्बोधित करते हुए एक विशेष समुदाय के बारे में जागरूकता पैदा करने के लिए उत्कृष्ट साधन के रूप में काम करते है।

7.10 **नृवंश विज्ञान के लाभ**

संस्कृतियों की धारणा और मूल्य की सराहना करते हुए नृवंश विज्ञान लोगों के सामाजिक जीवन में अद्वितीय अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। अन्य शोध विधियां इस बारे में गहराई से जानकारी देने में उतनी सटीक नहीं हो सकती है, इसलिए नृवंश विज्ञान सबसे उपयुक्त विधि है। नृवंश विज्ञान विभिन्न लोगों या समुदायों के नकारात्मक पूर्वाग्रह या रूढ़ियों (जैसे -सतीप्रथा ,बालविवाह) से छुटकारा पाने में मदद करता है। इससे सामाजिक समरसता बढ़ती है। अनुसन्धान के माध्यम से, नृवंशविज्ञानियों ने विभिन्न आबादी की संस्कृतियों और प्रथाओं की एक समृद्ध समझ विकसित की है। इससे एक समुदाय के पास मौजूद खजाने के लिए रोशनी देने में मदद मिलती है। नृवंश विज्ञान एकल दृष्टिकोण के बजाय समूह /संस्कृति के समग्र दृष्टिकोण को बढ़ावा देता है। नृवंश विज्ञान सिद्धांतो के साथ सम्बन्ध प्रदान करता है, जैसे कि एकत्रित सामग्री की तुलना की जा सकती है, विश्लेषण किया जा सकता है और डेटा को निर्देशित किया जा सकता है।

7.11 नृवंश विज्ञान के नुकसान-

नृवंशविज्ञानियो ने चुनौतियों का असंख्य सामना किया जैसे कि उन लोगों के बीच विश्वास हासिल करने में कठिनाई जिनके बीच वे अनुसन्धान कर रहे थे। उन लोगों के बीच तालमेल स्थापित करने और उनके द्वारा स्वीकार किये जाने में लंबा समय लग सकता है।

अनुसन्धान की लम्बाई के आधार पर, फंडिंग एक चुनौती साबित हो सकती है, जो अध्ययन में होने वाली देरी का एक प्रमुख कारण है।

नृवंशविज्ञानी के मन में अगर पूर्वाग्रह मौजूद है, तो वह अध्ययन से प्राप्त अंतर्दृष्टि की सटीकता को बदल सकता है। शोधकर्त्ता और समुदाय के सदस्यों के बीच परस्परिक टकराव और मुद्दे उत्पन्न हो सकते है।
अंत में, एक नृवंश विज्ञान की कथात्मक प्रकृति डेटा की व्याख्या को पूर्वाग्रह कर सकती है।

7.12 सारांश –

नृवंश विज्ञान एक ऐसी अनुसन्धान पद्धति है जिसमें शोधकर्त्ता द्वारा किसी विशेष समुदाय या जनजाति में रहकर उसके बारे में सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त की जाती है। उस समूह या जनजाति के लोग किस प्रकार रहते है, उनका खानपान कैसे है, उनके रीती –रिवाज़ कैसे है तथा उनका व्यवसाय क्या है आदि के बारे में जानकारी प्राप्त करते है। इस अनुसन्धान में अवलोकन, साक्षात्कार तथा सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया जाता है। यह एक लम्बे समय चलने वाली प्रक्रिया है।

नृवंश विज्ञान अनुसन्धान समूह में चल रहे नकारात्मक पूर्वाग्रह व रूढ़ियों से छुटकारा दिलाने के लिए समूह के सदस्यों की सोच को विकसित करता है। मनोविज्ञान में इसका प्रयोग किसी समुदाय विशेष की मनःस्तिथि को समझने में सहायता करता है।

7.13 शब्दावली –

नृवंश विज्ञान - मानव – जाति का अध्ययन करने वाला विज्ञान

अनुसन्धान – किसी घटना या विषय के मूल कारणों या रहस्यों का पता लगाने की क्रिया

एम्बेड – अंतःस्थापित करना

अवलोकन – किसी उद्देश्य से ध्यान पूर्वक देखने की क्रिया या भाव

साक्षात्कार – किसी व्यक्ति से कुछ जानकारी पाने के लिए की जाने वाली पूछताछ, विशेषकर किसी प्रतिभागी से

ऐतिहासिक – जो इतिहास में दर्ज किया जा सके

शोधकर्त्ता – वह व्यक्ति जो शोधकार्य कर रहा हो

संस्कृति- एक समाज की विशेष परम्परा

वैश्वीकरण – स्थानीय या क्षेत्रीय वस्तुओं या घटनाओं के विश्व स्तर पर रूपांतरण की प्रक्रिया

जागरुकता – किसी विषय में सचेत या चौकन्ना होने की स्तिथि या भाव

डेटा संग्रह – तथ्य समूह या सूचना संग्रह

एकल दृष्टिकोण –किसी एक ही वस्तु को देखने या विषय पर विचार करने की वृत्ति या ढंग

समग्र दृष्टिकोण – किसी तथ्य के बारे में सम्पूर्ण दृष्टि से विचार करना

विश्लेषण –किसी विषय को इस दृष्टि से छानबीन करने की क्रिया कि उनका तथ्य या वास्तविक रूप सामने आ जाये

जनजाति – आदम संस्कारों को बचाकर रखने वाली मानव जाति

7.14 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न -

नृवंश विज्ञान के सन्दर्भ में सत्य /असत्य कथन बताएं–

I. नृवंश विज्ञान अनुसंधान का लक्ष्य लोगों के दिमाग में, आयोजित नए सांस्कृतिक ज्ञान को स्थापित करना है। सत्य /असत्य

II. नृवंश विज्ञान अनुसंधान साक्षात्कार व अवलोकन विधि का उपयोग किया जाता है। सत्य /असत्य

III. नृवंश विज्ञान अनुसंधान एक कम अवधि में पूर्ण होने वाली प्रक्रिया है। सत्य /असत्य

IV. नृवंश विज्ञान अनुसंधान में शोधकर्त्ता स्वयं को उस समाज में एम्बेड करते है। सत्य /असत्य

V. नृवंश विज्ञान अनुसंधान में अगनात्मक विधि का उपयोग किया जाता है। सत्य /असत्य

रिक्त स्थान की पूर्ति करें।

I. नृवंशविज्ञानएक_______________उपकरणहै।

II. नृवंशविज्ञान एक_______________अनुसंधानहै।

III. नृवंशविज्ञान पूरीतरहसे______________वर्कआधारितहै।

IV. नृवंशविज्ञान केअध्ययनकाविषयक्षेत्र______________समाजहै।

7.15 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- एंडरसन, जी (1989) शिक्षा में महत्वपूर्ण नृवंश विज्ञान : मूल ,वर्तमान स्तिथि और नई दिशाएं।
- अर्नल ,जे। डेलरिंकोन ,डी। और लेटोर,ए। (1992) शैक्षिक अनुसन्धान। शैक्षिक अनुसन्धान मेटाबॉलिज़्म।
- Agar, M. Speaking of Ethnography, Beverly Hills, Sage Publications, 1986.
- Atkinson, P., The ethnographic imagination: Textual constructions of reality, London: Routledge, 1990.
- Dewan M. (2018) Understanding Ethnography: An ‘Exotic’ Ethnographer’s Perspective. In: Mura P., Khoo-Lattimore C. (eds) Asian Qualitative Research in Tourism. Perspectives on Asian Tourism. Springer, Singapore)
- "Ethnology" at dictionary.com.
- Majumdar, D.N (1961) Races and Cultures of India,ASIA Publishing House,Lucknow.

7.16 निबन्धात्मक प्रश्न-

I. नृवंश विज्ञान का अर्थ एवम परिभाषा के साथ उसके महत्त्व को समझाइये?
II. नृवंश विज्ञान की प्रकृति एवम संचालन के साथ उसके डिज़ाइन की व्याख्या कीजिये?
III. नृवंश विज्ञान की तकनीक के साथ उसके लाभ व नुकसान का वर्णन कीजिये?
IV. नृवंश विज्ञान का अर्थ, विशेषताओं तथा विधि का उदाहरण सहित वर्णन कीजिये?

इकाई– 8 आधारभूत सिद्धांत (Grounded Theory)

इकाई संरचना-

8.1 परिचय

8.2 उद्देश्य

8.3 आधारभूत सिद्धांत के परिप्रेक्ष्य

8.4 आधारभूत सिद्धांत के मूललक्ष्य

8.5 आधारभूत सिद्धांत की परिभाषा

8.6 आधारभूत सिद्धांत अनुसंधान करने के उद्देश्य

8.7 आधारभूत सिद्धांत के तरीके

8.8 आधारभूत सिद्धांत के चरण

8.8.1 मेमो

8.8.2 आधारभूत सिद्धांत में क्रमबद्धता

8.8.3 आधारभूत सिद्धांत में लेखन

8.9 आधारभूत सिद्धांत में कोडिंग के प्रकार

8.9.1 चयनात्मक कोडिंग

8.9.2 ओपनिंग कोडिंग

8.9.3 अक्षीय कोडिंग

8.10 आधारभूत सिद्धांत की प्रासंगिकता

8.11 आधारभूत सिद्धांत के लाभ

8.12 आधारभूत सिद्धांत की आलोचना

8.13 सारांश

8.14 शब्दावली

8.15 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

8.16 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

8.17 निबंधात्मक प्रश्न

8.1 परिचय

गुणात्मक अनुसंधान तकनीक में आधारभूत सिद्धांत प्रमुख रूप से उपयोग किया जाता है। आधारभूत सिद्धांत गुणात्मक अनुसंधान के मूल दृष्टिकोण में से एक है। यह एक शोध दृष्टिकोण है।, जिसमे डेटा संग्रह और उस डेटा का विश्लेषण एक साथ होते है। प्रत्येक भाग दूसरे को सूचित करता है, ताकि अध्ययन के तहत सिद्धांतो का निर्माण किया जा सके। आधारभूत सिद्धांत लचीले दिशानिर्देश प्रदान करता है , जो खुले तौर पर आगमनात्मक डेटा की खोज और विश्लेषण के साथ शुरू होता है। यह गुणात्मक अनुसंधान का एकमात्र तरीका है ,कि वह जब और जैसे आवश्यक हो मात्रात्मक डेटा का भी उपयोग कर सकता है। आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण का उद्देश्य डेटा एकत्र करना है, और टेक्स्ट बेस से डेटा की व्याख्या करना (उदाहरण के लिए फील्ड नोट्स का एक संग्रह या वीडियो रिकॉर्डिंग). व्याख्या करने की प्रक्रिया के बाद, डेटा बेस को विभिन्न चरों में वर्गीकृत किया जाता है। और फिर इन चरों के बीच अंतर्संबंध, विश्लेषण और अध्ययन किया जाता है। चरों को विभाजित करने के लिए साहित्य का ज्ञान और चर को बनाने के लिए तकनीक का चयन भी उतना ही महत्वपूर्ण है। चर का विश्लेषण और व्याख्या करने की क्षमता को "सैद्धांतिक संवेदनशीलता " कहा जाता है। तथा सिद्धांतकार को इस संवेदनशीलता को जोर देने और बढ़ाने की जरुरत है।

आधारभूत सिद्धांत का दृश्टिकोण मूल रूप से समाजशास्त्री बर्नी ग्लेसर और एन्सेलाम स्ट्रॉस द्वारा 1960 में विकसित किया गया था। शुरुवात से ही आधारभूत सिद्धांत ने प्रत्यक्षवाद, व्यवहारिकता और प्रतीकात्मक अंतः क्रियावाद में ज्ञानमीमांसा विज्ञान की जड़ों को मिलाया था। हालाँकि ग्लेसर और स्ट्रॉस के आधारभूत सिद्धांत ने 1960 के दशक के सामाजिक मुख्यधारा के सामाजिक अनुसंधान की दिशा में एक महत्वपूर्ण रुख अपनाया उसी समय उन्होंने आधारभूत सिद्धांत की वैज्ञानिक वैधता का तर्क देते हुए सकारात्मक शब्दावली और सकारात्मकता के प्रवचन को शामिल किया।

आधारभूत सिद्धांत प्रक्रिया शुरू करने के लिए, आपको निम्न बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

- शोध के क्षेत्र की पहचान करें।

- पूर्व निर्धारित सिद्धांतो से बचें और केवल डेटा पर ध्यान केंद्रित करें।

- सैद्धांतिक संवेदनशीलता का उपयोग करें।

- डेटा में सूक्ष्म संदेशों और अर्थों के बारे में जागरूक रहें।

जब आप सैद्धांतिक संतृप्ति तक पहुँच गए है। अर्थात वह बिंदु जहाँ आपने अपने डेटा का नमूना और विश्लेषण किया है, जब आपने अपने सभी सिद्धांतों को समाप्त किया है, और पूरे डेटा को उजागर किया है। उसके पश्चात् अनुसंधान समाप्त हो जाता है।

यह इकाई आधारभूत सिद्धांत के लक्ष्यों और दृष्टिकोणों से सम्बंधित है। इस इकाई में आगे आधारभूत सिद्धांत के तरीकों और उपयोग में लायी जाने वाली तकनीकों के बारे में बताया गया है। इस इकाई में आधारभूत सिद्धांत के निर्माण में उपयोग किये जाने वाले चरणों की भी चर्चा की जाएगी। यह यूनिट आधारभूत सिद्धांत की अवधारणा को स्पष्ट करने की कोशिश करता है, और इस सिद्धांत से सम्बंधित अन्य तथ्यों तथा सैद्धांतिक दृष्टिकोणों पर चर्चा करेंगे।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप निम्न कार्य कर सकेंगे।

- आधारभूत सिद्धांत के मूल दृष्टिकोण का वर्णन कर सकेंगे।
- आधारभूत सिद्धांत के लक्ष्यों और परिप्रेक्ष्य की व्याख्या कर सकेंगे।
- आधारभूत सिद्धांतो का उपयोग करके परम्परागत सिद्धांतो का उपयोग करने वाली पीढ़ी के लिए लागू विभिन्न तरीकों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- आधारभूत सिद्धांत पद्धति के विभिन्न चरणों का वर्णन कर सकेंगे।
- अनुसंधान के क्षेत्र में आधारभूत सिद्धांत के महत्त्व को समझा पाएंगे।

8.3 आधारभूत सिद्धांत के परिप्रेक्ष्य

आधारभूत सिद्धांत, शोधकर्त्ता को एक दिशा प्रदान करता है, और उन्हें नए सिद्धांत उत्पन्न करने और मौजूदा सिद्धांतो को संशोधित करने के निर्देश देता है। आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण की व्याख्या और निष्कर्ष अधिक विश्वसनीय है, क्योंकि यह कई स्रोतों से एकत्रित आंकड़ों पर आधारित है। यह सिद्धांत परिवर्तनशील परिप्रेक्ष्य के बजाय समान मामलों (केसेस) को विश्लेषण के लिए लेता है। चयनित मामले चरों पर समान है, उन मामलों के चर जो मामले प्रकृति में तो समान है परन्तु उनके परिणाम भिन्न है। आधारभूत सिद्धांतकार /शोधकर्त्ता चयनित मामलों में से उन मामलों को लेते है जिनमें समान चर के भिन्न परिणाम आते है, उनकी तुलना करके समान चरों के भिन्न परिणामों के कारणों का पता लगाते है तथा उन कारणों का विश्लेषण करते है।

8.4 आधारभूत सिद्धांत के मूल लक्ष्य

- आधारभूत सिद्धांत व्यवस्थित चरणों की एक श्रृंखला होती है, जिसमें कई स्रोतों से डेटा एकत्र किया जाता है जो परिणामस्वरूप एक अच्छा सिद्धांत प्रदान करने का आश्वासन देता है।
- आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण उस प्रक्रिया पर जोर देता है जिसके द्वारा सिद्धांत का मूल्यांकन किया जाता है, यह सिद्धांत की गुणवत्ता को निर्धारित करता है।
- आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण सैद्धांतिक संवेदनशीलता को बढ़ाने पर भी जोर देते है।
- आधारभूत सिद्धांत का एक लक्ष्य वैचारिक विचारों के आधार पर परिकल्पना तैयार करना है।
- पूछे गये प्रश्नों के आधार पर शोधकर्त्ता यह खोज करने की कोशिश करता है कि प्रतिभागियों की मुख्य चिंता क्या है ,और वे इसे हल करने के लिए कैसे लगातार प्रयास करते है।
- इस सिद्धांत का उद्देश्य उन अवधारणाओं को उत्पन्न करना है ,जो लोगों के कार्यो की व्याख्या समय और स्थान की परवाह किये बिना करते है आधारभूत सिद्धांत का वर्णनात्मक भाग मुख्य रूप से अवधारणाओं को स्पष्ट करने के लिए है।

8.5 आधारभूत सिद्धांत की परिभाषा

ग्लेसर (1998) के शब्दों में,"आधारभूत सिद्धांत (Grounded Theory) बहु भिन्नरूपी है। यह क्रमानुसार, अनन्तर, एकसाथ, आकस्मिक और पूर्व निर्धारित होता है।"

"आधारभूत सिद्धांत एक आगमनात्मक कार्य प्रणाली है। जो सिद्धांत निर्माण के उद्देश्य के लिये गुणात्मक डेटा को इक्टठा करने, संश्लेषित करने, विश्लेषण करने और अवधारणा करने के लिये व्यवस्थित दिशा निर्देश प्रदान करता है।"(International Encyclopedia of Social & Behavioural Sciences 2001).

"आधारभूत सिद्धांत का परिणाम, तथ्यों की सूचना नहीं बल्कि अवधारणाओं या वैचारिक परिकल्पना जो कि अनुभवजन्य डेटा से विकसित हुई है, के बीच सम्बन्ध के बारे में संभावना व्यक्त करना है।"(ग्लेसर 1998)

8.6 आधारभूत सिद्धांत अनुसंधान करने के उद्देश्य

जब आधारभूत सिद्धांत का अध्ययन करते है, तो शोधकर्ताओं का लक्ष्य व्यक्तिगत, सामूहिक ,सामाजिक और मनोवैज्ञानिक प्रोसेस की जांच करना होता है। जैसे कि किसी विशेष सामाजिक व्यवस्था में रोजमर्रा की जिंदगी, संगठनात्मक परिवर्तन, पहचान परिवर्तन, कार्यस्थल प्रथाओं को बनाए रखना ,सामाजिक समूहों में समस्या को सुलझाने की प्रक्रिया और जीवन परिवर्तनों के साथ प्रतिक्रिया करना और मुकाबला करना। आधारभूत सिद्धांत में शोधकर्त्ता इस बात पर ध्यान केंद्रित करते है, कि लोग उन स्थितियों में क्या करते है जिनमें वे शामिल है। उनके द्वारा किये जाने वाले कार्यो का अर्थ आधारभूत सिद्धांत अनुसंधान के संचालन के लिए कई मैनुअल अलग और कम या अधिक कठोर दिशानिर्देश प्रदान करते है।

रचनाकार आधारवादी सिद्धांतकारों के रूप में, हम अपनी पद्धतिगत रणनीतियों को कठोर नुस्खे के बजाय लचीले दिशानिर्देशों के रूप में देखते है। दशकों से आधारभूत सिद्धांत ने कई सम्बंधित संस्करणों को जन्म दिया है, उनमें से कुछ मूल से बहुत अलग है।

ब्रायंट और चामार्ज (2007B) लुडविग विट्गेंस्टाइन के अनुसार, "आधारभूत सिद्धांत को परिवार के तरीकों के रूप में देखते है। इस प्रकार वे आधारभूत सिद्धांत के विभिन्न दृष्टिकोणों को परिवार के 'सदस्यों 'और साथ ही मतभेदों और विवादों के बीच समानता के साथ देखते है।"

चामार्ज (2010:11) आधारभूत सिद्धांत के संस्करणों के बीच अभिसरण के बिंदुओं को इस प्रकार स्पष्ट करता है।

1. एक पुनरावृत प्रक्रिया में डेटा संग्रह और विश्लेषण को एक साथ संचालित करें।
2. विषयों और संरचना के बजाय कार्यों और प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण करें।
3. तुलनात्मक तरीकों का प्रयोग करें।
4. नई वैचारिक श्रेणियों को विकसित करने की सेवा में डेटा को (उदाहरणों और विवरणों) पर आकर्षित करें।
5. व्यवस्थित डेटा विश्लेषण के माध्यम से आगमनात्मक श्रेणियों का विकास करना।
6. सिद्धांत के वर्णन के बजाय सिद्धांत निर्माण पर जोर दे या वर्तमान सिद्धांतों का अनुप्रयोग करें।
7. सैद्धांतिक नमूनों को संलग्न करें।
8. अध्ययन की गयी श्रेणियों या प्रक्रियाओं में भिन्नता खोजें।
9. एक विशिष्ट अनुभवजन्य विषय को कवर करने के बजाय एक श्रेणी विकसित करना।

8.7 आधारभूत सिद्धांत के तरीके

गुणात्मक शोध के अन्य तरीकों के विपरीत आधारभूत सिद्धांतकार टेपिंग और इंटरव्यू के माध्यम से डेटा एकत्र करने में विश्वास नहीं करते बल्कि वह इन माध्यमों को समय की बरबादी समझते है। आधारभूत सिद्धांत की प्रक्रिया त्वरित और तेज़ होती है। जिसमें शोधकर्त्ता फील्ड –नॉट इंटरव्यू द्वारा डेटा की सीमा निर्धारित करता है और साथ ही उन प्रासंगिक अवधारणाओं को उत्पन्न करता है। जो डेटा के साथ फिट होते है और यह समझाने का कार्य करते है, कि प्रतिभागी अपनी मुख्य चिंता को हल करने के लिए क्या कर रहें है। इस सिद्धांत को लिखने से पहले शोधकर्ता इसके बारे में अपनी पूरी प्रेरक ऊर्जा के साथ चर्चा करते है। चर्चा और वार्ता या तो प्रशंसा या आलोचना प्रस्तुत कर सकती है, और दोनों प्रेरक ड्राइव को कम करते है। जो अवधारणाओं और सिद्धांत को मेमो लिखने के लिए परिष्कृत और विकसित करते है। (ग्लेसर 1998)

डेटा आधारभूत सिद्धांत की एक मौलिक सम्पत्ति है। जिसका अर्थ यह है कि एक निश्चित अध्ययन क्षेत्र में शोधकर्त्ता को शोध करते समय जो कुछ भी मिलता है वह डेटा है न केवल साक्षात्कार या अवलोकन बल्कि हर वो अवधारणा जो शोधकर्त्ता को सिद्धांत बनाने में मदद करती है, वह डेटा है। फील्डनोट्स, अनौपचारिक साक्षात्कार व्याख्यान, सेमिनार, विशेषज्ञ समूह बैठक, समाचारपत्र, लेख, इंटरनेट मेल सूचियां यहाँ तक कि टेलीविज़न शोज तथा दोस्तों के साथ बातचीत आदि भी आ सकते है।

एक शोधकर्त्ता के लिए अध्ययन के क्षेत्र को अधिक जानने के लिए यह एक अच्छा विचार है, और अगर संभव हो सके तो शोधकर्त्ता को स्वयं का साक्षात्कार करना चाहिए, और उस साक्षात्कार को अन्य साक्षात्कारों की तरह कोड करना चाहिए तथा अन्य डेटा के साथ उसकी तुलना करनी चाहिए और उससे अवधारणा उत्पन्न करनी चाहिए।

स्वयं का साक्षात्कार करने से शोधकर्त्ता को वैचारिक स्तर पर अंतर्दृष्टि (Insight) प्राप्त होती है, और वैचारिक स्तर से अधिक ज्ञान प्राप्त होता है। क्योंकि आधारभूत सिद्धांत वैचारिक स्तर के डेटा के आलावा किसी और डेटा के साथ कार्य नहीं करता।

8.8 आधारभूत सिद्धांत के चरण

आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण निम्नलिखित व्यवस्थित कदम के आधार पर सिद्धांतो को उत्पन्न करने में मदद करता है। -

8.8.1 मैमोइंग (Memoing) –

शोधकर्त्ता का पहला उद्देश्य मेमो के रूप में डेटा एकत्र करना है। मेमो लघु नोट्स का एक रूप है, जिसे शोधकर्त्ता लिखते है और तैयार करते है। ये मेमो डेटा के एक स्रोत के रूप में कार्य करते है जो आगे चलकर अन्य प्रक्रियाओं और व्याख्याओं में रखे जाते है। ये छोटे नोट्स या मेमो तीन तरीकों से तैयार किये जा सकते है।

(अ) सैद्धांतिक नोट (Theoretical Note) – नोट्स का यह रूप उस पूर्ण विवरण को बताता है कि कैसे एक शाब्दिक डेटा आधार साहित्य के मौजूदा अध्ययन से सम्बंधित है। यह नोट्स लगभग एक से पांच पेज के होते है और ऐसे ही कई सैद्धांतिक नोट्स का एकीकरण करके अंतिम सिद्धांत या रिपोर्ट तैयार करते है।

(ब)फील्डनोट (Field Note)- यह फील्ड नोट्स में जब शोधकर्त्ता जनसंख्या /संस्कृति या समुदाय के साथ सक्रिय रूप से भाग लेता है ,तब तैयार किये जाते है। यह नोट्स व्यवहार ,बातचीत ,घटनाओं या स्थितियों के अवलोकन को देखकर शोधकर्त्ता तैयार करता है तथा ऐसे कार्यों के होने का कारण भी शोधकर्त्ता द्वारा नोट किया जाता है।

(स)कोडनोट्स (Code Notes)- शोधकर्त्ता या आधारभूत सिद्धांतकार नामकरण ,लेबलिंग या चीजों को वर्गीकृत करना ,गुणों और घटनाओं के द्वारा भी नोट्स तैयार कर सकता है। कोड नोट्स वे नोट्स होते है ,जो इस तरह के लेबलिंग के कोड पर चर्चा करते है। ये कोड नोट्स आगे एक अंतिम रिपोर्ट के गठन के स्रोत के रूप में कार्य करते है। इसके अलावा ये कोड नोट्स एक आधारभूत सिद्धांतकार के लिए एक पाठ या एक मामले का विश्लेषण करने के लिए एक गाइड के रूप में भी कार्य करते है।

8.8.2 आधारभूत सिद्धांत में क्रमबद्धता (Sorting in Grounded Theory) –एक बार जब संक्षिप्त नोट्स या मेमो तैयार हो जाते है तो एकत्रित जानकारी (या डेटा) को उचित क्रम में व्यवस्थित करने के लिए क्रमबद्ध किया

जाता है। क्रमबद्धता सभी डेटा को उचित क्रम में, जिससे सूचनाओं और विचारों का उचित जुड़ाव हो सके रखने में मदद करता है। इस क्रमबद्धता के द्वारा शोधकर्त्ता को कुछ और प्रासंगिक सूचना और विचारों की जानकारी मिल जाती है, जो उसे मेमो तैयार करते वक्त नहीं मिल पाई थी।

8.8.3 आधारभूत सिद्धांत में लेखन

मेमो को क्रमबद्ध करने के बाद, सिद्धांत तैयार करने की दिशा में अगला चरण है

"लेखन" -:

आधारभूत सिद्धांतकार एकत्रित जानकारी को व्यवस्थित करता है , सम्बंधित करता है तथा फिर उन्हें शब्दों में लिखता है। इस प्रकार इस चरण में शोधकर्त्ता प्रासंगिक डेटा को आकार देने के साथ –साथ अर्थ देने की भी कोशिश करता है। यह एक महत्वपूर्ण चरण कहा जा सकता है। क्योंकि इसमें शोधकर्त्ता अपने स्वयं के दृष्टिकोण के आधार पर एकत्रित डेटा की व्याख्या करता है। एकत्रित जानकारी को मौजूदा प्रासंगिक साहित्य के साथ भी जोड़ा जाता है, ताकि एक विद्वतापूर्ण सिद्धांत बन सकें।

8.9 आधारभूत सिद्धांत में कोडिंग के तरीके

आधारभूत सिद्धांतवादी घटनाओं का वर्गीकरण और विश्लेषण करके तैयार किये गए कोड नोट्स की सहायता से सिद्धांत के अर्थ की पहचान करने की कोशिश करते है। कोड नोट्स की तैयारी तीन तरीकों से की जा सकती है।

8.9.1 चयनात्मक कोडिंग (Selective Coding)-

इस प्रकार की कोडिंग में आधारभूत सिद्धांतवादी सभी उपलब्ध कोडिंग श्रेणियों में से एक प्रमुख श्रेणी का चयन करता है, और उस चयनित प्रमुख श्रेणी के साथ अन्य श्रेणियों को सम्बंधित करने का प्रयास करता है। इस तरह आधारभूत सिद्धांतवादी यह विश्लेषण करने की कोशिश करता है कि अन्य श्रेणियाँ प्रमुख श्रेणी को किस प्रकार प्रभावित कर रही है या किस प्रकार प्रमुख श्रेणी अन्य सम्बंधित श्रेणियों पर प्रभाव डाल रहीं है।

8.9.2 ओपन कोडिंग (Open Coding) -

यह उन घटनाओं को पहचानने, लेबल करने और विश्लेषण करने की प्रक्रिया है, जो उस सिद्धांत में पाई गई है। आधारभूत सिद्धांतवादी सामान्यीकरण के आधार पर नामों, घटनाओं या गुणों को सामान्य श्रेणियों या आयामों में वर्गीकृत करते है।

8.9.3 अक्षीय कोडिंग (Axial Coding)-

यह श्रेणियों या गुणों को एक –दूसरों के साथ आगमनात्मक सोच की मदद से सम्बंधित करने की एक प्रक्रिया है। इसमें आधारभूत सिद्धांतकारों की कोशिश चरों के बीच कार्य –कारणों का सम्बन्ध जानने की होती है। यह वह कोड है जो अन्य घटनाओं के होने के कारण है। आधारभूत सिद्धांतवादी "कारणकोड "और "सन्दर्भकोड " की व्याख्या घटना के 'परिणामों ' पर अधिक रूचि दिखाये बिना करते है।

8.10 आधारभूत सिद्धांत की प्रासंगिकता

आधारभूत सिद्धांत की मदद से जो डेटा या जानकारी एकत्र करके जो सिद्धांत उत्पन्न किया गया है, वो महत्वपूर्ण है, क्योंकि–

I. आधारभूत सिद्धांतकार विभिन्न स्रोतों के आधार से एकत्र किये गए डेटा के आधार पर अपनी रिपोर्ट तैयार करते है। जो सिद्धांत की विश्वसनीयता और वैधता को बढ़ाते है।
II. आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण तथ्यों की खोज का अवसर देता है, और उन तथ्यों के पीछे के कारण का विश्लेषण करता है।
III. यह एक अधिष्ठापन प्रकार का अनुसन्धान है। जिसमें अवलोकन और डेटा एकत्रण प रआधारभूत सिद्धांत आधारित है।
IV. आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण यह भी निर्दिष्ट करने के लिए एक आधार प्रदान करता है, कि कैसे नई जानकारियों के मद्देनजर ज्ञानकोष को बदला जाना चाहिए।
V. आधारभूत सिद्धांत डेटा अक्सर डेटा को वर्गीकृत करता है, जो आगे परिणामों के आयोजन और रिपोर्टिंग के लिए एक आधार बनाता है।

8.11 आधारभूत सिद्धांत के लाभ

आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण की महत्ता के आधार पर आधारभूत सिद्धांत अनुसन्धान के बहुत लाभ है। निम्नलिखित आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण के कुछ महत्वपूर्ण निहितार्थ है -

I. आधारभूत सिद्धांत का उपयोग अक्सर नीतियों और कार्यक्रमों के निर्माण तथा अनुसन्धान मूल्यांकन में किया जाता है। क्योंकि यह अनुत्तरित प्रश्नों को अधिक प्रभावी ढंग से हल करने में मदद कर सकता है।
II. आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण का उपयोग उपभोक्ताओं की माँग और मौजूदा बाजार की प्राथमिकताओं के विश्लेषण के लिए भी किया जा सकता है।
III. आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण का उपयोग उत्पाद की स्तिथि और अवसरों का विज्ञापन का विश्लेषण करने के लिए भी किया जा सकता है।

IV. यह एक अच्छा सैद्धांतिक दृष्टिकोण है, जिसका उपयोग शिक्षा प्रबंधन, महिलाओं के अध्ययन, सूचना अध्ययन, राजनीति और समुदाय आदि क्षेत्र में किया जा सकता है।

V. यह मानव मनोविज्ञान और अनुभव को समझने , विश्लेषण और वर्णन करने में मदद करता है।

8.12 आधारभूत सिद्धांत की आलोचना

मूलरूप से आधारभूत सिद्धांत एक दृष्टिकोण है जो डेटा का व्यवस्थित विश्लेषण करता है, और एक सिद्धांत उत्पन्न करता है। लेकिन सिद्धांत के विपरीत यह संभावना भी है, कि डेटा संग्रह और विश्लेषण करने में शोधकर्त्ता की पूर्वधारणाएं भी शामिल हो सकती है।इसके अलावा इसमें कोई संदेह नहीं है, कि कॉर्पस डेटा का संग्रह अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करने में मदद करता है। फिर भी इस दृष्टिकोण में सामग्री की वैधता संदिग्ध है।
हालांकि आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण को अभी भी सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में प्रमुख कार्य प्रणाली के रूप में और व्यापक तौर पर उपयोग किया जाता है। यह व्यवस्थित रूप से सिद्धांत उत्पन्न करने के लिए एक प्रवृति है।

8.13 सारांश

यह कहा जा सकता है कि आधारभूत सिद्धांत व्यवस्थित रूप से एक कोष (जो एक एकत्रित द्रव्यमान है।) के आधार पर एक सिद्धांत तैयार करने के तरीकों में से सबसे उत्तम तरीका है। सिद्धांतकारों द्वारा एकत्र किये गये डेटा को व्यवस्थित रूप से विश्लेषित करके व्याख्या की जाती है। जो रिपोर्ट का गठन करती है। जो अंततः सिद्धांतो का निर्माण करता है। सिद्धांतो का गुण ,व्यवहार और घटनाओं की रूपरेखा के आधार के रूप में परिभाषित किया जा सकता है और उनकी व्याख्या की जा सकती है। आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण का मूल उद्देश्य सिद्धांत के निर्माण की प्रक्रिया और विधि पर जोर देना है। आधारभूत सिद्धांतकार एक उत्कृष्ट सिद्धांत प्रदान करने में मदद करते है।
मेमोरिंग ,क्रमबद्धता और लेखन आधारभूत सिद्धांत के व्यवस्थित चरण है। शोधकर्त्ता को डेटा या एकत्र की गई जानकारी का ध्यान रखना होगा क्योंकि उसे चर की संवेदनशीलता को बढ़ाने की जरुरत है। आधारभूत सिद्धांत एकमात्र ऐसा गुणात्मक शोध है जो शोधकर्त्ता को मात्रात्मक डेटा की मदद लेने की अनुमति देता है। आधारभूत सिद्धांत न केवल मनोविज्ञान के क्षेत्र में बल्कि प्रबंधन, समाजशास्त्र, नृविज्ञान, सूचना ,राजनीति विज्ञान और कई अन्य क्षेत्रों में भी महत्वपूर्ण और उपयोगी सिद्ध हुआ है। आधारभूत सिद्धांतकार ने बाजार अनुसन्धान के क्षेत्र में भी बहुत लोकप्रियता हासिल की है।

8.14 शब्दावली

मैमोइंग- संक्षिप्त नोट्स
अधिष्ठापन- व्यवस्था करना
वर्गीकृत- समूहबद्ध
अवलोकन- देखने की क्रिया

कॉर्पस- मानव शरीर

उत्कृष्ट- क्लासिक

8.15 स्व मूल्यांकन हेतु प्रश्न

रिक्त स्थान की पूर्ति –

I. चर का विश्लेषण और व्याख्या करने की क्षमता को …….कहा जाता है।

II. सिद्धांत निर्माण की प्रक्रिया जो कई स्रोतों से डेटा संग्रह के आधार पर होती है को …….कहा जाता है। जो वैचारिक धारणा के आधार पर परिकल्पना तैयार करने में मदद करता है।

III. आधारभूत सिद्धांत रिश्तों और अवधारणाओं के बीच ……..में …….का एक सेट है।

IV. आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण ……. का एकमात्र तरीका है, जो आवश्यकता होने पर मात्रात्मक डेटा का भी उपयोग कर सकता है.

V. आधारभूत सिद्धांत का दृष्टिकोण…….के द्वारा विकसित किया गया था।

निम्नलिखित कथन सत्य है अथवा असत्य:

I. आधारभूत सिद्धांतो की प्रक्रिया में शोधकर्त्ता फील्ड –नोटिंग साक्षात्कार द्वारा डेटा का परिसीमन बहुत तेज और जल्दी करता है। ( )

II. डेटा आधारभूत सिद्धांत की एक मौलिक संपत्ति नहीं है। ( )

III. मेमो वे लम्बे नोट्स होते है जिसे शोधकर्त्ता अपने सर्वेक्षण के दौरान तैयार करते है। ( )

IV. क्रमबद्धता सभी डेटा को उचित क्रम में रखने में मदद करता है, जिससे सूचना और विचारों का जुड़ाव उचित होता है। ( )

V. आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण के चरणों में क्रमबद्धता को सिद्धांत बनाने में एक महत्वपूर्ण चरण कहा जा सकता है। ( )

VI. कोड नोट्स आधारभूत सिद्धांतकारों के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में कार्य करता है। ( )

सही विकल्प चुने।

(1) इन सभी प्रकार की कोडिंग श्रेणियों में से आधारभूत सिद्धांतकार किसी एक श्रेणी को केंद्र या प्रमुख श्रेणी के रूप में चयन करता है।

(a) चयनात्मक कोडिंग

(b) अक्षीय कोडिंग

(c) ओपन कोडिंग

(d) उपरोक्त सभी

(2) समर्पण और आगमनात्मक सोच की मदद से श्रेणियों या गुणों (जो कोड है) को एक दूसरे से सम्बंधित करने की प्रक्रिया भी जानी जाती है।

(a) लेखन

(b) क्रमबद्धता

(c) कोडिंग

(d) विश्लेषण करना

(3) आधारभूत सिद्धांत का अक्सर उपयोग किया जाता है।

(a) नीतियाँ और कार्यक्रम मूल्यांकन अनुसन्धान

(b) तथ्यों को खंगालने का अवसर

(c) डेटा को वर्गीकृत करना

(d) उपरोक्त में से कोई नहीं

(4) आधारभूत सिद्धांत किस आधार पर रिपोर्ट तैयार करते है।

(a) एकत्र की गई जानकारी

(b) मौजूदा जानकारी

(c) अस्पष्टीकृत जानकारी

(d) उपरोक्त सभी

8.16 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

Glaser BG. The Grounded Theory Perspective I: Conceptualisation Contrasted with Description. Sociology Press [12], 2001.

Glaser BG. The Grounded Theory Perspective II: Description's Remodeling of Grounded Theory. Sociology Press [13], 2003.

Glaser BG. The Grounded Theory Perspective III: Theoretical coding. Sociology Press, 2005.

Goulding, C. Grounded Theory: A Practical Guide for Management, Business and Market Researchers. London: Sage Publications, 2002.

Kelle, U. (2005). "Emergence" vs. "Forcing" of Empirical Data? A Crucial

Problem of "Grounded Theory" Reconsidered. Forum Qualitative Sozialforschung / Forum: Qualitative Social Research [On-line Journal], 6(2), Art. 27, paragraphs 49 & 50. [1]

Strauss A, Corbin J. Basics of Qualitative Research: Grounded Theory Procedures and Techniques. Sage, 1990.

Thomas, G. and James, D. (2006). Reinventing grounded theory: some questions about theory, ground and discovery, British Educational Research Journal, 32, 6, 767–795.

Websites:http://en.wikipedia.org/wiki/Grounded Theory

http://www.socialresearchmethods.net/kb/qualapp.php

8.17 निबंधात्मक प्रश्न

1. आधारभूत सिद्धांत के मूल लक्ष्यों और दृष्टिकोणों का वर्णन करें?
2. आधारभूत सिद्धांत के चरण बताएं?
3. आप यह कैसे कह सकते है कि आधारभूत सिद्धांत दृष्टिकोण एक व्यवस्थित सिद्धांत उत्पन्न करने का एक तरीका है?
4. कोडिंग के विभिन्न प्रकार क्या है?
5. आधारभूत सिद्धांत की प्रासंगिकता और निहितार्थ का वर्णन करें?

इकाई – 9 प्रवचन विश्लेषण (सामग्री कथा) Discourse Analysis (Content Narrative)

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 प्रवचन विश्लेषण की परिभाषा

9.4 प्रवचन विश्लेषण की मान्यताएं

9.5 प्रवचन विश्लेषण के दृष्टिकोण या सिद्धांत

9.6 प्रवचन विश्लेषण के चरण

9.7 प्रवचन विश्लेषण का महत्व /प्रासंगिकता /निहितार्थ

9.8 प्रवचन विश्लेषण में विश्वसनीयता और वैधता के मुद्दे

9.9 आलोचनात्मक प्रवचन विश्लेषण की अवधारणा

9.10 आलोचनात्मक प्रवचन विश्लेषण के महत्वपूर्ण निहितार्थ (आशय)

9.11 सामग्री विश्लेषण की अवधारणा

9.12 सामग्री विश्लेषण की उदाहरण

9.13 सामग्री विश्लेषण के महत्व

9.14 सारांश

9.15 कठिन शब्द

9.16 सुझाए गए रीडिंग और संदर्भ

9.17 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

9.18 निबंधात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

इस इकाई में अनुसंधान के क्षेत्र में प्रवचन विश्लेषण की मूल अवधारणा व ज्ञान पर प्रकाश डाला गया है। प्रवचन विश्लेषण के बारे में एक आम आदमी की भाषा में प्रवचन या 'Discourse' शब्द 'Talk' या 'बातचीत' को

संदर्भित करता है।इस तरीके में लोग अपने अनुभवों का वर्णन या व्याख्या करते है। 'प्रवचन विश्लेषण ' शब्द का उदभव 1960 के दशक में हुआ था, और इसका उपयोग अन्तः विषय क्षेत्र में प्रमुखता से किया जा रहा है।

यह मूलरूप से शोधकर्ताओ या विश्लेषकों के स्पष्टीकरण या बातचीत को शोध विषय के रूप में संदर्भित करता है। यह कोई बात या ऐतिहासिक घटनाओं का पाठ या किसी भी प्रकार की सामाजिक गतिविधि जैसे -शैक्षणिक गतिविधियों के प्रवचन, घरेलु या पारिवारिक प्रवचन या किसी संघ के प्रवचन।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई की सहायता से आप निम्न कार्य कर सकेंगे:

- प्रवचन विश्लेषण की अवधारणा की व्याख्या कर सकेंगे।
- प्रवचन विश्लेषण को परिभाषित कर पायेंगे।
- प्रवचन विश्लेषण की विभिन्न मान्यताओं, सिद्धांतों और दृष्टिकोणों की व्याख्या कर सकेंगे।
- प्रवचन विश्लेषण के चरणों और निहितार्थ का वर्णन कर पायेंगे।
- विवेचनात्मक प्रवचन विश्लेषण की अवधारणा और महत्व की व्याख्या करेंगे तथा ,
- सामग्री विश्लेषण की अवधारणा और महत्व की व्याख्या कर पायेंगे।

9.3 प्रवचन विश्लेषण की परिभाषा

प्रवचन विश्लेषण को कई तरीकों से परिभाषित किया गया है, प्रवचन विश्लेषण की कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित है।

हैमरस्ले एम.(2002) के शब्दों में ," यह एक तरह से संस्करण ,दुनिया ,समाज ,घटनाओं और मानस (Psyche) के उपयोग में उत्पन्न भाषा या प्रवचन का अध्ययन है। सेमिओटिक्स (Semiotics),डीकंस्ट्रक्शन (deconstruction) तथा कथा विश्लेषण (Narrative analysis)प्रवचन विश्लेषण के रूप है। "

बर्नार्ड बेरेल्सन (Bernard Berelson 1974) ने सामग्री विश्लेषण को "संचार की सामग्री प्रकट करने का एक व्यवस्थित, मात्रात्मक तथा उद्देश्यपूर्ण अनुसन्धान की एक तकनीक " के रूप में परिभाषित किया है।

इसे उन भाषण इकाइयों के विश्लेषण के रूप में भी परिभाषित किया जा सकता है, जिनका सम्बन्ध वाक्यों तथा उनके अर्थो के सन्दर्भ से बड़ा है।मूलरूप से प्रवचन विश्लेषण भाषाई निर्भरता की पहचान करता है। जो वाक्यों वाक्यों या उक्तियों के बीच मौजूद है। वास्तव में प्रवचन विश्लेषण की अवधारणा को किसी भी तरह से परिभाषित करना मुश्किल है। कथित तौर पर इसे अनुसन्धान के विभिन्न तरीकों में वर्गीकृत करने के बजाय समस्या की सोच

के सन्दर्भ में एक दृष्टिकोण के रूप में आरोपित किया जा सकता है। वैकल्पिक रूप से इसे वैज्ञानिक अनुसंधान पर आधारित समस्याओं के लिए एक ठोस जवाब प्रदान करने का तरीका कहा जा सकता है। प्रवचन विश्लेषण विधि के द्वारा किसी पाठ या उस पाठ की व्याख्या के लिए चुनी गयी अनुसंधान पद्धति के पीछे छिपी प्रेरणा का अनावरण करने में मदद मिलेगी। आजकल की आधुनिक शब्दावली के अनुसार प्रवचन विश्लेषण या सामग्री कथा एक समस्या या पाठ को विखंडित पढ़ने और उसकी व्याख्या करना है।

9.4 प्रवचन विश्लेषण की मान्यताएं

सैद्धांतिक रूप से प्रवचन विश्लेषण एक अंतः विषय दृष्टिकोण है, जो सामाजिक वैज्ञानिकों और संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिकों द्वारा व्यापक रूप से उपयोग किया जाता रहा है। इस दृष्टिकोण की कुछ मूल मान्यताएँ निम्नानुसार है –

मनोवैज्ञानिक मानते है कि मानव व्यवहार की वस्तुनिष्ठता का अध्ययन तभी संभव है जब शोधकर्ता के साथ -साथ प्रयोज्य व अधययन के अधीन लोग किसी भी प्रकार के पूर्वाग्रह या व्यक्तिवाद के समर्थक ना हो। हालाँकि, यह विवादित रहा है कि शोधकर्ता सहित लोग 'उद्देश्य 'नहीं हो सकते। जब एक शोधकर्ता शोध करता है तब वह अपने शोध मेंअपेक्षा, विश्वास या सांस्कृतिक मूल्यों के सेट को धारण करने की बहुत संभव कोशिश करता है।
इन उमीदों और अनुभवों को घटनाओं की व्याख्या और विश्लेषण करते समय प्रकट किया जा सकता है।
प्रवचन विश्लेषण दृष्टिकोण यह भी मानता है कि ,वास्तविकता सामाजिक रूप से निर्मित होती है और एक वैज्ञानिक शोध में यह भी माना जाता है ,कि 'वास्तविकता ' को वर्गीकृत किया जा सकता है। मनोवैज्ञानिकों द्वारा आमतौर पर इस्तेमाल निर्माण जैसे - व्यक्तित्व ,बुद्धिमत्ता और सोच के वास्तविक और स्वाभाविक रूप से होने वाली श्रेणियाँ या घटनाओं के बारे में विस्तार से बताया गया है। हालाँकि मान्यतायें यह मानने को तैयार नहीं कि यह भाषा ही है ,जो श्रेणियों और निर्माणों को आकार देती है, जिन्हें हम प्रयोग करते है।चूँकि भाषा एक सामाजिक और सांस्कृतिक चीज़ है। हमारी वास्तविकता का बोध सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से निर्मित है।
यह भी माना जाता है कि ,लोग सामाजिक संपर्क का परिणाम है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण में यह माना जाता है कि उपयोग किये गए कई निर्माण 'आंतरिक भावनाएँ' 'है और यह भी कहा जाता है ,कि व्यक्तित्व ,चिंता ,ड्राइव और कई और हमारे मस्तिष्क और शरीर के भीतर कहीं मौजूद है। और केवल तब ही प्रकट होते है ,जब व्यक्ति सामाजिक रूप से दूसरों के साथ बातचीत करता है। हालाँकि ,यह मामला हो सकता कि इनमें से कई वास्तविकता में सामाजिक संपर्क के उत्पाद है।

9.5 प्रवचन विश्लेषण के दृष्टिकोण या सिद्धांत

प्रवचन विश्लेषण के कई" प्रकार" या सिद्धांत है। बहुत से प्रवचन विश्लेषण दृष्टिकोण को कई सिद्धांतों के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। उनमे से कुछ निम्नलिखित है:

- **आधुनिकतावाद (Modernism):** आधुनिकतावाद के सिद्धांतकार उपलब्धि और वास्तविकता आधारित अभिविन्यास द्वारा निर्देशित थे। इसलिए वे प्रवचन को बातचीत या बात करने के सापेक्ष तरीके

के रूप में देखते थे। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि प्रवचन और भाषा में नए या अधिक "सटीक "शब्दों को विकसित करने की आवश्यकता है ,जिससे नए आविष्कार ,नवाचार ,समझ और रूचि के क्षेत्र का वर्णन कर सकें। भाषा और प्रवचन को अब सामान्य ज्ञान उपयोग या प्रगति के प्राकृतिक या वास्तविक उत्पादों के रूप में माना जाता है। आधुनिकतावाद ने अधिकारों ,समानता ,स्वतंत्रता और न्याय के विभिन्न प्रवचनों को जन्म दिया है।

- **संरचनावाद(Structuralism)-:** संरचनावाद सिद्धांतवादियों ने बताया कि मानव कार्य और सामाजिक संरचनाएं भाषा और प्रवचन से सम्बंधित है ,और उन्हें सम्बंधित तत्वों की प्रणाली के रूप में माना जाता है। दृष्टिकोण का मानना था कि किसी प्रणाली के व्यक्तिगत तत्वों का केवल तभी महत्व होता है जब उन्हें समग्र रूप में संरचना के सन्दर्भ में माना जाता है। संरचनाओं को आत्मनिर्भर ,स्व-विनियमित और स्व -परिवर्तनशील संस्थाओं के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, संरचना ही एक प्रणाली के व्यक्तिगत तत्व ,महत्व ,अर्थ और कार्य निर्धारित करती है।संरचनावाद ने भाषा और सामाजिक व्यवस्था की दुनिया के लिए एक महत्वपूर्ण योगदान दिया है।
- **उत्तर आधुनिकतावाद (Post Modernism)-:** आधुनिक सिद्धांत के दृष्टिकोण के विपरीत ,उत्तर आधुनिक सिद्धांतकारों ने व्यक्तियों के अनुभव और समानता पर मतभेद की जाँच पर जोर दिया। उत्तर आधुनिक शोधकर्ताओं ने प्रवचन को ग्रंथो ,भाषा ,नीतियों और प्रथाओं के रूप में विश्लेषण करने पर अधिक जोर दिया।

मिशेल फौकॉल्ट प्रवचन विश्लेषण के क्षेत्र में सबसे प्रमुख शख्सियत थी। फौकॉल्ट (1977 ,1980) ने प्रवचन को "विचारों से बनी प्रणाली ,दृष्टिकोण ,कार्य के पाठ्यक्रम मान्यताओं और प्रथाओं जो व्यवस्थित रूप से विषयों और दुनिया का निर्माण करती है। " के रूप में परिभाषित किया है। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि प्रवचन विश्लेषण का महत्व वैधता और शक्ति की सामाजिक प्रक्रियाओं में भूमिका है। प्रवचन शोधकर्ताओं को वर्तमान सच्चाइयों के निर्माण पर जोर देते हुए, कि वे कैसे बनाई रखी जाती है और उनके साथ कौन सी शक्ति सम्बंधित है। जानने में मदद कर सकते है। बाद में उन्होंने कहा कि प्रवचन एक चैनल है ,जिसके माध्यम से शक्ति संबंध (उदाहरण के लिए शक्ति संबंध बॉस और अधीनस्थ के बीच में ,प्रोफेसर और छात्र के बीच में) बोलने वाले विषयों का उत्पादन करते है और वह शक्ति का एक स्पष्ट या अपरिहार्य पहलू है।

फौकॉल्ट (1977 ,1980) ने तर्क दिया कि शक्ति और ज्ञान अंतर -सम्बंधित है इसलिए हर मानव सम्बन्ध संघर्ष और शक्ति का मोलभाव है। फौकॉल्ट के अनुसार प्रवचन (1977 ,1980 ,2003) शक्ति से सम्बंधित है,क्योंकि यह बहिष्करण के नियमों द्वारा संचालित होता है।

फौकॉल्ट (1977 , 1980) ने तर्क दिया कि शक्ति और ज्ञान अंतर -सम्बंधित है इसलिए हर मानव सम्बन्ध संघर्ष और शक्ति का मोलभाव है। फौकॉल्ट के अनुसार प्रवचन (1977 ,1980 ,2003) शक्ति से सम्बंधित है,क्योंकि यह बहिष्करण के नियमों द्वारा संचालित होता है।

- **नारीवाद (Feminism)-:** नारीवादियों ने प्रवचन को सामाजिक प्रथाओं की घटनाओं के रूप में समझाया। ये जटिल संबंधो जो शक्ति ,विचारधारा ,भाषा और प्रवचन के बीच होते है की जाँच करता है। उन्होंने परफॉर्मिंग जेंडर की अवधारणा पर जोर दिया। इनके अनुसार लिंग एक संपत्ति है, न कि एक व्यक्ति और न ही वह अर्थ जो समाज के सदस्य बताते है।

9.6 प्रवचन विश्लेषण के चरण

प्रवचन विश्लेषण की विधि भाषा के पैटर्न का मूल्यांकन करती है, जैसे की लोग किसी विशेष विषय के बारे में बात करते है ,वे किन रूपकों का उपयोग करते है ,वे बातचीत में कैसे बदलाव लाते है आदि। ये विश्लेषक भाषा को एक प्रदर्शन के रूप में देखते है।विश्लेषकों या प्रवचन विश्लेषण के शोधकर्ताओं का मानना है ,कि भाषा किसी विशिष्ट या मनोदशा का वर्णन करने के बजाय एक क्रिया करता है। इस विश्लेषण में से अधिकांश सहज और चिंतनशील है ,लेकिन इसमें गिनती के कुछ रूपों को भी शामिल कर सकते है। जैसे –बारी (turn) लेने के उदाहरणों को गिनना और बातचीत पर उनका प्रभाव और लोगों के बोलने का तरीका भी हो सकता है।
शोधकर्ता निम्नलिखित चरणों में जानकारी एकत्र और व्याख्या करते है।

- **लक्ष्य अभिविन्यास (Target Orientation)-:** सबसे पहले ,विश्लेषकों को अपने लक्ष्य या अध्ययन का केंद्र को जानने की जरुरत है। शुरुवात से ,उन्हें उन तरीकों के बारे में सोचने की जरुरत है जिनके द्वारा वे जानकारी एकत्र करने के बाद डेटा का विश्लेषण और व्याख्या करेंगे।
- **डेटा का महत्व (Significance of Data)-:** एक बार सम्बंधित जानकारी एकत्र करने के बाद ,शोधकर्ताओं को एकत्र किये गए डेटा के मूल्य को पहचानने या जांचने की आवश्यकता है ,विशेष रूप से वे जो एक से अधिक स्रोतों से आये है।
- **डेटा की व्याख्या (Interpretation of the Data)-:** जैसे -जैसे शोध आगे बढ़ता है विश्लेषक को डेटा को समझने और उसकी व्याख्या करने की आवश्यकता होती है ताकि शोधकर्ता और साथ ही दूसरों को यह पता चले कि शोध में क्या हो रहा है।
- **निष्कर्षो का विश्लेषण (Analysis of the Findings)-:** अंत में शोधकर्ता को एकत्र किये हुए डेटा की यांत्रिक प्रक्रिया विश्लेषण ,व्याख्या और सारांश करने की आवश्यकता है। जानकारी के विश्लेषण के आधार पर, जांच -परिणामों का सारांश और निष्कर्ष निकाल सकते है।

कई गुणात्मक विश्लेषण कार्यक्रम सामाजिक शोधकर्ताओं के लिए उपलब्ध है। जिसका उपयोग विभिन्न प्रकार के कार्यो के लिए किया जा सकता है। उदाहरण के लिए - सॉफ्टवेयर विशेष शब्दों या वाक्यांशों का पता लगा सकता है ;शब्दों की सूची बनाना और उन्हें वर्णमाला क्रम में डालना ;प्रमुख शब्द या टिप्पणयां डालें ;शब्दों या वाक्यांशों की की गणना या संख्यात्मक कोड संलग्न करना। सॉफ्टवेयर की मदद से विश्लेषक या शोधकर्ता पाठ ,पाठ का विश्लेषण और सिद्धांतों का निर्माण पुनः प्राप्त कर सकते है। हालाँकि एक कंप्यूटर उपक्रम इन यांत्रिक प्रक्रियाओं के बारे में गुणात्मक तथ्य की न तो व्याख्या ,और न ही निष्कर्ष कर सकता है।

9.7 प्रवचन विश्लेषण का महत्व /प्रासंगिकता /निहितार्थ

वार्ता, भाषाओं और ग्रंथों के उपयोग के साथ विश्लेषकों या शोधकर्ता ऐतिहासिक घटनाओं के साथ -साथ वर्तमान सामाजिक प्रथाओं के पीछे के अर्थों को आसानी से समझ सकते है।

इस दृष्टिकोण की कुछ अन्य प्रासंगिकता या महत्व है।

- प्रवचन विश्लेषण हमें एक विशिष्ट समस्या के पीछे की स्थितियों को समझने में सक्षम बनाता है ,तथा हमे उस समस्या के सार का एहसास दिलाता है
- प्रवचन विश्लेषण हमें "समस्या "का एक व्यापक दृष्टिकोण प्राप्त करने में मदद करता है ,और उस "समस्या" से सम्बंधित होने में मदद करता है।
- यह शोधकर्ता को स्वयं के तथा दूसरों के भीतर छिपी प्रेरणाओं को समझने में मदद करता है इसलिए शोधकर्ता ठोस समस्या को हल करने में सक्षम है।
- यद्यपि परिस्थितियों /ग्रंथों के बारे में महत्वपूर्ण सोच और विश्लेषण उतना ही प्राचीन है, जितना मानव जाति या दर्शन, और ऐसी कोई विधि या सिद्धांत नहीं है।
- यह लोगों और दुनिया की सार्थक व्याख्या करने में मदद करता है।
- यह "विखंडित "अवधारणाओं ,विश्वास –प्रणालियों या आमतौर पर आयोजित सामाजिक मूल्यों और मान्यताओं में भी सहायक है।
- प्रवचन विश्लेषण किसी भी पाठ (Text) पर लागू किया जा सकता है, जो किसी भी समस्या या स्थिति के लिए होता है और इसके लिए किसी दिशानिर्देश का पालन करने की आवश्यकता नहीं है।

9.8 प्रवचन विश्लेषण में विश्वसनीयता और वैधता के मुद्दे

इसमें कोई संदेह नहीं की प्रवचन विश्लेषण की विधि को अच्छी तरह से सराहा गया है और यह कई विषयों द्वारा उपयोग किया जा रहा है, फिर भी यह दृष्टिकोण या इस पद्धति विश्लेषण में कुछ आधारों पर विश्वसनीयता और वैधता का आभाव है, जैसे -:

- चूँकि प्रवचन विधि की विधि में एक उचित प्रारूप या दिशानिर्देश का आभाव है, इस दृष्टिकोण के माध्यम से डेटा का प्रसंस्करण विवादास्पद है।
- इसके आलावा, इस डेटा के माध्यम से एकत्रित जानकारी की व्याख्या फिर से संदेहास्पद है ,क्योंकि इसमें शोधकर्ता या विश्लेषक की व्यक्तिपरकता या पूर्वाग्रह शामिल हो सकता है।
- चूँकि प्रवचन विश्लेषण के माध्यम से कोई कठिन डेटा प्रदान नहीं किया जाता और किसी शोध /निष्कर्ष की विश्वसनीयता और वैधता शोधकर्ता के बल और तर्क पर निर्भर करती है। यहाँ तक कि सर्वश्रेष्ठ निर्मित तर्क भी उनके खुद की निर्णायक रीडिंग और प्रति –व्याख्या के अधीन है।

महत्वपूर्ण विश्लेषण की वैधता वाकपटुता की गुणवत्ता पर निर्भर करता है। उपरोक्त विवादों और तर्कों के बावजूद यह विधि मनोविज्ञान में, काफी सराही गयी है तथा अच्छी स्थिति प्राप्त करती है।

9.9 विवेचनात्मक प्रवचन विश्लेषण की अवधारणा

टेलीविजन, प्रसारण और मीडिया के उद्भव ने प्रवचन विश्लेषण के निहितार्थ को विकास का रास्ता दिया है। विवेचनात्मक प्रवचन विश्लेषण विधि (CDA) कुछ और नहीं बल्कि एक प्रकार का प्रवचन आधारित शोध है।

यह तरीका वर्तमान सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियों का अध्ययन करने की कोशिश करता है, जैसे – सामाजिक शक्ति का दुरुपयोग, प्रभुत्व और असमानता को अधिनियमितता की सामाजिक और राजनीतिक संदर्भ में चर्चा की जाती है। इस शोध की मदद से शोधकर्ता स्पष्ट रूप से समाज के भीतर घटित हो रही घटनाओं को महसूस करने, अनुभव करने और अंततः सामाजिक असमानता और अन्याय को दूर करने की कोशिश करता है। शोधकर्ता समाज के शक्तिशाली समूहों विशेष रुप से नेताओं ,सामाजिक समूहों तथा ऐसे संस्थान जिनका एक से अधिक प्रकार के सार्वजानिक प्रवचन पर अच्छा नियंत्रण हो, पर ध्यान केंद्रित करता है।

इस प्रकार प्रोफेसर विद्वान प्रवचन, शिक्षक शैक्षिक प्रवचन, पत्रकार मीडिया प्रवचन, वकील कानूनी प्रवचन और राजनेता नीति और अन्य सार्वजानिक प्रवचन नियंत्रण करते है।

9.10 विवेचनात्मक प्रवचन विश्लेषण के महत्वपूर्ण निहितार्थ (आशय)

शोधकर्ता या विवेचनात्मक प्रवचन विश्लेषक सामाजिक अन्याय को उजागर करने, उसे समझने, उसके प्रति जागरूकता फैलाने तथा उसके खिलाफ लड़ने के लिए मीडिया और प्रसारण का पूरा उपयोग करते है। विवेचनात्मक प्रवचन विधि में व्यक्तियों, समूहों, संस्थाओं और समाज के लिए निम्नलिखित निहितार्थ है।

I. यह विधि शोधकर्ता के साथ –साथ शोध को भी "सक्रिय एजेंट " होने की अनुमति प्रदान करता है, जब वह "असमानता और अन्याय " को उजागर करने का प्रयास कर रहे हो।
II. जैसा कि शोधकर्ता गंभीर रूप से सामाजिक परिस्थितियों का मूल्यांकन करने की कोशिश करता है। तब प्रवचन विश्लेषण मीडिया ग्रंथों (Text) की संरचना और सामाजिक संदर्भ दोनों पर जोर देता है। मीडिया "अनैतिकता " की आलोचना को सक्षम बनाता है, तथा "बिना प्रमाण के सही मान लिये गये " तथ्यों को वैचारिक रूप से उजागर करता है।
III. प्रवचन विश्लेषण विवेचनात्मक रूप से भाषा विज्ञान में भी इस्तेमाल किया जा रहा है, जिसके कारण एक अलग दृष्टिकोण का विकास हुआ। जो मीडिया द्वारा फैलाये गए संदेशो को समझने में सहायता करता है।
IV. विवेचनात्मक प्रवचन विश्लेषण की मदद से भाषा का उपयोग विभिन्न पृष्ठभूमि वाले विद्वानों द्वारा मीडिया आलोचना सहित अंतःविषय उपकरण में किया जा सकता है।
V. निःसंदेह, विवेचनात्मक प्रवचन विश्लेषण की विधि मीडिया ग्रंथो(Text) की सहायता से सामाजिक गतिविधियों की सांस्कृतिक अध्ययन में मदद करती है।
VI. विवेचनात्मक प्रवचन विश्लेषण की विधि आलोचनात्मक रूप से शोधविषय के सैद्धांतिक और वर्णनात्मक खातों के आयामों की जाँच करने की कोशिश करती है।
VII. सी.डी.ए (CDA) प्रवचन विश्लेषण के सर्वोत्तम रूपों में से एक है, जो भाषा को वैचारिक रूप से एक प्रकार की सामाजिक प्रथा के रूप में उपयोग करता है।

9.11 सामग्री विश्लेषण की अवधारणा

प्रवचन विश्लेषण का एक अन्य रूप सामग्री विश्लेषण है। इस विधि में वास्तविक सामग्री का गहन अध्ययन करने के पश्चात् सामग्री को संक्षेप रूप में प्रस्तुत किया जाता है। यह शोधकर्ता को अधिक उद्देश्यपूर्ण मूल्यांकन करने और स्थितियों को समझने में सक्षम बनाता है।

उदाहरण के लिए एक टेलीविजन कार्यक्रम का प्रभावशाली सारांश, कार्यक्रम की सामग्री के सभी पहलुओं पर विश्लेषण करने में मदद नहीं कर सकता।सामग्री विश्लेषण, लिखित शब्दों का विश्लेषण करने की कोशिश करता है। सामग्री विश्लेषण के परिणाम संख्या और प्रतिशत होते है। इसकी प्रक्रिया सामग्री के चयन से शुरू होकर, विश्लेषण तथा कोडिंग के लिए सामग्री तैयार करना है। सामग्री की कोडिंग करने के बाद यह गिना और मापा जाता है। बाद में माप के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते है। सामग्री विश्लेषण करने के बाद शोधकर्ता ऐसे बयान दे सकता है।

जैसे - एफ.एम रेडियो पर नवंबर 2009 में 27 % कार्यक्रमों में कम से कम एक पहलू "एन्टिटेरोरिज्म " का उल्लेख किया गया जबकि 2006 में यह केवल 3 % था।

इसलिए सामग्री विश्लेषण दो मूल उद्देश्यों को पूरा करता है।

i. यह सारांश से आत्मवाद को हटाने में बहुत मदद करता है।
ii. यह आसान और सरल तरीके से प्रवृतियों का पता लगाने में भी मदद करता है।

9.12 सामग्री विश्लेषण की उदाहरण

सामग्री विश्लेषण मीडिया सामग्री (जब वह मीडिया स्रोत होते है) की मदद से किया जा सकता है या दर्शकों की सामग्री का उपयोग किया जा रहा हो (जब व्यक्तिगत फीडबैक दिये जा रहे है) प्रिंट मीडिया, प्रसारण और रिकॉर्डिंग, मीडिया सामग्री के उदाहरण है और दर्शकों की सामग्री का विश्लेषण प्रश्नावली, साक्षात्कार, समूह चर्चा और सम्पादकों के पत्र की मदद से किया जाता है।

9.13 सामग्री विश्लेषण के महत्व

सामग्री विश्लेषण के कई निहितार्थ या महत्व है।

i. सामग्री विश्लेषण शोधकर्ता को कारण (उदाहरण कार्यक्रम सामग्री) और प्रभाव (उदाहरण दर्शकों का आकार) के बीच संबंध बनाने में सक्षम बनाता है।
ii. सामग्री विश्लेषण का उपयोग मीडिया की दुनिया (Media World) में कार्यक्रम के मूल्यांकन और सुधार के लिए किया जाता है।
iii. यह किसी विशेष मुद्दे पर जागरुकता बढ़ाने और विभिन्न नोट्स को सारांशित करने पर ध्यान केंद्रित करते है।
iv. यह कारणों का संदर्भ बनाने में भी मदद करता है।

9.14 सारांश

संक्षेप में कहा जा सकता है कि प्रवचन विश्लेषण एक तकनीक है ,जो मानव व्यवहार और सामाजिक परिस्थितियों का विश्लेषण करने के लिए बातचीत और शोध विषय (ग्रंथों) के रूप में भाषा का उपयोग करता है। प्रवचन विश्लेषण विधि और समीक्षात्मक सोच हर स्थिति और हर विषय पर लागू होती है। प्रवचन विश्लेषण द्वारा प्रदान किया गया नया दृष्टिकोण व्यक्तिगत विकास और रचनात्मक पूर्ति के उच्च स्तर की अनुमति देता है। प्रवचन विश्लेषण में किसी भी निर्धारित दिशानिर्देश या ढांचे की आवश्यकता नहीं है ,बल्कि यह एक संस्था, एक पेशे और समग्र रूप से समाज की प्रथाओं में मूलभूत परिवर्तन लाने में मदद कर सकता है। हालाँकि प्रवचन विश्लेषण निश्चित

जवाब प्रदान नहीं करता है। यह एक "कठिन " विज्ञान नहीं है, लेकिन सामग्री विश्लेषण और महत्वपूर्ण (Critical) सोच के आधार पर एक अंतदृष्टि /ज्ञान है।फिर भी इस पद्धति का उपयोग अंतर्विषयक (Interdisciplinary) सांस्कृतिक दृष्टिकोण (Cross-Cultural approach) जो सामजिक और राजनीतिक प्रथाओं का निर्माण और अनुभव करते है, के रूप में किया जा रहा है।

9.15 कठिन शब्द

दृष्टिकोण - किसी बात या विषय को किसी ख़ास पहलू से देखने -विचारने का ढंग या वृत्ति

विश्वसनीयता - विश्वसनीय होने की अवस्था

वैधता - विधि के अनुसार मान्य होने की अवस्था

उदभव - पहले -पहल अस्तित्व में आने की क्रिया या भाव

अंतः विषय - विषय के अंदर का भाव

स्पष्टीकरण - विशुद्धीकरण

संचार - जिस माध्यम से संदेश दूसरों तक पहुचाये जाते है

प्रेरणा - मन में उत्पन्न होने वाला प्रोत्साहन परक भाव -विचार

संज्ञानात्मक - सम्यक ज्ञान द्वारा प्राप्त

नवाचार - नवीकरण

प्रासंगिकता - सम्बंधता

रूपकों - किसी रूप की प्रतिकृति

समीक्षात्मक - जिसमें सम्यक मूल्यांकन किया गया हो।

अंतदृष्टि - देखने की वृत्ति या क्षमता

9.16 संदर्भ

1. Cooley, C. H. (1956) Social Organisation, Free Press
2. Howarth, D. (2000) Discourse. Philadelphia, Pa.: Open University Press.
3. Edward T. Hall, The Silent Language, New York: Doubleday, 1959.

4. Garfinkel, H. (1967) Studies in Ethno Methodology, Prentice-Hall
5. Glaser, B. G. and Strauss, A. L. (1967) The Discovery of Grounded Theory:
6. Strategies for Qualitative Research, Aldine: Atherton
7. Kaplan, R. "Concluding Essay: On Applied Linguistics and Discourse Analysis,"ed Robert Kaplan, Annual Review of Applied Linguistics, Vol. II, 1990.
8. Kress, G, "Critical Discourse Analysis," Robert Kaplan, ed., Annual Review of
9. Applied Linguistics, II, 1990.
    a. Mead, G. H. (1934) Mind, Self and Society, University of Chicago Press
    b. M. Foucault (1969). L'Archéologie du savoir. Paris: Éditions Gallimard.
10. M. Foucault (1970). The order of things. Pantheon.
11. Websiteswww.
12. creativityandcognition.com/content/view/129/131/
13. www.csa.com/discoveryguides/linglaw/gloss.php
14. portal.bibliotekivest.no/terminology.htm
15. http://www.ischool.utexas.edu/~palmquis/courses/content.html
16. http://www.audiencedialogue.net/kya16a.html

9.17 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

I. **रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिये-**

i. प्रवचन विश्लेषण वाक्यों या उक्तियों के बीच……….की पहचान करता है।

ii. प्रवचन विश्लेषण शब्द की उत्पत्ति……….. के बाद से हुई।

iii. प्रवचन विश्लेषण एक………….ऐतिहासिक घटना या किसी भी तरह की सामजिक गतिविधि जैसे का एक प्रकार है।

iv. प्रवचन विश्लेषण किसी समस्या या शोध को……….. पढ़ना और उसकी व्याख्या करने से अधिक कुछ नहीं है।

v. उत्तर आधुनिकतावाद के सिद्धांतकार……….. द्वारा निर्देशित थे।

vi. उत्तर आधुनिक सिद्धांतकारों ने ……….. की जांच पर जोर दिया।

vii. प्रवचन विश्लेषण एक ……….. से अधिक कुछ नहीं है।

viii. वास्तविकता सामाजिक रूप से निर्मित है। यह एक वैज्ञानिक शोध में माना गया है कि 'वास्तविकता ' हो सकती है।

II. **सही और गलत का निशान लगाइए –**

i. प्रवचन विश्लेषण हमें एक विशिष्ट "समस्या " के पीछे की स्थितियों को समझने में सक्षम बनाता है। ( )
ii. प्रवचन विश्लेषण की जानकारी के आधार पर जाँच -परिणामों का सारांश और निष्कर्ष निकालते है। ( )
iii. एक बार प्रासंगिक जानकारी एकत्र करने के बाद, शोधकर्ता को एकत्र किये गए डेटा के मूल्यों को जाँचने की आवश्यकता नहीं होती है। ( )
iv. प्रवचन विश्लेषण लोगों और दुनियाँ की सार्थक व्याख्या के लिए नेतृत्व नहीं करता है। ( )
v. प्रवचन विश्लेषण किसी भी पाठ या समस्या पर लागू किया जा सकता है। ( )
vi. सी डी ए की विधि शोधकर्ता को "सक्रिय एजेंट " के रूप में कार्य करने की अनुमति देता है। ( )
vii. भाषा का उपयोग अंतः विषय उपकरण के रूप में नहीं किया जा सकता है। ( )
viii. प्रवचन विश्लेषण की विधि को उचित दिशानिर्देश या प्रारूप की आवश्यकता नहीं है। ( )
ix. आलोचनात्मक प्रवचन विश्लेषण की विधि सांस्कृतिक अध्ययन करने में मदद करती है। ( )

9.18 निबंधात्मक प्रश्न

i. प्रवचन- विश्लेषण शब्द से आप क्या समझते है?
ii. प्रवचन- विश्लेषण के विभिन्न मान्यताओं, सिद्धांतों और दृष्टिकोण की व्याख्या करे।
iii. आप यह कैसे कह सकते है कि प्रवचन- विश्लेषण एक व्यवस्थित प्रक्रिया है? प्रवचन- विश्लेषण के चरणों के संबंध में आपका उत्तर दें।
iv. विवेचनात्मक प्रवचन- विश्लेषण की अवधारणा और महत्व को समझाइये।
v. सामग्री विश्लेषण की अवधारणा और महत्व को समझाइये।

इकाई – 10 गुणात्मक अनुसंधान की रिपोर्टिंग और मूल्यांकन

(Reporting and Evaluating Qualitative Research)

इकाई संरचना

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा के मूल्यांकन या विश्लेषण का अर्थ और अवधारणा

10.4 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा के मूल्यांकन या विश्लेषण के चरण

10.5 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा की व्याख्या के अर्थ और संकल्पना

10.6 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा की व्याख्या की रणनीतियाँ

10.7 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा की रिपोर्टिंग का अर्थ और अवधारणा

10.8 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा की एक रिपोर्ट तैयार करने के चरण

10.9 अनुसंधान रिपोर्ट की सामग्री

10.10 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा के मूल्यांकन, व्याख्या और रिपोर्टिंग में क्या करें और क्या न करें

10.11 सारांश

10.12 कठिन शब्द

10.13 सुझाए गए रीडिंग और सन्दर्भ

10.14 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

10.15 निबंधात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना -

कोई भी शोध परिणामों की विस्तृत जानकारी के बिना पूरा नहीं होता या शोधकर्ता द्वारा किये गए अनुसंधान द्वारा सर्वेक्षण की रिपोर्ट के रूप में पूर्ण होता है। डेटा के संग्रह के बाद शोधकर्ता को विश्लेषण ,मूल्यांकन करने और फिर एक संगठित और व्यवस्थित तरीके से डेटा की रिपोर्ट तैयार करने की आवश्यकता होती है।इस प्रकार उत्पन्न रिपोर्ट

न केवल घटनाओं के पीछे छुपी कुछ मूल बातें, व्यवहार या प्रथाओं को समझने में मदद करता है बल्कि यह भविष्य के अनुसंधान के क्षेत्र के लिए एक स्रोत के रूप में भी कार्य करता है।

वर्तमान इकाई अनुसंधान के व्यवस्थित तरीकों जैसे - शोधकर्ता द्वारा व्याख्याओं का मूल्यांकन और रिपोर्ट तैयार करना आदि जैसे विषयों पर चर्चा करने की कोशिश करती है। यह मूल रूप से गुणात्मक शोध में रिपोर्ट के मूल्यांकन और प्रस्तुति के व्यवहारिक महत्व पर भी जोर देगा।

10.2 उद्देश्य –

इस इकाई को पूरा पढ़ने के बाद, आप निम्न कार्य कर सकेंगे :

- गुणात्मक अनुसंधान में डेटा को परिभाषित और व्याख्या करना, मूल्यांकन करना और रिपोर्टिंग के अर्थ का वर्णन करना सीख पायेंगे।
- गुणात्मक अनुसंधान में डेटा के मूल्यांकन या विश्लेषण के चरणों की व्याख्या कर सकेंगे।
- गुणात्मक अनुसंधान में रिपोर्ट तैयार करने* के चरणों की गणना करना सीखेंगे।
- गुणात्मक अनुसंधान में डेटा व्याख्या की रणनीतियों का विश्लेषण कर पायेंगे।
- अनुसंधान रिपोर्ट की सामग्री को सूचीबद्ध कर पायेंगे।
- गुणात्मक शोध में डेटा का मूल्यांकन, व्याख्या और रिपोर्टिंग में क्या करें और क्या नहीं करें इसकी व्याख्या करेंगे।

10.3 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा के मूल्यांकन या विश्लेषण का अर्थ और अवधारणा

विभिन्न तकनीकों या अनुसंधान के तरीकों के माध्यम से डेटा एकत्र करने के बाद शोधकर्ता किसी समस्या, व्यवहार या अनिश्चित वातावरण का हल खोजने की कोशिश करता है। इस तरह के समाधान या निष्कर्ष व्यवस्थित रूप से एकत्र किये गए डेटा और फिर डेटा या सूचना का विश्लेषण या मूल्यांकन रिपोर्ट के रूप में विश्लेषण और व्याख्याओं के आयोजन की मदद से ही पंहुचा जा सकता है। एक बार जब डेटा प्रश्नावली, साक्षात्कार, फोकस समूह या किसी अन्य तरीकों की मदद से एकत्र कर लिया जाये, तब डेटा का विश्लेषण या मूल्यांकन करने की आवश्यकता होती है।

गुणात्मक अनुसंधान में मूल्यांकन की अवधारणा पूर्व नियोजित उद्देश्य और अनुसंधान के उद्देश्य या लक्ष्य, 'जानकारी एकत्र करने में किस हद तक या उत्तर देने में मदद करता है। ' को समझने के प्रयास को संदर्भित करता है। शोधकर्ता उस जानकारी का मूल्यांकन करने का प्रयास करता है, जिसके आधार पर वह मौजूदा दुनियाँ की प्रथाओं

के कारण, कुछ वस्तुओं, व्यवहारों, घटनाओं या घटनाओं का औचित्य या पूर्वानुमान को समझने की कोशिश करता है। मूल्यांकन, समस्याओं या उद्देश्य और अनुसंधान के लक्ष्य को अंतर्दृष्टि प्रदान करने में मदद करता है।

10.4 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा के मूल्यांकन या विश्लेषण के चरण

एकत्रित जानकारी या डेटा के मूल्यांकन की प्रक्रिया एक व्यवस्थित कदम का अनुसरण करती है। शोधकर्ता एकत्र की गयी जानकारी को इस तरह से व्यवस्थित करने और अर्थ देने की कोशिश करता है, ताकि पूर्वाग्रह या भ्रम की संभावना कम हो। डेटा का व्यवस्थित मूल्यांकन करके शोधकर्ता कई खोज कर सकता है। जैसे - अध्ययन के तहत अभ्यास, उत्तर, उद्देश्य और चर, घटनाओं तथा व्यवहार के कई तथ्यों का पता लगाते है। डेटा के मूल्यांकन की प्रक्रिया के चरण निम्नलिखित है।

i. समग्र एकत्र आंकणों को पढ़ना।
ii. एकत्रित आंकणों को वर्गीकृत करना।
iii. श्रेणियों को नामांकित या लेबलिंग करना।
iv. कारण संबंधो की पहचान करना।
v. डेटा रिकॉर्ड या दाखिल करना।

आइये हम इनमें से प्रत्येक चरण को विस्तार से समझे।

i. **समग्र एकत्र आंकणों को पढ़ना (Reading the overall collected data) -** सबसे पहले, शोधकर्ता विभिन्न स्रोतों के माध्यम से एकत्रित जानकारी का विस्तारपूर्वक वर्णन जानने की कोशिश करता है। (उदाहरण के लिये, वीडियो टेप, ऑडियो टेप, अवलोकन आदि) यह चरण शोधकर्ता द्वारा चयन किये गए चरों के संबंध में अधिक से अधिक जानकारी एकत्र करने में मदद करता है।

ii. **एकत्रित आंकणों को वर्गीकृत करना (Categorising the collected data) -** एकत्रित जानकारी से शोधकर्ता या विश्लेषक प्रासंगिक जानकारी को अलग (sorts) करते है। जो चयनित अध्ययन के व्यवहार, वस्तुओं, घटनाओं या प्रथाओं पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डालता है। डेटा को अलग (sort)करने के बाद, शोधकर्ता विभिन्न श्रेणियों या विषयों के तहत प्राप्त सामान जानकारी को वर्गीकृत करता है। उदहारण के लिए हो सकता है शोधकर्ता सूचनाओं को चिंताओं, सुझावों,शक्तियों, कमजोरियों, सामान अनुभवों, कार्यक्रम की उत्पादक सामग्री, सिफारिशें, उत्पादन, संकेतक परिणाम में वर्गीकृत करें।

iii. श्रेणियों को नामांकित या लेबलिंग करना (Naming or labeling the categories)- अनुसंधान के मूल्यांकन का तीसरा व्यवस्थित कदम चयनित और वर्गीकृत विषयों को नामांकित या लेबलिंग करना है। उदहारण के लिए सुझावों की सभी जानकारी को प्रस्ताव की श्रेणी के तहत रखना।

iv. **कारण संबंधो की पहचान करना (Identification of the causal relationships) -** जानकारी की लेबलिंग और वर्गीकरण की मदद से शोधकर्ता को जानकारी की दिशा या प्रवाह का अंदाजा हो जाता है। यह शोधकर्ता या विश्लेषक को पैटर्न या वर्गीकृत विषयों के बीच संबंध और संबंध के कारण की खोज करने में मदद करता है। उदहारण के लिए अगर अध्ययन के तहत नमूना (sample) के अधिकांश लोग एक ही भौगोलिक क्षेत्र के है, तो हम यह कह सकते है,कि उस क्षेत्र में रहने वाले लोगों की वह एक निश्चित समस्या हो सकती है या अधिकांश लोग अध्ययन के नमूने (sample) के तहत सामान वेतन पाने वाले है। तब हम यह कह सकते है कि क्योंकि वे सभी सामान वेतन स्तर पर है, इसलिए वह पर्याप्त रूप से प्रेरित नहीं है। ये पैटर्न या संघ विषयों के नमूनों की प्रतिक्रियाओ के अनुभव और अध्ययन के दौरान शोधकर्ता के अनुभव के आधार पर किया जाता है।

v. **डेटा रिकॉर्ड या दाखिल करना (Recording or filing the data)-** एक बार जब संबंधो के पैटर्न का विश्लेषण हो जाये तो विश्लेषक को जानकारी (उसका) ट्रैक या रिकॉर्ड रखने की आवश्यकता है। ये रिकॉर्ड या फाइल भविष्य के इस तरह के नमूनों (Sample) के अध्ययन के सन्दर्भ के लिये मार्गदर्शिका के रूप में कार्य करती है।

10.5 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा की व्याख्या के अर्थ और संकल्पना

डेटा की व्याख्या में डेटा के निष्कर्षों को संक्षेप में इस तरह से प्रस्तुत करना है, कि यह अनुसंधान के लक्ष्यों से सम्बंधित उपयोगी जानकारी प्रदान करें। शोधकर्ता या विश्लेषक जानकारी को एक दृष्टिकोण के रूप में रखने का प्रयास करते है। उदहारण के लिए,शोधकर्ता परिणामों के निष्कर्षों की तुलना शुरुवात के चरण में जो आपेक्षित था से कर सकता है। यह मानकीकृत उत्पादों, सेवाओं, या लक्ष्य के संदर्भ में एक तुलना या विवरण भी हो सकता है या केवल उपलब्धियों और दक्षता की व्याख्या हो सकती है। आयोजित किये गए अनुसंधान की व्याख्या SWOT (that is analyzing,the strengts, weakness, opportunities and threats) (यानी शक्तियों, कमजोरी,अवसरों और खतरों का विश्लेषण) के तरीकों से भी हो सकती है। डेटा की व्याख्या करते समय शोधकर्ता को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जब वह परिणाम की व्याख्या प्रस्तुत करें तो वह व्याख्या केवल अनुसंधान के अंतर्गत आने वाले समूहों की ही मदद न करे अपितु अन्य शोधकर्ताओं को भी मदद करें ताकि वो समान विषय में अधिक बेहतर व कुशल तरीके से अपने अनुसंधान को पूर्ण कर सके।गुणात्मक अनुसंधान में एक महत्वपूर्ण बात का और ध्यान रखा जाता है की व्याख्याओं को इस तरह से संक्षेपित किया जाये ताकि बाद में जब रिपोर्टिंग की प्रक्रिया की जाए तब निष्कर्षो को उचित ठहराया जा सके। प्रासंगिक साहित्य की समीक्षा में निष्कर्षो का भी उचित समर्थन होना चाहिए।

10.6 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा की व्याख्या की रणनीतियाँ

ऐसे कई तरीके है जिनसे डेटा की व्याख्या या संक्षेप में व्याख्या की जा सकती है। उनमें से कुछ निम्न है।

i. अंतिम सूची बनाना
ii. विस्तृत विवरण
iii. मेट्रिसेस का उपयोग

अंतिम सूची बनाना (Making a final list) - शोधकर्ता लेबल की गई श्रेणियों को सारांशित कर उन्हें कोड करके निष्कर्षो की अंतिम सूची तैयार करता है, जिसे रिपोर्ट बनाने के बाद के चरण में समझाया जा सकता है।

विस्तृत विवरण (Elaborate narratives) - शोधकर्ता डेटा से निष्कर्षो को अर्थ या विस्तार भी दे सकता है। जो डेटा साक्षात्कार, रिकॉर्डिंग और चर्चा के माध्यम से एकत्र किया गया है।

मेट्रिसेस का उपयोग (Use of matrices) - मैट्रिक्स एक प्रकार का चार्ट होता है जिसमें शब्द होते है और यह एक क्रॉस टेबल की तरह दिखता है। शोधकर्ता महत्वपूर्ण चर में दिये गये शब्दों के आधार पर यदि विभिन्न समूहों या डेटा सेट की तुलना करता है, तो वह मैट्रिक्स का उपयोग कर सकता है।

उदहारण के लिए, यदि शोधकर्ता एक स्कूल के छात्र तथा छात्राओं की संख्या की तुलना करना चाहता है जो किसी खास कंपनी के स्पोर्ट्स उत्पाद का उपयोग कर रहे है। तो शोधकर्ता निम्नलिखित मैट्रिक्स के रूप में जानकारी का प्रतिनिधित्व कर सकता है।

तालिका: आयु, वर्ग और लिंग का संकेत देने वाला मैट्रिक्स

आयु समूह	छात्रों की संख्या	छात्राओं की संख्या
>15	45	48
>20	11	13

तालिका: विभिन्न आयु समूह के छात्रों के बीच एक स्पोर्ट्स उत्पाद के उपयोग पर मैट्रिक्स

प्रवाह चार्ट (Flow Chart)- प्रवाह चार्ट एक आरेखीय चित्र होता है। जिसमें डिब्बे (Boxes) चरों का प्रतिनिधित्व करते है तथा तीर उन चरों के बीच का संबंध दर्शाते है।

जब हम विभिन्न आयु समूहों के छात्र और छात्राओं जो कि स्पोर्ट्स उत्पादन का उपयोग करते है, की तुलना को निम्नलिखित आकृति के रूप में दर्शाया जा सकता है।

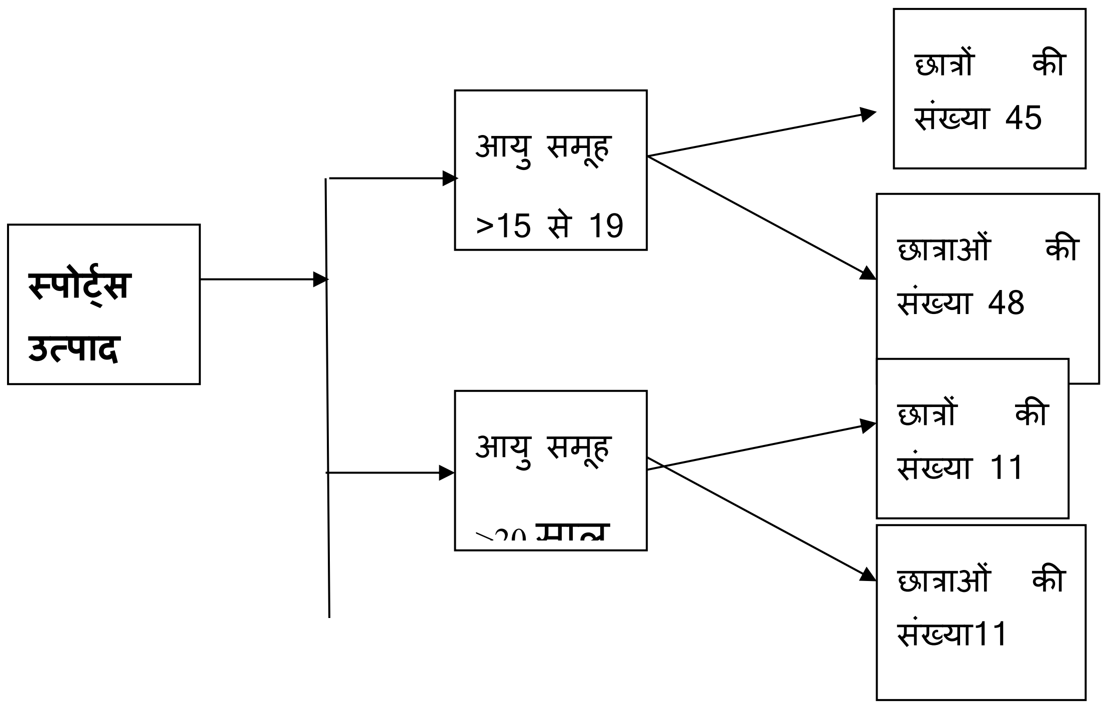

10.7 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा की रिपोर्टिंग का अर्थ और अवधारणा

शोधकर्ता या विश्लेषक के लिये आयोजित शोध के निष्कर्षों की रिपोर्ट तैयार करना एक परम चुनौती है। डेटा की रिपोर्टिंग प्रासंगिक समर्थन द्वारा समर्थित व्याख्याओं और निष्कर्षो की अंतिम चर्चा प्रासंगिक साहित्य और इस तरह के निष्कर्षो के पीछे के कारण को संदर्भित करती है।

10.8 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा की एक रिपोर्ट तैयार करने के चरण

आयोजित किये गये शोध की अंतिम रिपोर्ट तैयार करते समय, शोधकर्ता को बहुत सतर्क और कम से कम पक्षपाती (Biased) होने की आवश्यकता होती है। रिपोर्ट को एक संगठित रूप में दर्शाया जा सकता है। यदि शोधकर्ता द्वारा निम्न चरणों का पालन किया जाये। ये चरण निम्नलिखित है:

i. रिपोर्ट की सामग्री की तैयारी
ii. रिपोर्ट की समीक्षा और चर्चा
iii. कार्यकारी सारांश की तैयारी
iv. भविष्य के अनुसंधान का दायरा या अवसर

रिपोर्ट की सामग्री की तैयारी (Preparation of the content of report) - रिपोर्ट लिखने की प्रक्रिया को शुरू करने से पहले शोधकर्ता को शोध की आवश्यकता अनुसार निष्कर्षो को तैयार करना आवश्यक होता है।

उदहारण के लिये यदि शोधकर्ता को बैंक के कार्यो के आधार पर रिपोर्ट तैयार करनी है तो उसे पहले इस निष्कर्ष को तैयार करना होगा कि बैंक में फंड /बैंकर्स, कर्मचारियों, ग्राहक किस पर आधारित रिपोर्ट तैयार करेगा।

रिपोर्ट की समीक्षा और चर्चा (Review and discussion of the report)- शोधकर्ता के लिये यह भी आवश्यक है, कि वह शोध की व्याख्या, शोध की समीक्षा तथा परिणामों की चर्चा शोध से जुड़े हुए लोगों के साथ करे।

कार्यकारी सारांश की तैयारी (Preparation of the executive summary) - शोधकर्ता इसके बाद एक कार्यकारी सारांश (जो कि एक निष्कर्ष और अनुसंशा सारांश है) तैयार करता है। इस सारांश में अध्ययन के तहत संगठन के लोग, घटना और अभ्यास का विवरण शामिल हो सकता है। इसमें अनुसंधान लक्ष्यों, विधियों और विश्लेषण प्रक्रियाओं के निष्कर्षो और अनुशंसा की सूची और अन्य प्रासंगिक संलग्नक भी शामिल है। यदि आवश्यक हुआ तो सारांश में प्रश्नावली, साक्षात्कार, गाइड के विवरण, जिसका उपयोग शोधकर्ता द्वारा किया गया है, भी शामिल हो सकते है।

भविष्य के अनुसंधान का दायरा या अवसर (Scope of future research) - किये गये सभी शोधो के आधार पर, विश्लेषक उन क्षेत्रों जिनका आगे अध्ययन किया जा सकता है, की एक सूची तैयार करता है। ऐसे अवसर (दायरा) जब कभी भविष्य में इसी तरह के अन्य शोध किये जायेंगे, तब एक शोध योजना (Research Plan) के रूप में कार्य कर सकते है।

10.9 अनुसंधान रिपोर्ट की सामग्री

चूँकि शोध रिपोर्ट केवल सम्पूर्ण निष्कर्ष का एक वर्णनात्मक सारांश ही नहीं है, बल्कि वे समान क्षेत्रों में भविष्य के अनुसंधान के लिये एक मार्गदर्शक के रूप में भी कार्य करते है। रिपोर्ट का प्रलेखन बहुत ही महत्वपूर्ण और संवेदनशील होता है। रिपोर्ट पर्याप्त जानकारी का एक रिकॉर्ड होना चाहिए, जिसे जब और जैसे आवश्यकता हो तो आसानी से समझा जा सके।

एक रिपोर्ट की सामग्री तैयार करने के कई तरीके होते है। इनमें से एक तरीका इस प्रकार है:

i. **शीर्षक पृष्ठ (Title Page) -** रिपोर्ट के पहले पृष्ठ में शोध का विषय के साथ -साथ संगठन का नाम, उत्पाद /सेवा या वह कार्यक्रम जिस पर शोध किया जा रहा है, के साथ ही तारीख का विवरण प्रस्तुत किया जाता है।

ii. **विषय सूची (Table of Contents) -** शीर्षक पृष्ठ का कार्य पूर्ण कर लेने के पश्चात, शोधकर्ता शोध कार्य की सामग्री और उनके पेज नम्बर की सूची तैयार करता है।

iii. **कार्यकारी सारांश (Executive Summary) -** विषय सूची पूर्ण होने के बाद रिपोर्ट में शोध और उसके निष्कर्ष का एक कार्यकारी सारांश या सार शामिल होता है। यह आमतौर पर एक -पृष्ठ, निष्कर्षो का संक्षिप्त अवलोकन और आयोजित अनुसंधान की अनुसंशा होती है।

iv. **रिपोर्ट का उद्देश्य (Purpose of the Report) -** रिपोर्ट का उद्देश्य, अनुसंधान के लक्ष्यों और उद्देश्यों को दर्शाता है। यह अनुसंधान के प्रकार (गुणात्मक या मात्रात्मक) जिसका उपयोग शोधकर्ता द्वारा किया गया हो, का विवरण भी दिखाता है।

v. **अनुसंधान लक्ष्य की प्रासंगिक पृष्ठ्भूमि (Contextual Background of te Research Target) -** यह विषय लोगों /घटना /अभ्यास /अध्ययन के तहत कार्यक्रम तथा संगठन की एक ऐतिहासिक पृष्ठ्भूमि को दर्शाता है। इसमें उस समस्या जिस पर शोध करने की आवश्यकता है तथा सम्पूर्ण शोध के लक्ष्यों के साथ -साथ अनुसंधान के परिणाम एवं सुझावों का भी उल्लेख किया जाता है। शोध विषय वर्तमान शोध का जवाब देकर यह भी दर्शाता है, कि प्रश्न क्या है ? इस खण्ड में शोधकर्ता द्वारा की गई प्रासंगिक साहित्य की समीक्षा भी शामिल हो सकती है।

vi. **कार्य प्रणाली या क्रिया विधि (Methodology) -**अनुसंधान के संचालन में कार्यप्रणाली का खण्ड उपायों और प्रक्रियाओं के लिए उपयोग किया जाता है। मूल रूप से इसमें निम्नलिखित विवरण शामिल है।

a) **नमूना (Sample) -** यह उस नमूने की संख्या को दर्शाता है जिसका उपयोग कुल जनसंख्या में से शोध अध्ययन के लिये किया गया है।

b) **इस्तेमाल किये गये स्केल (Scales Used) -** इस अनुभाग में अनुसंधान से सम्बंधित उपकरणों और प्रश्नावली का उल्लेख किया जाता है।

c) **एकत्रित आंकड़ों के प्रकार (Type of Data Collected) -** डेटा के प्रकारों का विवरण (उदहारण के लिए साक्षात्कार, प्रश्नावली, रिकॉर्डिंग तथा अवलोकन आदि) का भी कार्यप्रणाली अनुभाग में उल्लेख किया जाता है।

Vii परिणाम और निष्कर्ष (Results and Findings) - यह खण्ड एकत्र किये गए डेटा के विश्लेषण से सम्बंधित है। यह अनुसंधान के परिणाम और निष्कर्ष की चर्चा करता है।

Viii व्याख्या और उपसंहार (Interpritation and Conclusion) - यह खण्ड डेटा के विश्लेषण के निष्कर्षो की व्याख्या और चर्चा से सम्बंधित है। व्याख्याओं के आधार पर परिणाम सम्पन्न होते है। उपसंहार अनुभाग यह दिखाता है कि परिणाम कैसे और किस हद तक महत्वपूर्ण है और क्या यह अनुसंधान लक्ष्य और अन्य शोधकर्ताओं के लिये सहायक है।

ix अध्ययन या अनुसंधान की सीमाएं (Limitations of the Study or Research) - इस खण्ड में निष्कर्षों की सीमाओं के प्रतिबंध शामिल है। यह दिखाता है कि कैसे और किन परिस्थितियों में परिणामों को सामान्यीकृत किया जा सकता है।

X अनुसंशा और निहितार्थ (Recommendations and Implications) - शोधकर्ता शोध अध्ययन के सुझाव और आयोजन की अनुसंशा और निहितार्थ प्रस्तुत करता है।

Xi सन्दर्भ (References) - शोधकर्ता उन लेखकों, पुस्तकों,अध्ययनों और पत्रिकाओं को इंगित करता है। जो अनुसंधान के लिये प्रासंगिक साहित्य समीक्षा प्रदान करने में सहायक थे।

Xii परिशिष्ट (Appendices) - शोध रिपोर्ट के अंतिम भाग में विभिन्न स्रोतों (जैसे - प्रश्नावली, कंपनी के रूप, मामले का अध्ययन, सारणीबद्ध प्रारूप में डेटा, प्रशंसापत्र) जो शोधकर्ता द्वारा विश्लेषण और उपयोग किये गए थे, का विवरण उल्लिखित होता है।

10.10 गुणात्मक अनुसंधान में डेटा के मूल्यांकन, व्याख्या और रिपोर्टिंग में क्या करें और क्या न करें

डेटा का मूल्यांकन, विश्लेषण और रिपोर्टिंग करते समय विश्लेषक को क्या -क्या करें और क्या -क्या न करें के बारे में सतर्क रहने की आवश्यकता है।

- **क्या करे :**

- डेटा के पहलुओं को संसाधित करते समय शोधकर्ता को पूरा ध्यान रखना चाहिए तथा निम्नलिखित बिंदुओं को शामिल करने का प्रयास करना चाहिए।
  - i. विश्लेषक को स्पष्ट, विशिष्ट और नमूना (Sample) आबादी का वर्णन करना चाहिए।
  - ii. विश्लेषक को डेटा प्रसंस्करण में अपनी सुविधा के लिए डेटा को कोड करना चाहिए।
  - iii. डेटा की संक्षेप में व्याख्या करने के लिए विश्लेषक को अक्सर आरेख, प्रवाह चार्ट या मैट्रिक्स का उपयोग करना चाहिए।
  - iv. विश्लेषक को वर्तमान अध्ययन और इसी तरह के क्षेत्र में सम्बंधित अन्य अध्ययन के आधार पर निष्कर्ष निकालना चाहिए।
  - v. जब -जब आवश्यक हो, विश्लेषक को आगे के लिए नीतियों को विकसित करना चाहिए और उनकी वैधता को साबित करने के लिए (गुणात्मक) डेटा का मूल्यांकन या पुष्टि करनी चाहिए।

- **क्या न करें :**

- शोधकर्ता को डेटा के पहलुओं को संसाधित करते समय पूरा ध्यान रखना चाहिए और निम्नलिखित बिन्दुओं से बचने की कोशिश करनी चाहिए।

i. शोधकर्ता या विश्लेषक को पूरी तरह से चयनित अनुसंधान डिज़ायन पर निर्भर नहीं होना चाहिए क्योंकि कोई भी अनुसंधान डिज़ायन अपने आप में परिपूर्ण नहीं होता है।

ii. विश्लेषक को केवल सफलताओं के बारे में ही साक्षात्कार नहीं करना चाहिए क्योंकि असफलताएं भी महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करती है।

iii. विश्लेषक को पूरी तरह से प्रश्नावली पर निर्भर नहीं होना चाहिए क्योंकि ज्यादातर जानकारी अवलोकन और साक्षात्कारों के माध्यम से उपलब्ध हो सकती है।

10.11 सारांश

उपरोक्त चर्चाओं के आधार पर, यह मूल्यांकन किया जा सकता है कि गुणात्मक शोध अध्ययन में गुणवत्ता मूल्यांकन अभी भी एक चुनौतीपूर्ण क्षेत्र बना हुआ है। डेटा को संसाधित करने के तरीके में प्रत्येक प्रक्रिया के व्यवस्थित चरण (जो कि मूल्यांकन, व्याख्या और रिपोर्टिंग) है, वो सामान रूप से महत्वपूर्ण और संवेदनशील मामला है। रिपोर्ट की विश्वसनीयता डेटा की व्याख्या के लिए अच्छी रणनीतियों के चयन पर निर्भर करती है। शोधकर्ता को अनुसंधान के डेटा को संसाधित करते समय क्या करना है, और क्या नहीं करना है, के लिए सावधान रहने की आवश्यकता है।

10.12 कठिन शब्द

मूल्यांकन - किसी व्यक्ति या वस्तु का होने वाला अंकन

सर्वेक्षण - किसी विषय के सभी अंगों का वस्तुनिष्ठ और वैज्ञानिक निरीक्षण

अनुसंधान - किसी घटना या विषय के मूल कारणों या रहस्यों का पता लगाने की क्रिया

सूचीबद्ध - किसी वस्तु का रिकॉर्ड उसकी आवश्यकता के आधार पर रखना

प्रश्नावली - किसी विषय से सम्बंधित प्रश्नों की सूची

फोकस समूह - केन्द्र समूह

पूर्वाग्रह - किसी ख़ास वस्तु, व्यक्ति या सोच के प्रति झुकाव

पूर्वानुमान - पहले से ही लगाया जाने वाला अनुमान

प्रासंगिक - किसी अवसर, विषय आदि का आधिकारिक दृश्य

विश्लेषक - किसी समस्या की छानबीन करने वाला व्यक्ति

मार्गदर्शिका - दिशा दिखाने वाली

10.13 सुझाए गए रीडिंग और सन्दर्भ

1. Miles, MB and Huberman AM (1984) Qualitative Data Analysis, A Sourcebook
2. of New Methods. Beverley Hills, CA, USA.: Sage Publications.
3. Patton, MQ (1990) Qualitative Evaluation and Research Methods. 2nd ed.
4. Newbury Park, CA: Sage Publications.
5. http://www.qualres.org/HomeGuid-3868.html
6. http://wilderdom.com/OEcourses/PROFLIT/Class6Qualitative1.htm
7. http://wps.prenhall.com/chet_airasian_edresearch_8/38/9871/2527218.cw/
8. index.html
9. http://www.idrc.ca/cp/ev-56451-201-1-DO_TOPIC.html
10. http://www.idrc.ca/cp/ev-56467-201-1-DO_TOPIC.html
11. http://www.phru.nhs.uk/Doc_Links/Qualitative%20Appraisal%20Tool.pdf

10.14 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

I. सही विकल्प चुने (Choose the correct alternative)

i. निम्न लिखित में से कौन सा तथ्य व्याख्या से मूल्यांकन को अलग करता है?

a) व्याख्या के लिए डेटा विश्लेषण से अधिक वैचारिक और एकीकृत सोच की आवश्यकता होती है।

b) व्याख्या में डेटा का कम्प्यूटरीकृत विश्लेषण शामिल है।

c) मूल्यांकन व्याख्यात्मक और विवेचनात्मक अवधारणा है।

d) मूल्यांकन में अवधारणा शामिल है लेकिन व्याख्या में अवधारणा शामिल नहीं है।

ii. निम्नलिखित में से कौन गुणात्मक डेटा की प्रकृति की व्याख्या का वर्णन करता है।

a) प्रतिबिंब

b) एकीकृत

c) व्याख्यात्मक

d) उपरोक्त में से कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये (Fill in the blanks)

i. प्रवाह चार्ट ....का आरेखीय चित्र है।

ii. डेटा की रिपोर्टिंग से तात्पर्य निष्कर्ष और .... की अंतिम चर्चा से है।

iii. मैट्रिक्स एक प्रकार .... का है।

III. बताएं कि क्या निम्नलिखित कथन सही है या गलत (State whether the following statements are true or false)

i. विश्लेषक स्पष्ट, विशिष्ट और आबादी नमूने का वर्णन करना चाहिए। ( )

ii. विश्लेषक को केवल सफलताओं के बारे में साक्षात्कार करना चाहिए। ( )

iii. परिणामों की व्याख्या के आधार पर निष्कर्ष निकाला जाता है। ( )

iv. विश्लेषक को आरेखों, प्रवाह चार्ट या मैट्रिसेस के लगातार उपयोग से बचना चाहिए। ( )

10.15 निबंधात्मक प्रश्न

1) गुणात्मक अनुसंधान में मूल्यांकन, व्याख्या और रिपोर्टिंग की अवधारणा और अर्थ का वर्णन करें?
2) गुणात्मक अनुसंधान में रिपोर्ट की तैयारी के साथ -साथ डेटा का मूल्यांकन या विश्लेषण के चरणों को समझाइये?
3) गुणात्मक अनुसंधान में डेटा की रणनीतियों का वर्णन करें?
4) डेटा संसाधित करते समय बुनियादी जरूरतों में क्या शामिल करना चाहिए तथा क्या नहीं करना चाहिए?

इकाई 11. शोध प्रस्ताव की तैयारी
(Preparation of Research Proposal)

इकाई संरचना

11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 शोध प्रस्ताव तैयार करना
11.4 सारांश
11.5 शब्दावली
11.6 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
11.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
11.8 निबन्धात्मक प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

कोई भी शोध प्रस्ताव तैयार करना शोध प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण एवं कठिन कार्य है। शोध प्रस्ताव से तात्पर्य एक ऐसे प्रस्ताव से होता है जिसमें शोधकर्त्ता किसी शोध समस्या के समाधान के लिए विशेष कार्यविधि, संभावित समय एवं अनुमानित धन खर्च आदि का उल्लेख करता है। शोध कार्य शुरू करने के पूर्व शोधकर्त्ता को शोध प्रस्ताव तैयार करना उसकी मंजूरी के लिए आवश्यक होता है। अलग-अलग ढंग से विभिन्न संस्थाएँ शोध प्रस्ताव मॉगती हैं। अतः शोध प्रस्ताव का कोई निश्चित प्रारूप तो नहीं है, परन्तु किसी भी शोध प्रस्ताव में जो आवश्यक चरण होते हैं उनका वर्णन इस इकाई में किया जायेगा।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगे:

- शोध प्रस्ताव कैसे तैयार किया जाता है।
- शोध प्रस्ताव देने के आवश्यक चरण।

11.3 शोध प्रस्ताव तैयार करना

किसी भी शोध प्रस्ताव को तैयार करते समय निम्नलिखित चरणों का उल्लेख करना आवश्यक होता है –

1) **समस्या का उल्लेख तथा उसका महत्व-** सर्वप्रथम किसी भी शोध प्रस्ताव को तैयार करते समय जिस समस्या को लेकर अध्ययन करना होता है उसका उल्लेख करना आवश्यक होता है। समस्या का उल्लेख घोषणात्मक कथन के रूप में भी हो सकता है और प्रश्नवाचक कथन के रूप में किया जा सकता है। सामान्यतः

शोध समस्या का उल्लेख करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि शोध का जो विशिष्ट लक्ष्य है वह स्पष्ट हो जाय। शोध का क्या महत्व है तथा इसका क्या लाभ होगा, इसका उल्लेख करना आवश्यक होता है। शोध समस्या के उल्लेख के कुछ उदाहरण इस प्रकार है -

a. सहशिक्षा में नैतिकता का स्तर गिर रहा है।
b. आर्थिक स्तर का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन।

2) **परिभाषा, पूर्व कल्पना, परिसीमा तथा सीमांकन-** यह शोध प्रस्ताव का दूसरा चरण होता है। इसमें शोधकर्त्ता को शोध प्रस्ताव तैयार करते समय इन चार पक्षों का उल्लेख अवश्य करना चाहिए।

अ-परिभाषा- शोध में शामिल किए जाने वाले सभी चरों को परिभाषित करना आवश्यक होता है। चरों को परिभाषित कर देने से शोध प्रस्ताव का मूल्यांकन करने में सहायता मिलती है।

ब-पूर्वकल्पना- शोध में किन-किन पूर्वकल्पनाओं का परीक्षण किया जायेगा उनका शोध प्रस्ताव में उल्लेख करना आवश्यक होता है।

स-परिसीमा- जो भी दोष शोध में होंगें या वे स्थितियाँ जो शोधकर्ता के नियंत्रण से बाहर होंगी, जिनका शोध निष्कर्ष की शुद्धता पर प्रभाव पड़ेगा, इनका भी शोध प्रस्ताव में उल्लेख करना आवश्यक होता है।

द-सीमांकन- सीमांकन से तात्पर्य अध्ययन की सीमा कहाँ तक होगी, इसका निर्धारण करना आवश्यक होता है। यह भी शोध प्रस्ताव में उल्लेख करना आवश्यक होता है कि अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष किन व्यक्तियों पर लागू होंगे।

3) **सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा-** शोध प्रस्ताव तैयार करते समय यह आवश्यक होता है कि जिस समस्या का अध्ययन किया जाना है इसके पूर्व इससे सम्बन्धित जो शोध हुए हैं उनका उल्लेख अवश्य किया जाय, विशेषकर उन अध्ययनों को अवश्य जिनकी सार्थकता है। इस प्रकार की सीमक्षा से यह लाभ होता है कि -

i) पहले किए गए अध्ययनों की पुनरावृत्ति नहीं होती है।
ii) समस्या से सम्बन्धित उत्तम परिकल्पनाओं के निर्माण में सहायता मिलती है।
iii) सम्बन्धित शोधों के समीक्षा से यह ज्ञात हो जाता है कि अब तक समस्या से सम्बन्धित किन पक्षों का अध्ययन नहीं हुआ है।

4) **प्राक्कल्पना-** शोध प्रस्ताव तैयार करने के इस चरण में शोध समस्या से सम्बन्धित प्राक्कल्पनाओं का निर्माण करना आवश्यक होता है। प्राक्कल्पनाओं के उल्लेख से समस्या के स्वरूप तथा शोध के पीछे तर्क के विषय में पता चलता है। शोध प्राक्कल्पना शोध समस्या का प्रस्तावित अस्थायी उत्तर होती है। यह एक ऐसा अनुमान होता है जो पूर्व शोध या सिद्धान्त पर आधारित होता है। प्रदत्त संकलन के पूर्व प्राक्कल्पनाओं का निर्माण आवश्यक होता है।

5) **विधियाँ -** शोध प्रस्ताव के इस चरण में तीन बातों का उल्लेख करना आवश्यक होता है- प्रयोज्य, प्रक्रिया या कार्यविधि तथा प्रदत्त विश्लेषण कैसे किया जायेगा।
6) **समय अनुसूची-** शोध प्रस्ताव में शोधपूर्ण कर लेने की एक समय सीमा देना आवश्यक होता है। सामान्यतः शोध के कार्यों को छोट-छोटे भागों में बाँटकर प्रत्येक भाग (इकाई) को पूरा करने के समय का उल्लेख कर दिया जाता है।
7) **संभावित परिणाम-** शोध प्रस्ताव तैयार करते समय शोध के संभावित परिणामों का भी उल्लेख कर दिया जाता है। उन तथ्यों का भी उल्लेख कर दिया जाता है जो शोध के लिए महत्वपूर्ण होते हैं।
8) **संदर्भ-** इस चरण में शोध प्रस्ताव तैयार करते समय जिन वैज्ञानिकों के शोध का उल्लेख साहित्य समीक्षा में किया गया रहता है उनके शोधों एवं नाम का उल्लेख शोध प्रस्ताव में अवश्य किया जाता है।
9) **परिशिष्ट-** किसी भी शोध प्रस्ताव में परिशिष्ट का होना आवश्यक होता है। इसमें उन सभी सामग्रियों की सूची होती है जिसे शोध में उपयोग किया जाना है, इसमें उपयोग में लिए जाने वाले परीक्षणों या मापनियों, उपकरणों आदि की सूची भी अवश्य होती है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि किसी भी शोध प्रस्ताव के कई चरण होते हैं। इन चरणों को ध्यान में रखकर ही शोधकर्त्ता को शोध प्रस्ताव तैयार करना चाहिए।

11.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान चुके हैं कि किसी भी समस्या से सम्बन्धित कोई भी शोध प्रस्ताव तैयार करते समय इन चरणों में ही पूरा प्रस्ताव तैयार करना चाहिए - सर्वप्रथम समस्या का उल्लेख किया जाय तथा उसके महत्व को बतलाया जाय। इसके बाद अध्ययन में शामिल किए जाने वाले चरों को जिनका मापन किया जाना है परिभाषित किया जाय। पूर्व कल्पना, अध्ययन की क्या परिसीमा होगी तथा अध्ययन क्षेत्र का सीमांकन आवश्यक है। तीसरे चरण में सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा इसके बाद समस्या से सम्बन्धित उन प्राक्कल्पनाओं का उल्लेख करना आवश्यक होता है जिनका अध्ययन में परीक्षण या मापन करना होता है। पाँचवे चरण में किन प्रयोज्यों को लेना है ओर कितने प्रयोज्य होंगे, अध्ययन की विधि या प्रक्रिया क्या होगी तथा ऑंकड़ों का विश्लेषण करने में किन उपयुक्त सांख्यिकीय विधियों का उपयोग किया जाएगा उल्लेख किया जाता है। शोध प्रस्ताव के छठवें चरण में इसका भी उल्लेख कर दिया जाता है कि शोध कितने समय में पूरा होगा अर्थात् शोध पूरा होने की समय सीमा तय कर दी जाती है। शोध में संभावित परिणाम क्या होंगे इसका भी उल्लेख अगले चरण में कर दिया जाता है। शोध प्रस्ताव को तैयार करने में जिन अनुसंधानों का सहारा लिया उसका उल्लेख संदर्भ के रूप में कर दिया जाता है। शोध प्रस्ताव के अंतिम चरण में शोध में प्रयुक्त हुए परीक्षणों, मापनियों, उपकरणों आदि की सूची परिशिष्ट के अंतर्गत लगा दी जाती है।

11.5 शब्दावली

- **शोध प्रस्ताव:** शोधकार्य प्रारम्भ करने के पूर्व शोधकर्त्ता एक शोध प्रस्ताव तैयार करता है जिसमें किसी शोध समस्या के समाधान के लिए विशेष कार्यविधि, संभावित समय एवं संभावित धन का व्यय आदि का उल्लेख करता है। इसी के आधार पर शोध प्रस्ताव का मूल्यांकन होता है तथा उसकी मंजूरी मिलती है।
- **समस्या:** किसी भी शोध में जिस समस्या का अध्ययन किया जाना है उसको शोध प्रस्ताव में स्पष्ट कर देना आवश्यक होता है। करलिंगर के अनुसार-समस्या एक प्रश्नात्मक कथन या वाक्य है जो स्पष्ट करता है कि दो या अधिक चरों में किस प्रकार का सम्बन्ध पाया जाता है। यह कथन समस्या के रूप में एक प्रश्न खड़ा करता है।
- **प्राक्कल्पना:** प्राक्कल्पना या परिकल्पना दो या दो से अधिक चरों के बीच स्थित सम्बन्ध के विषय में एक अनुमानिक (कल्पित) कथन है।" परिकल्पना किसी समस्या के संभावित उत्तर के रूप में किया गया कथन है।
- **सीमांकन:** इससे तात्पर्य अध्ययन की चाहरदीवारी से होता है। अध्ययन से प्राप्त तथ्य किन व्यक्तियों पर लागू होगा तथा उस विशिष्ट प्रतिदर्श के बाद निष्कर्ष को दूसरों के ऊपर सही नहीं माना जायेगा। इस प्रक्रिया को सीमांकन कहते हैं।

11.6 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1) परिकल्पना दो या दो से अधिक चरों के बीच स्थित सम्बन्ध के विषय में एक --कथन है।
2) समस्या एक प्रश्नात्मक ----- है।
3) शोधकार्य प्रारम्भ करने के पूर्व शोधकर्ता एक ---- तैयार करता है।
4) शोध प्रस्ताव तैयार करने में कुल कितने चरण होते है?

   1-चार 2-सात 3-आठ 4-नौ

उत्तर: 1-आनुमानिक 2-कथन या बाक्स 3-शोध प्रस्ताव 4- नौ

11.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- **कपिल, डा0 एच0 के0** (810): अनुसंधान विधियाँ- व्यवहारपरक विज्ञानों में, हर प्रसाद भार्गव, पुस्तक प्रकाशक, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- **त्रिपाठी, जयगोपाल** (807): मनोविज्ञान एवं शिक्षा में शोध पद्धतियाँ, एच0 पी0 भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- **त्रिपाठी, प्रो0 लाल बचन एवं अन्य** (808): मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतियाँ, एच0 पी0 भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।

- **सिंह, अरूण कुमार** (809): मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल- बनारसी दास, पटना एवं वाराणसी।
- Goode, W.J. & Hatt, P. K. (781): Methods in Scoial Research
- Festinger and Katz : Research method in Behavioural Sciences.
- Kerlinger, F.N. (786): Foundations of Behavioural Research
- Mc Guin, F.J. (790) : Experimental Psychology

11.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. शोध प्रस्ताव तैयार करने के प्रमुख चरणों का वर्णन कीजिए।
2. टिप्पणी लिखिए:
   i. समस्या
   ii. प्राक्कल्पना

इकाई 12 . शोध प्रतिवेदन लेखन

(Writing a Research Report)

इकाई संरचना

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 शोध प्रतिवेदन लिखना

12.4 सारांश

12.5 शब्दावली

12.6 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

12.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

12.9 निबन्धात्मक प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

किसी भी समस्या पर अनुसंधान या शोध करके उसका निष्कर्ष निकाल लेना ही महत्वपूर्ण नहीं होता है बल्कि उसे एक वैज्ञानिक तरीके से प्रतिवेदित करना भी उसका मुख्य उद्देश्य होता है। प्रतिवेदन तैयार करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक होता है कि उसके प्रस्तुतीकरण का स्वरूप इतना विस्तृत न हो कि उसमें अनावश्यक सूचनाएँ भर जाँच और यह भी ध्यान रखना चाहिए कि इतना संक्षिप्त भी न हो कि उसमें आवश्यक सूचनाएँ आने से रह जाँच। इसलिए यह आवश्यक है कि प्रतिवेदन इस प्रकार का हो कि उसमें संगठित रूप से शोध से सम्बन्धित सभी आवश्यक सूचनाएँ अवश्य आ जाय। किसी शोध के प्रतिवेदन में अन्य बातों के अलावा स्पष्टता, यथार्थता तथा संक्षिप्तता तीन प्रमुख गुण होते हैं। किसी भी मनोवैज्ञानिक शोध को वैज्ञानिक ढंग से प्रतिवेदित करने के लिए अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ ने जो प्रारूप तैयार किया है वह ठीक है। भारतीय मनोवैज्ञानिक भी इसी प्रारूप का उपयोग शोध प्रतिवेदन लिखने में कर रहे हैं।

12.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगे:

- शोध प्रतिवेदन कैसे लिखा जाता है।
- शोध प्रतिवेदन से नई दिशा का बोध होगा।
- विज्ञान के वृहद क्षेत्र से शोध को जोड़ना।

- शोध की परख होगी।

12.3 शोध प्रतिवेदन लिखना

अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ ने शोध प्रतिवेदन लिखने हेतु एक प्रारूप दिया है जिसका अनुपालन भारतीय मनोवैज्ञानिक भी अपने शोध को उसी ढंग से प्रकाशित कर रहे हैं। इस प्रारूप को ध्यान में रखते हुए मनोवैज्ञानिक शोध कों हम निम्नलिखित भागों में बाँटकर प्रस्तुत कर सकते हैं -

1- शीर्षक पृष्ठ-

मनोवैज्ञानिक शोध का शीर्षक एक पृष्ठ पर अलग से लिखा जाना चाहिए। शीर्षक के नीचे शोधकर्त्ता का नाम तथा उनके संस्था जिससे वे सम्बन्धित है का उल्लेख होना चाहिए।

2- सारांश-

किए गए शोध को समान्यतः 3-8 पंक्तियों में सारांश के रूप में लिखना चाहिए। इसमें शोध के उद्दश्य, कार्यविधि, परिणाम एवं निष्कर्ष को अवश्य लिखना चाहिए। सारांश सुस्पष्ट एवं संक्षिप्त होना चाहिए।

3- प्रस्तावना या आमुख-

प्रस्तावना को एक अलग पृष्ठ पर लिखना चाहिए इसका कोई अलग से शीर्षक नहीं होता है। इसमें मुख्य रूप से शोधकर्त्ता शोध समस्या क्या है तथा उसका उद्देश्य क्या है का विशेष रूप से वर्णन करता है। इसमें शोध समस्या की पृष्ठ भूमि तैयार करने के दृष्टि से शोधकर्त्ता सम्बन्धित अध्ययनों का समीक्षात्मक रूप में वर्णन करता है। शोध के उद्देश्य को प्राक्कल्पना के रूप में उल्लेख किया जाता है। शोध में एक या एक से अधिक प्राक्कल्पना हो सकती है।

4- विधि-

यह प्रतिवेदन का मुख्य भाग होता है। इस भाग में शोधकर्त्ता विस्तार से शोध या प्रयोग के तरीकों का वर्णन करता है। इस भाग को तीन उपभागों में बाँटकर रिपोर्ट तैयार किया जाता है।

(क) **प्रयोज्य** - इसमें यह उल्लेख किया जाता है कि अध्ययन में प्रयोज्यों की संख्या क्या है। इनकी पूरी पृष्ठभूमि का उल्लेख करना आवश्यक होता है। प्रयोज्यों का चयन करने का ढ़ंग क्या था

(ख) **उपकरण** - जिन उपकरणों या परीक्षणों का उपयोग शोध में हुआ रहता है उनका उल्लेख इसके अर्न्तगत किया जाता है।

(ग) **कार्यविधि-** प्रयोग या परीक्षण कैसे किया गया, प्रयोज्यों को क्या निर्देश दिए,किस प्रकार के शोध अभिकल्प का उपयोग शोध में किया गया इस सबका उल्लेख करना शोध प्रतिवेदन प्रस्तुत करते समय आवश्यक होता है।

5- परिणाम-

इस भाग में शोधकर्त्ता यह लिखता है कि प्रयोग या शोध में किस प्रकार के प्रदत्त (तथ्य) प्राप्त हुए। ऑंकड़ों के विश्लेषण में किस प्रकार की सांख्यिकीय विधियों का उपयोग किया गया। परिणाम के ऑंकड़ों को ग्राफ, चित्र तथा सारिणी के रूप में भी व्यक्त किया जाता है। परिणाम लिखते समय यह ध्यान देना आवश्यक होता है कि प्राप्त ऑंकड़ों के आधार पर कसी भी प्रकार के अनुमान तथा निष्कर्ष का उल्लेख नहीं होना चाहिए।

6- विवेचना-

इस भाग में शोधकर्त्ता समस्या, परिणाम तथा प्राप्त निष्कर्षों का उल्लेख करता है। इसमें शोधकर्त्ता शोध से प्राप्त ऑंकड़ों की व्याख्या करता है। वर्तमान शोध के परिणाम पहले के शोधों के परिणामों से मेल खाते हैं कि नहीं या उनसे भिन्न हैं। शोध प्राक्कल्पनाओं की पुष्टि हो रही है या नहीं। यदि शोध प्राक्कल्पना की पुष्टि नहीं हो रही है तो उन कारणों पर भी प्रकाश डाला जाता है कि जिससे ऐसा हुआ। विवेचना वाले इस भाग में प्राप्त परिणामों का सामान्यीकरण किन-किन के ऊपर किया जा सकता है, इसमें जो परिसीमाएँ होती हैं उनका भी वर्णन किया जाता है। उन चरों का भी उल्लेख किया जाता है जिनका नियंत्रण नहीं किया जा सका। यदि शोध प्रारूप या कार्य विधि में कोई परिवर्तन किया गया है तो उसका भी उल्लेख इस भाग में किया जाता है। इस भाग में शोध किस विषय से सम्बन्धित है तथा उसके प्राप्त परिणाम या निष्कर्ष क्या है का भी वर्णन किया जाता है।

7- संदर्भ-

इस भाग में उन सभी अध्ययनों या लेखकों को आकारादि क्रम से लिखा जाता है जिन्हें अध्ययन में शामिल किया गया था। संदर्भ को विशेषकर इस प्रकार लिखते हैं –

- **Anderson, R.L. and Baneroft, T.A. (752).** Statistical Theory in Research. New york: Mc Graw Hill.
- **Cohen, L. (755).** Statistical Methods for Social Scientists. An Introduction, N.J. Prentice Hall Inc.
- **D' Amato, M.R. (770).** Experimental Psychology, New york : Mc Graw Hill

8- परिशिष्ट

इसमें शोधकर्त्ता शोध में प्रयुक्त परीक्षणों, विस्तृत सांख्यिकीय गण्ना तथा कम्प्यूटर कार्यक्रम आदि को रखता है।

12.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान चुके हैं कि शोध प्रतिवेदन को कैसे और किन चरणों में लिखा जाता है। संक्षेप में उन चरणों का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है।

1- **शीर्षक पृष्ठ**

अ- शीर्षक

ब- लेखक या शोधकर्त्ता का नाम एवं संबंधन

स- सतत् शीर्षक

द- आभारोक्ति

2- सारांश

3- आमुख या प्रस्तावना

अ- समस्या का उल्लेख

ब- साख्यिकी समीक्षा

स- उद्देश्य एवं प्राक्कल्पना

4- विधि

अ- प्रयोज्य

ब- परीक्षण या उपकरण

स- शोध अभिकल्प

द- कार्यविधि या प्रक्रिया

5- परिणाम

अ- सारिणी एवं चित्र

ब- सांख्यिकी प्रस्तुतीकरण

6- विवेचना

अ- प्राक्कल्पना की पुष्टि या अपुष्टि

ब- व्यावहारिक आशय

स- निष्कर्ष

7- संदर्भ

8- परिशिष्ट

12.5 शब्दावली

- **शोध प्रतिवेदन:** किसी समस्या का शोध करके उसके निष्कर्ष क्रियाविधि, उद्देश्य आदि का वैज्ञानिक ढ़ंग से प्रस्तुत करना ही शोध प्रतिवेदन कहलाता है।
- **सारांश:** शोध के उद्देश्य, निष्कर्ष, कार्यविधि, परिणाम आदि को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करना।

12.6 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1) शोध प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के कुल कितन अनुच्छेद हैं।

1-सात 2-पाँच 3-छः 4-आठ

2) विधि के अंतर्गत इनमें से किसका वर्णन नहीं किया जाता है।

1-प्रयोज्य 2-शोध अभिकल्प 3-उद्देश्य एवं प्राक्कल्पना 4-शीर्षक

3) सारिणी एवं चित्र शोध प्रतिवेदन के किस अनुच्छेद में दिया जाता है।

1-शीर्षक पृष्ठ 2-सारांश 3-परिणाम 4-विवेचना

4) इनमें से किसका विवेचना में वर्णन होता है।

1-निष्कर्ष 2-प्रयोज्य 3-आभारोक्ति 4-प्रयोज्य

उत्तर: 1-आठ 2-शीर्षक 3-परिणाम 4- निष्कर्ष

12.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- कपिल, डा0 एच0 के0 (810)**:** अनुसंधान विधियाँ- व्यवहारपरक विज्ञानों में, हर प्रसाद भार्गव, पुस्तक प्रकाशक, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- त्रिपाठी, जयगोपाल (807)**:** मनोविज्ञान एवं शिक्षा में शोध पद्धतियाँ, एच0 पी0 भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- त्रिपाठी, प्रो0 लाल बचन एवं अन्य (808)**:** मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतियाँ, एच0 पी0 भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- सिंह, अरूण कुमार (809)**:** मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल- बनारसी दास, पटना एवं वाराणसी।
- Goode, W.J. & Hatt, P. K. (781): Methods in Scoial Research
- Festinger and Katz : Research method in Behavioural Sciences.
- Kerlinger, F.N. (786): Foundations of Behavioural Research
- Mc Guin, F.J. (790) : Experimental Psychology

12.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. शोध प्रतिवेदन कैसे लिखा जाता है, उल्लेख कीजिए।
2. शोध प्रतिवेदन लिखने के अनुच्छेदों का सारांश लिखिए।

इकाई- 13 मनोवैज्ञानिक शोध में नैतिक मुद्दे एवं नियम

(Ethical issues and principles in Psychological research)

इकाई संरचना:

12.1 उद्देश्य

12.2 प्रस्तावना

12.3 नैतिकता की अवधारणा

12.4 मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में नैतिकता के सामान्य सिद्धांत

12.5 मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में नैतिक मुद्दे

12.6 मनोविज्ञान में अन्य नैतिक मुद्दे

12.7 मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में नैतिक मुद्दे में रखी जाने वाली सावधानियां

12.8 सारांश

12.9 शब्दावली

12.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

12.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

12.12 निबन्धात्मक प्रश्न

12.1 उद्देश्य:

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

1. नैतिकता की अवधारणा को समझ पाएँगे
2. सामाजिक शोध में पाए जाने वाले प्रमुख नैतिक मुद्दों की व्याख्या कर पाएँगे;

3. मनोवैज्ञानिक शोध के नैतिक मुद्दों की व्याख्या कर पाएँगे;
4. मनोवैज्ञानिक शोध सामान्य नैतिक नियमों को समझ पाएँगे
5. मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में नैतिक मुद्दे में रखी जाने वाली सावधानियां समझ पाएँगे

12.2 प्रस्तावना:

मनोविज्ञान एक बहुत ही संवेदनशील क्षेत्र है और किसी व्यक्ति को मनोवैज्ञानिक चिकित्सा की किसी भी विधि या अनुसंधान करने के दौरान नैतिक चिंताएं उत्पन्न होने की संभावना रहती है। मनोविज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों को खोजने व परिणाम हेतु संवेदनशीलता की जरूरत है|

मनोविज्ञान एक विशाल क्षेत्र है जो हमारे पर्यावरण और स्वयं पर हमारे जीन के निहितार्थ से संबंधित है। हमारे पास आज जो भी जानकारी है और जो भी विश्लेषण हम कर पा रहे हैं, वह बड़ी मात्रा में मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों के कारण हुआ है, जो आज तक चला आ रहा है और आज भी जारी है। शोध के परिणामों का विश्लेषण करने के बाद हम यह नहीं देख पाते की शोध के दौरान प्रतिभागियों को शारीरिक, भावनात्मक या मनोवैज्ञानिक रूप से कितना नुकसान उठाना पड़ा साथ ही उनको परिणामों से अवगत कराना भी आवश्यक होता है | अत : शोध के दौरान इस प्रकार के नैतिक मुद्दों को समझना आवश्यक है | प्रस्तुत इकाई में हम मनोवैज्ञानिक अनुसंधान से संबंधित नैतिक मुद्दों के बारे में अध्ययन करेंगे|

12.3 नैतिकता की अवधारणा:

मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में नैतिक मुद्दों को समझाने से पूर्व नैतिकता की अवधारणा को समझना आवश्यक है नैतिक मुद्दों का सम्बन्ध नीतिशास्त्र (ethics)से है। इसे परमशुद्ध विज्ञान माना जाता है। इसमें मनुष्य के कर्त्तव्यों एवं अकर्त्तव्यों पर विचार किया जाता है। इसे 'चरित्र का विज्ञान' भी कहा जाता है क्योंकि यह उचित और अनुचित में भेद दिखलाता है। नीतिशास्त्र नैतिक निष्कर्षों की सत्यता से सम्बन्धित है। नैतिक निर्णयों में मनुष्य के सामने अनेक विकल्प होते हैं। इन विकल्पों में तर्क के द्वारा स्पष्टीकरण करने की आवश्यकता होती है। इसीलिए यह माना जाता है कि नैतिक निर्णयों पर पहुँचने के लिए तर्कशास्त्र का ज्ञान भी आवश्यक है। वास्तव में, तर्कशास्त्र एवं नीतिशास्त्र दोनों ही दर्शनशास्त्र की प्रमुख शाखाएँ हैं। सभी समूहों, पेशो एवं व्यक्तियों को व्यवहार की एक ऐसी सामाजिक, धार्मिक तथा नागरिक संहिता को अपनाना होता है, जो सही (उचित) समझी जाती है। इसी दृष्टि से यह कहा जाता है कि सभी व्यक्तियों अथवा संगठनों को ऐसे विकल्पों का चयन करना होता है जिनका सही (नैतिक) अथवा गलत (अनैतिक) रूप में मूल्यांकन किया जा सके। इसमें कोई अपवाद नहीं है क्योंकि इसके प्रत्येक सोपान (चरण) में

नैतिकता या अनैतिक मुद्दे सामने आते हैं। शोधकर्ता से यह आशा की जाती है कि वह केवल नैतिक मुद्दों को ही महत्त्व प्रदान करे तथा जहाँ तक सम्भव हो सके किसी भी अनैतिक निर्णय या कार्य से बचें।

नैतिकता एक ऐसा व्यापक शब्द है जिसमें समाज की लगभग सभी मर्यादाओं का पालन हो जाता है। अत: सामाजिक व्यवस्था के लिए नैतिकता का सर्वाधिक महत्त्व है। नैतिकता ज्ञान की वह शाखा है जो नैतिक नियमों या संहिताओं से सम्बन्धित होती है। यही नैतिक नियम व्यक्ति के व्यवहार अथवा किसी क्रिया (जिसमें शोध भी सम्मिलित है) का संचालन करते हैं। इसे हम मानव व्यवहार के नैतिक मूल्यों अथवा व्यवहार को संचालित करने वाले नियमों का दर्शनशास्त्रीय अध्ययन भी कह सकते हैं।

नैतिकता (नैतिक आदर्श) या नैतिक संहिता (Moral code) का अनुमोदन (Sanction) किसी बाह्य शक्ति द्वारा नहीं किया जाता, वरन् इसके पीछे समाज की शक्ति का हाथ रहता है, जो समाज में कुरीतियों का दमन करती है। सामान्यतया वे नियम ही नैतिक आदर्श कहलाते हैं, जो हमारे चरित्र व आचरणों से सम्बन्धित होते हैं और जिनके पीछे व्यक्तियों के अन्त:करण व सामाजिक शक्तियों की अभिमति होती है अर्थात् इनके साथ समाज का अनुमोदन जुड़ा होता है। नैतिकता शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा की 'नी' धातु से हुई है जिसका तात्पर्य मार्गदर्शन करना हो ता है। समाज की मान्यताओं के अनुकूल कार्य करना नैतिक माना जाता है, जबकि उनके विपरीत कार्य करना अनैतिक माना जाता है। ऐसा भी माना जाता है कि नैतिकता शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन भाषा के ष्डवतंसपेष् शब्द से हुई है जिसका अर्थ 'तौर-तरीका' या 'चाल-चलन' (Manner), चरित्र' (Character) अथवा 'उचित व्यवहार' (Proper behaviour) है।

नैतिक आदर्शों अथवा कर्त्तव्यों के रूप में नैतिकता को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है-

मैकाइवर एवं पेज (MacIver and Page) के अनुसार-''नैतिकता (नैतिक आदर्श) नियमों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा व्यक्ति का अन्तःकरण उसे उचित और अनुचित का बोध कराता है।'' इन विद्वानो के मतानुसार धर्म एवं नैतिकता घनिष्ठ रूप में एक-दूसरे में गुँथे हुए हैं तथा इन दोनों में केवल निर्देशों की सत्ता एवं अनुमो दन के आधार पर ही भेद किया जा सकता है। धर्म नैतिक शिक्षा का उपदेश देता है तथा धर्म द्वारा अनुमोदित नियम नैतिक संहिताएँ कहे जाते हैं। इसीलिए को ई संहिता धार्मिक एवं नैतिक दोनों रूपो में स्वीकृत हो सकती है।

(Gisbert) के अनुसार-''नैतिक नियम, नियमों की वह व्यवस्था है जो अच्छे और बुरे से सम्बद्ध है तथा जिसका अनुभव अन्तरात्मा द्वारा होता है।'' उन्होंने जटिल मानवीय क्रियाओं में सामाजिक एवं नैतिक मुद्दों को परस्पर घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित माना है। जिसबर्ट ने नीतिशास्त्र एवं समाजशास्त्र में पारस्परिक सहयोग को महत्त्व प्रदान करने की वकालत की है। लिखा है-''नैतिकता कर्त्तव्य की वह आन्तरिक भावना है जिसमें उचित-अनुचित का

विचार सन्निहित हो।'' उचित-अनुचित का निर्धारण सांस्कृतिक मूल्यों के आधार पर होता है। इसीलिए प्रत्येक समाज की मूल्य व्यवस्था नैतिकता, धर्म, प्रथाओ , परम्पराओं, विश्वासों जैसे अन्य पहलुओं से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होती है।

12.4 सामान्य सिद्धांत (General Principle)

इस खंड में सामान्य सिद्धांत शामिल हैं। सामान्य सिद्धांत, का इरादा मनोवैज्ञानिकों को पेशे के उच्चतम नैतिक आदर्शों की ओर मार्गदर्शन और प्रेरित करना है। सामान्य सिद्धांत, नैतिक मानकों के विपरीत, दायित्वों का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं और प्रतिबंध लगाने के लिए आधार नहीं बनना चाहिए। या तो इन कारणों के लिए सामान्य सिद्धांतों पर भरोसा करना उनके अर्थ और उद्देश्य दोनों को विकृत करता है।

सामान्य सिद्धांत हैं-

सिद्धांत A: लाभप्रदता और गैर-विचलन (Beneficence and Nonmaleficence)

मनोवैज्ञानिक उन लोगों को लाभान्वित करने का प्रयास करते हैं जिनके साथ वे काम करते हैं और ध्यान रखते हैं कि कोई नुकसान न हो। अपने पेशेवर कार्यों में, मनोवैज्ञानिक उन लोगों के कल्याण और अधिकारों की रक्षा करना चाहते हैं जिनके साथ वे पेशेवर और अन्य प्रभावित व्यक्तियों, और अनुसंधान के पशु विषयों के कल्याण के लिए बातचीत करते हैं। जब मनोवैज्ञानिकों के दायित्वों या चिंताओं के बीच टकराव होता है, तो वे इन संघर्षों को एक जिम्मेदार तरीके से हल करने का प्रयास करते हैं जो नुकसान से बचता या कम करता है। क्योंकि मनोवैज्ञानिकों के वैज्ञानिक और पेशेवर निर्णय और कार्य दूसरों के जीवन को प्रभावित कर सकते हैं, वे व्यक्तिगत, वित्तीय, सामाजिक, संगठनात्मक, या राजनीतिक कारकों के प्रति सतर्क होते हैं और उनके प्रभाव का दुरुपयोग कर सकते हैं। मनोवैज्ञानिक उन लोगों की मदद करने की उनकी क्षमता पर उनके स्वयं के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के संभावित प्रभाव से अवगत होने का प्रयास करते हैं।

सिद्धांत बी: **निष्ठा और जिम्मेदारी(Fidelity and Responsibility)**

मनोवैज्ञानिक उन लोगों के साथ विश्वास के रिश्ते स्थापित करते हैं जिनके साथ वे काम करते हैं। वे समाज के लिए और विशिष्ट समुदायों के लिए अपनी पेशेवर और वैज्ञानिक जिम्मेदारियों के बारे में जानते हैं जिसमें वे काम करते हैं। मनोवैज्ञानिक आचरण के पेशेवर मानकों को बनाए रखते हैं, अपनी पेशेवर भूमिकाओं और दायित्वों को स्पष्ट करते हैं, अपने व्यवहार के लिए उचित जिम्मेदारी स्वीकार करते हैं, और ब्याज के संघर्षों का प्रबंधन करना चाहते हैं जिससे शोषण या नुकसान हो सकता है। मनोवैज्ञानिक उन लोगों के सर्वोत्तम हितों की सेवा करने के लिए

आवश्यक हद तक अन्य पेशेवरों और संस्थानों के साथ परामर्श, संदर्भ या सहयोग करते हैं, जिनके साथ वे काम करते हैं। वे अपने सहयोगियों के वैज्ञानिक और पेशेवर आचरण के नैतिक अनुपालन के बारे में चिंतित हैं। मनोवैज्ञानिक अपने पेशेवर समय के एक हिस्से को कम या बिना किसी मुआवजे या व्यक्तिगत लाभ के योगदान देने का प्रयास करते हैं।

सिद्धांत C: वफ़ादारी(Integrity)

मनोवैज्ञानिक विज्ञान, शिक्षा, शिक्षण और अभ्यास में सटीकता, ईमानदारी और सच्चाई को बढ़ावा देना चाहते हैं। इन गतिविधियों में मनोवैज्ञानिक चोरी, धोखा या धोखाधड़ी, तोड़फोड़ या तथ्य की जानबूझकर गलत प्रस्तुतीकरण में संलग्न नहीं होते हैं। मनोवैज्ञानिक अपने वादे रखने और नासमझी या अस्पष्ट प्रतिबद्धताओं से बचने का प्रयास करते हैं। ऐसी स्थितियों में, जिनमें धोखेबाज़ी लाभ को अधिकतम करने और नुकसान को कम करने के लिए नैतिक रूप से न्यायसंगत हो सकती है, मनोवैज्ञानिकों की आवश्यकता, किसी भी परिणामी अविश्वास या अन्य हानिकारक प्रभावों को ठीक करने की उनकी जिम्मेदारी पर विचार करने के लिए एक गंभीर दायित्व है, जो उपयोग के कारण उत्पन्न होते हैं। ऐसी तकनीकें।

सिद्धांत डी: न्याय(Justice)

मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि निष्पक्षता और न्याय सभी व्यक्तियों को मनोविज्ञान के योगदान से प्राप्त करने और लाभ उठाने और मनोवैज्ञानिकों द्वारा संचालित होने वाली प्रक्रियाओं, प्रक्रियाओं और सेवाओं में समान गुणवत्ता के हकदार हैं। मनोवैज्ञानिक उचित निर्णय का उपयोग करते हैं और यह सुनिश्चित करने के लिए सावधानी बरतते हैं कि उनके संभावित पूर्वाग्रह, उनकी क्षमता की सीमाएं, और उनकी विशेषज्ञता की सीमाएं अन्यायपूर्ण प्रथाओं का नेतृत्व या उनकी निंदा न करें।

सिद्धांत ई: लोगों के अधिकारों और सम्मान के लिए सम्मान(Respect for People's Rights and Dignity)

मनोवैज्ञानिक सभी लोगों की गरिमा और मूल्य , और व्यक्तियों के निजता , गोपनीयता और आत्मनिर्णय के अधिकार का सम्मान करते हैं। मनोवैज्ञानिक इस बात से अवगत होतें हैं कि विशेष सुरक्षा उन व्यक्तियों या समुदायों के अधिकारों और कल्याण की रक्षा के लिए उपाय आवश्यक हो सकते हैं जिनकी कमजोरियाँ स्वायत्त निर्णय लेने में बाधा उत्पन्न करती हैं। मनोवैज्ञानिक उम्र, लिंग, लिंग पहचान, नस्ल, जातीयता, संस्कृति, राष्ट्रीय मूल, धर्म, यौन अभिविन्यास, विकलांगता, भाषा और सामाजिक आर्थिक स्थिति के आधार पर सांस्कृतिक, व्यक्तिगत और भूमिका अंतर के बारे में जानते हैं और इन पर विचार करते हैं। । मनोवैज्ञानिक ऐसे समूहों के सदस्यों के साथ काम

करते समय उन कारकों के आधार पर पक्षपात के अपने काम पर प्रभाव को खत्म करने की कोशिश करते हैं, और वे जानबूझकर ऐसे पूर्वाग्रहों के आधार पर दूसरों की गतिविधियों में भाग नहीं लेते हैं।

12.5 मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में नैतिक मुद्दे :

मनोवैज्ञानिक शोधों में अक्सर यह देखा गया है कि कभी-कभी शोध अध्ययन का स्वरूप ऐसा होता है कि वह अध्ययन व्यवहारिक दृष्टिकोंण से साध्य या संभव तो है परंतु नैतिक दृष्टिकोंण से उसे करना संभव नहीं है जैसे यदि कोई शोधकर्ता यह अध्ययन करना चाहता है कि आरंभिक बंचन (early deprivation) का बच्चों के संज्ञानात्मक विकास (cognitive development) पर क्या प्रभाव पड़ता है तो व्यवहारिक दृष्टिकोण से निश्चित रूप से एक उत्तम शोध अध्ययन होगा परंतु नैतिक दृष्टिकोण से बहुत ही साध्य नहीं होगा क्योंकि मानव शिशुओं को पशुओं की तरह उनके आरंभिक बाल्यावस्था में अध्ययन के लिए एक वंचित वातावरण में नहीं रखा जा सकता है और ना तो कोई माता-पिता ऐसा करने की इजाजत ही देंगे इस तरह की नैतिक समस्याएं मनोवैज्ञानिक शोधों में अक्सर देखने को मिलती हैं। ब्रिटिश मनोवैज्ञानिक सोसायटी (British Psychological Society, 1993) तथा अमेरिकन मनोवैज्ञानिक एसोसिएशन (American Psychological Association 1992) ने मिलकर कुछ ऐसी समस्याओं की पहचान किया है जिन पर विचार कर तय किया जा सकता है कि कोई विशेष शोध अध्ययन नैतिक रूप से साध्य (feasible) है या नहीं। ऐसी कुछ प्रमुख सिद्धांत एवं मुद्दे निम्नांकित हैं।

जब शोध किया जाता है, तो यह कुछ नैतिक मुद्दों को जन्म देता है। नीचे सूचीबद्ध इन नैतिक मुद्दों के साथ-साथ दिशा-निर्देश भी हैं जिन्हें प्रत्येक के लिए पालन किया जाना चाहिए।

1. **स्वैच्छिक भागीदारी**:

अनुसंधान में प्रत्येक प्रतिभागी को स्वेच्छा से इसमें भाग लेना चाहिए, और ऐसा करने के लिए मजबूर नहीं किया जाना चाहिए। यहां तक कि अगर अनुसंधान विशिष्ट समूहों जैसे कि अपराधियों के एक विशेष समूह (बलात्कारी कहते हैं) पर किया जा रहा है, तो उन्हें स्वेच्छा से अनुसंधान में भाग लेने का विकल्प दिया जाना चाहिए, न कि जबरन ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए।

2. **सूचित सहमति(Informed Consent):**

ब्रिटिश मनोवैज्ञानिक सोसाइटी तथा अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ ने मनोवैज्ञानिक शोध की दूसरी महत्वपूर्ण नैतिक समस्या सूचित अनुमति के समस्या को माना है जहां तक एवं जब जब संभव हो, शोधकर्ता शोध के उन सभी पहलुओं के बारे में प्रयोज्यों को बतला दें जो शोध में भाग लेने की उनकी इच्छा को प्रभावित करता हो। सभी प्रतिभागियों को उस तरह के परीक्षणों के बारे में (जो आयोजित होने जा रहे हैं) तथा उन पर प्रत्येक परीक्षण के प्रभाव का पता होना चाहिए। उसे सूचनादाता को सूचित करना होता है कि इस शोध के क्या उद्देश्य हैं, उत्तरदाताओं

को क्या लाभ हो सकता है तथा सूचना देने में उन्हें किस प्रकार के खतरों का सामना करना पड़ सकता है। यदि सूचनादाता के मन में शोध के बारे में किसी प्रकार का सन्देह होगा तो वह निश्चित रूप से सूचना देने में आनाकानी करेगा अथवा भ्रमित करने वाली सूचना देगा।सूचित सहमति से प्रतिभागी को शोधकर्ता को परीक्षणों के लिए लिखित सहमति देने की आवश्यकता होती है।

इतना ही नहीं, शोधकर्ता को उन पहलुओं के बारे में भी स्पष्ट रूप से विवरण प्रस्तुत कर देना चाहिए जिनके बारे में प्रयोज्य प्रश्न करते हों। जब इन सभी पहलुओं को जानकर प्रयोज्य अध्ययन में भाग लेने की इच्छा व्यक्त करता है, तो फिर उस शोध के प्रति पूर्ण ज्ञान हो जाने से संबद्ध उसकी अनुमति प्राप्त कर लेनी होती है।

3. धोखा(Deception):

धोखा का उपयोग (Use of deception)- कुछ मनोवैज्ञानिक अध्ययनों का स्वरूप ऐसा होता है कि शोधकर्ता के लिए उन सभी बातों को प्रयोज्यों से कहना संभव नहीं हो पाता है जिसे उन्हें कहा जा सकता है क्योंकि ऐसा करने से प्रयोज्य का वह व्यवहार प्रभावित हो सकता है जिसका अध्ययन होने वाला है। इतना ही नहीं कभी-कभी ऐसी भी परिस्थिति उत्पन्न होती है जिसमें प्रयोज्यों को बिना गुमराह किए विशेष मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया का अध्ययन संभव नहीं हो पाता है। ऐसी परिस्थिति में जानबूझकर प्रयोज्यों को गुमराह कर या धोखा देकर अध्ययन करना ही पड़ता है। इस तरह के साभिप्राय धोखा (intentional deception) को अनैतिक माना जाता है तथा जहां तक संभव हो, ऐसा नहीं करना चाहिए अतः ब्रिटिश मनोवैज्ञानिक सोसाइटी तथा अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ दोनों ही इस बात पर जोर डालता है कि शोधकर्ता को कुछ ऐसा विकल्प ढूंढना चाहिए जिसमें धोखा की बात नहीं हो। अगर ऐसा विकल्प कोई उपलब्ध नहीं हो और यदि शोधकर्ता यह समझता है कि दिया जाने वाला धोखा नैतिक रूप से एक अनुमेय प्रक्रिया (Permissible procedure) है, तो इसके बारे में प्रयोज्यों को उचित मौके पर इशारा कर देना चाहिए।

4. डिब्रीफिंग(Debriefing):

यह सुनिश्चित करना शोधकर्ता की जिम्मेदारी है कि कोई प्रतिभागी शोध में भाग लेने के बाद मनोवैज्ञानिक या भावनात्मक रूप से प्रभावित न हो। इसीलिए यह कहा जाता है कि साक्षात्कार के समय अथवा साक्षात्कार अनुसूची में सम्मिलित प्रश्नों को पूछते समय शोधकर्ता को बड़ी सावधानी रखनी चाहिए। उसका यह निरन्तर प्रयास होना चाहिए कि सूचनादाता में किसी प्रकार की हीन भावना विकसित न हो ।

सभी मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में जिनमें प्रयोज्यों ने भाग लिया है, आंकड़े (data) संग्रहण के बाद उन्हें अध्ययन के स्वरूप के बारे में पूछे जाने वाले बातों को बतला देना चाहिए। शोधकर्ता को शोध प्रक्रिया के साथ हुए अपने अनुभवों को बतला देना चाहिए ताकि अगर शोध का कोई अप्रत्याशित प्रभाव हुआ हो तो उसे नियंत्रित किया जा सकता है। इतना ही नहीं, यदि शोधकर्ता यह महसूस करते हों कि प्रयोज्यों पर कुछ अप्रत्याशित प्रभाव पड़ गया है

तो उसे दूर करने के लिए कुछ सक्रिय हस्तक्षेप (Active intervention) प्रयोज्यों द्वारा शोध परिस्थिति छोड़ने से पूर्व करना चाहिए। अतः शोध करने के लिए कार्यक्रम बनाते समय शोधकर्ता को आंकड़ा संग्रह के बाद पूछे जाने वाले प्रश्नों का उत्तर देने के लिए पर्याप्त खाली समय का प्रावधान रखना चाहिए।

अनुसंधान के संभावित परिणामों को प्रतिभागी को सूचित किया जाना चाहिए ताकि वे उनके लिए तैयार हों। संक्षेप में, शोध समाप्त होने के बाद उन्हें व्यग्र नहीं होना चाहिए।

शोधकर्ता को सदैव यह सोचना चाहिए कि सूचनादाता उसके अधीन कार्य करने वाले कर्मचारी नहीं हैं। अतः उनसे समय लेकर उनसे मिलने में किसी प्रकार का संकोच नहीं करना चाहिए।

5. भागीदारी से निकासी की अनुमति(Permission to Withdraw from Participation):

प्रत्येक प्रतिभागी को अनुसंधान प्रक्रिया को किसी भी समय छोड़ने की अनुमति होनी चाहिए, शोध प्रारंभ होने के पहले ही शोधकर्ता को प्रयोज्यों से यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि यद्यपि वे प्रयोग में भाग लेने की अनुमति दे चुके हैं, फिर भी किसी भी समय में अगर चाहे तो अपने आप को शोध से अलग कर सकते हैं। अगर कोई प्रयोज्य अपने आप में सचमुच में शोध प्रक्रिया के दौरान हुए अनुभव को मद्देनजर अलग करने का निर्णय लेता है, तो उसका अधिकार यह भी बनता है कि वह अपने पर प्राप्त आंकड़ों को नष्ट करने की माँग करें। यदि कोई शोधकर्ता ऐसा नहीं करता है, तो इससे एक नैतिक समस्या का जन्म होगा।

6. गोपनीयता(Confidentiality):

सूचनादाताओं द्वारा दी गई सूचनाओं को गोपनीय रखना शोधकर्ता का नैतिक कर्त्तव्य है। इन्हें सार्वजनिक करने में सूचनादाताओं का नुकसान हो सकता है। उदाहरणार्थ-यदि कोई शोधकर्ता समलिंगियों अथवा घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओ पर शोध कर रहा है, तो सूचनादाता की पहचान बताना अनैतिकता माना जाएगा। कोई भी समलिंगी यह नहीं चाहेगा कि किसी अन्य को यह पता चले कि वह समलिंगी है। इसी भाँति, कोई भी महिला यह नहीं चाहेगी कि उसके पड़ोसियों अथवा मौहल्ले के अन्य लोगों या रिश्ते-नातेदारों को इसका पता चले। यदि शोधकर्ता वैयक्तिक अध्ययन (case study) द्वारा अपनी समस्या को स्पष्ट करने का प्रयास कर रहा है, तो उसे समलिंगियों अथवा घरेलू हिंसा से ग्रसित महिलाओं का उल्लेख काल्पनिक नाम से करना होता है। उनके वास्तविक नाम उजागर करना उनकी बदनामी का कारण हो सकते हैं।ऐसे मामले में एक प्रतिभागी अनुसंधान को जारी रखने या वापस जाने का विकल्प चुन सकता है।

7. प्रतिभागी की सुरक्षा(Safety of Participant):

मनोवैज्ञानिक शोध की सभी नैतिक संहिता (ethical codes) में इस बात पर बल डाला गया है कि मनोवैज्ञानिक अपने शोध का प्रयोग में भाग लेने वाले प्रयोज्यों (subject) के कल्याण का ध्यान रखें तथा इस बात का भी पुख्ता

इंतजाम करें कि शोध प्रक्रिया से प्रयोज्य दैहिक या मानसिक रूप से क्षतिग्रस्त नहीं हो। इसका मतलब यह हुआ कि कोई भी व्यक्ति जो मनोवैज्ञानिक शोध में भाग लेते हैं, उनके हानि की जोखिम सामान्य जीवन शैली बिताने में हो रही हानी की जोखिम से किसी भी ढंग से ज्यादा नहीं होना चाहिए। अगर अध्ययन को कोई अंश या भाग ऐसा है जो प्रयोज्यों में हानि या अवांछित परिणाम (undesirable consequence) उत्पन्न कर सकता है, तो शोधकर्ता की यह नैतिक जिम्मेदारी बनती है कि वह उस दुष्परिणाम को हटा दें। अगर यह किसी कारण से संभव नहीं है और इस बात की पूर्ण संभावना है कि शोध की प्रक्रिया का दुष्परिणाम प्रयोज्य पर होगा ही तो इस तरह के शोध को सामान्य तथा नैतिक रूप से अमान्य समझा जाता है। सभी प्रतिभागियों से पूछा जाना चाहिए कि क्या उनके पास कोई पूर्व की स्थितियां हैं जो अनुसंधान में हस्तक्षेप करेंगी, चाहे वह शारीरिक हो या मनोवैज्ञानिक। ऐसे मामले में उन्हें पर्याप्त सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए, या अगर परिस्थिति की तीव्रता में नियंत्रण नहीं किया जा सकता है तो उन्हें भाग लेने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

ऐसी परिस्थिति में शोधकर्ता को शोध प्रक्रिया का प्रयोग पर पड़ने वाले प्रभावों के बारे में पर्याप्त सूचना दे देना तथा उनकी राय भी जान लेना आवश्यक होता है

7. **प्रेरणात्मक सौदों में प्रयोज्यों की गुप्ती पर प्रहार (Invasion of privacy in observational research)-**

वैसे मनोवैज्ञानिक शोध जो दिन प्रतिदिन के स्वभाविक परीक्षण (Naturalistic observation) पर आधारित होते हैं, उनमें कुछ नैतिक समस्याएं उठ खड़ी होती हैं क्योंकि ऐसे अध्ययनों में प्रयोज्यों से सूचित अनुमति नहीं भी मिल सकती है। अतः ऐसे अध्ययनों में शोधकर्ता कि यह नैतिक जिम्मेदारी बनती है कि प्रयोज्यों के गुप्ती तथा उनके मनोवैज्ञानिक कल्याण का ध्यान रखें। अनुमति नहीं मिलने के कारण प्रेरणात्मक शोध सिर्फ उन्हीं स्थानों या परिस्थितियों में किया जाना चाहिए जिस स्थान पर प्रयोज्य मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रेक्षण किया जाना पसंद करता है। स्थानीय सांस्कृतिक मूल्यों तथा इस तरह के प्रेक्षण को प्रयाज्यों द्वारा अपनी गुप्ती पर एक तरह प्रहार होने जैसे तथ्यों की उपेक्षा शोधकर्ता को कभी नहीं करना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से नैतिक समस्याओं का जन्म होगा।

8. **आंकड़ों की गुमनामी तथा गोपनीयता (Confidentiality and the anonymity of data)-**

मनोवैज्ञानिक शोधों में प्रयोज्यों से प्राप्त आंकड़ों की गोपनीयता तथा गुमनामी बरकरार रखने से संबंध नैतिक समस्याएं उठती हैं। नैतिक संहिता (ethical code) इस बात पर बल डालता है कि शोध के दौरान प्रयोज्यों से प्राप्त आंकड़ों को गोपनीय रखा जाए। हाँ कुछ विशेष परिस्थिति में ही इन सूचनाओं को गोपनीयता भंग की जा सकती है और ऐसी परिस्थिति निम्नांकित 3 हैं-

(a) जब प्रयोज्य को तत्कालिक खतरा हो, तो वैसी परिस्थिति में मनोवैज्ञानिक शोधों से प्राप्त गोपनीय आंकड़ों को अन्य पेशेवरों (professionals) से या जन अधिकारों जैसे- पुलिस कोर्ट आदि को बतलाया जा सकता है।

(b) यदि प्रयोज्य के गोपनीय आंकड़ों के बारे में महत्वपूर्ण विशेषज्ञों से बातचीत करना आवश्यक हो।

(c) अगर स्वयं प्रयोज्य कुछ चयनित (selected) व्यक्तियों से अपने गोपनीय आंकड़ों के बारे में बतलाने का लिखित अनुमति देता हो।

इतना ही नहीं, प्रयोज्यों को इस उम्मीद का अधिकार प्राप्त होता है कि यदि उनके आकड़ों को प्रकाशित करना अनिवार्य है, तो उसमें उनका नाम नहीं दिया जाए। अगर शोधकर्ता ऐसा नहीं करता है, तो इससे नैतिक समस्याएं उत्पन्न होती हैं। अगर किसी कारण से इस ढंग को गोपनीयता या गुमनामी को बरकरार रखना शोध में संभव नहीं हो, तो इस तथ्य की सूचना शोध प्रारंभ होने से पहले ही प्रयोज्यों को दे देना चाहिए।

स्पष्ट हुआ कि जब मनोवैज्ञानिक शोध मानव प्रयोज्यों (Human Subjects) पर किए जाते हैं तो कुछ नैतिकता से संबद्ध समस्याएं उठ खड़ी होती हैं। इन समस्याओं के समाधान के लिए हालांकि मनोवैज्ञानिक ने कुछ नैतिकता संहिता बना रखा है, फिर भी अभी ऐसी समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं।

ऐसी नैतिक समस्याएं सिर्फ मानव प्रयोज्यों के साथ ही नहीं बल्कि पशु प्रयोज्यों पर प्रयोग/शोध करने पर उठती हैं और उनका समाधान भी उन्हीं नैतिकता संहिता (Ethical court) का पालन करके किया जाता है। पशु शोध में सबसे महत्वपूर्ण नैतिक समस्या पशुओं के देखरेख तथा उसके कल्याण से सबंद्ध है अध्ययन के दौरान कोई भी पशु का दैहिक क्षति नहीं या फिर कम से कम हो, इसका पूर्ण ख्याल रखा जाता है।

12. शोधकर्ता को अतिसंवेदनशील वर्गों का ध्यान रखना चाहिए:

उच्च स्तर के शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और / या सामाजिक जोखिम होने के कारण। किसी तरह से वंचित लोगों के समूह को कमजोर आबादी माना जाता है। कमजोर आबादी के उदाहरणों में बच्चे, सिज़ोफ्रेनिया वाले लोग, गर्भवती महिलाएं और बेघर लोग शामिल हैं। एक आबादी को संवेदनशील माना जा सकता है| शोध से सम्बन्धित किसी भी कार्य में उन पर कोई दबाव या जोर-जबरदस्ती नहीं की जानी चाहिए। अतिसंवेदनशील वर्गों ((Protecting venerable) में इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ सकता है। जितने भी अध्ययन मद्यपान तथा मादक द्रव्य व्यसन के प्रयोग पर हुए हैं, उनमें शोधकर्ता का यह प्रयास रहा है कि अध्ययन में सम्मिलित सूचनादाताओं के हितों को किसी प्रकार का नुकसान न पहुँचे। ऐसे ही युवा वर्ग को अतिसंवेदनशील माना जाता है। इसलिए इस वर्ग से सम्बन्धित किए जाने वाले शोध में सावधानी रखी जानी आवश्यक है। युवा वर्ग में एड्स जैसे रोगों की जानकारी हेतु जब शोध के निष्कर्ष बताए जाते हैं , तो इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि एड्स के कारण उनमें सेक्स के बारे में उत्सुकता पैदा न हो । एड्स के कारणों की जानकारी हेतु भी शब्दों का चयन बड़ी सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।

12.6 मनोविज्ञान में अन्य नैतिक मुद्दे:

जब कोई मरीज इलाज के लिए मनोवैज्ञानिक के पास जाता है, तो पेशेवर में एक निश्चित मात्रा में विश्वास रखा जाता है। यह एक अत्यधिक संवेदनशील संबंध है जिसे इसे संचालित करने के लिए कुछ नैतिकता की आवश्यकता है। जबकि कुछ पूर्वोक्त नैतिक दिशा-निर्देश यहाँ लागू होते हैं, कुछ और भी हैं जिनका उल्लेख किया जाना चाहिए।

व्यावसायिक योग्यता(Professional Competency):

प्रत्येक पेशेवर को सक्षम होना चाहिए और स्वेच्छा से क्षेत्र में योग्यता का प्रमाण प्रदान करना चाहिए, जो शिक्षा और कार्य अनुभव के माध्यम से प्राप्त किया जाता है। जब भी जरूरत हो ऐसे पेशेवरों को रोगियों को स्वेच्छा से परामर्श प्रदान करना चाहिए।

मनोवैज्ञानिक-रोगी संबंध के लिए सम्मान(Respect for the Psychologist-Patient Relationship):

क्योंकि मनोवैज्ञानिक अपने रोगियों के साथ भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक मुद्दों पर चर्चा करते हैं जो बहुत कमजोर होते हैं, भावनात्मक रूप से बहने की संभावना होती है। ऐसे मामले में यह मनोवैज्ञानिक के लिए एक रेखा खींचना, इस रिश्ते के लिए सम्मान बनाए रखना और आवश्यक चिकित्सा या उपचार प्रदान करना आवश्यक होता है।

इनके अलावा, सामान्य स्थितियों में सूचित सहमति और गोपनीयता के नैतिक मुद्दे भी इस क्षेत्र में लागू होते हैं।

12.7 मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में नैतिक मुद्दे में रखी जाने वाली सावधानियां:

I. ईमानदारी(Honesty)

सभी वैज्ञानिक संचार में ईमानदारी के लिए प्रयास करें। डेटा, परिणाम, विधियों और प्रक्रियाओं और प्रकाशन स्थिति की ईमानदारी से रिपोर्ट करें। डेटा गढ़ना, मिथ्याकरण या गलत बयानी न करें। सहकर्मियों, अनुसंधान प्रायोजकों, या जनता को धोखा न दें।

II. **निष्पक्षतावाद (**Objectivity**)**

प्रयोगात्मक डिजाइन, डेटा विश्लेषण, डेटा व्याख्या, सहकर्मी की समीक्षा, कर्मियों के फैसले, अनुदान लेखन, विशेषज्ञ गवाही, और अनुसंधान के अन्य पहलुओं में निष्पक्षता या अपेक्षित होने के पक्षपात से बचने के लिए प्रयास करें। पूर्वाग्रह या आत्म-धोखे से बचें या कम करें। व्यक्तिगत या वित्तीय हितों का खुलासा करें जो अनुसंधान को प्रभावित कर सकते हैं।

III. अखंडता (Integrity)

अपने वादों और समझौतों को बनाए रखें; ईमानदारी के साथ कार्य करें; विचार और कार्रवाई की स्थिरता के लिए प्रयास करते हैं।

IV. **सतर्कता** (Carefulness)

लापरवाह त्रुटियों और लापरवाही से बचें; ध्यान से और गंभीर रूप से अपने काम और अपने साथियों के काम की जांच करें। डेटा गतिविधियों, अनुसंधान संग्रह, और एजेंसियों या पत्रिकाओं के साथ पत्राचार जैसे अनुसंधान गतिविधियों के अच्छे रिकॉर्ड रखें।

V. खुलापन((Openness)

डेटा, परिणाम, विचार, उपकरण, संसाधनों को अन्य लोगों के साथ साझा करके शोध में खुलापन (Openness) बनाए रखना चाहिए। साथ ही शोधकर्ता को अपनी आलोचना एवं नवीन विचारों हेतु तैयार रहना चाहिए।

बौद्धिक सम्पदा सम्मान पेटेंट, कॉपीराइट, और बौद्धिक संपदा के अन्य रूप। बिना अनुमति के अप्रकाशित डेटा, विधियों या परिणामों का उपयोग न करें। अन्य विद्वानो की शोध में प्रयुक्त सामग्री को सदैव आदर सहित अभिस्वीकृति दी जानी चाहिए, कभी भी चोरी न करें।

VI. **गोपनीयता(Confidentiality):**

शोधकर्ता को प्रकाशित कराने अथवा ग्राण्ट प्राप्ति हेतु भेजे गए शोध पत्रों व्यक्तिगत रिकॉर्ड, व्यापार एवं सैन्य राज (Military secrets) तथा सूचनादाताओं के रिकॉर्डों की गोपनीयता (Confidentiality को बनाए रखना चाहिए।

VII. जिम्मेदार प्रकाशन (Responsible Publication)

शोध का प्रकाशन केवल अपने स्वयं के कैरियर को आगे बढ़ाने के साथ-साथ ज्ञान के प्रचार-प्रसार हेतु भी किया जाना चाहिए। शोध को व्यर्थ तथा किसी रूप में बार-बार एक ही बात कहने हेतु प्रकाशित करने से बचना चाहिए। अन्य शब्दों में उत्तरदायी प्रकाशन (Responsible publication) को ही प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

VIII. जिम्मेदार मेंटरिंग (Responsible Mentoring):

शोध का प्रशिक्षण देने वाले अध्यापकों एवं विशेषज्ञों को छात्रों को शोध की बारीकियाँ समझाते समय अनुभवी परामर्शदाता (Military secrets) रूप में कार्य करना चाहिए। उनकी भलाई का ध्यान रखना तथा उन्हें सही निर्णय लेने का प्रशिक्षण देना आवश्यक है। अपने सहयोगियों का सम्मान करें और उनके साथ उचित व्यवहार करें।

IX. सामाजिक उत्तरदायित्व (Social Responsibility)

शोध द्वारा सामाजिक अच्छाई का प्रचार-प्रसार तथा सामाजिक बुराइयों को समाप्त करने का प्रयास करना चाहिए। शोधकर्ता में अपने विषय तथा समाज के मानकों के प्रति सामाजिक उत्तरदायित्व (social responsibility) हो ना आवश्यक है।

X. गैर भेदभाव (Non-Discrimination)

सहकर्मियों या छात्रों के साथ लिंग, नस्ल, जातीयता या वैज्ञानिक क्षमता और अखंडता से संबंधित अन्य कारकों के आधार पर भेदभाव से बचें।

XI. क्षमता (Competence)

आजीवन शिक्षा और सीखने के माध्यम से अपनी खुद की पेशेवर क्षमता और विशेषज्ञता को बनाए रखना और सुधारना; एक पूरे के रूप में विज्ञान में दक्षता को बढ़ावा देने के लिए कदम उठाएं।

XII. वैधता(Legality)

XIII. प्रासंगिक कानूनों और संस्थागत और सरकारी नीतियों को जानें और उनका पालन करें।

पशु देखभाल (Animal Care)अनुसंधान में उपयोग करते समय जानवरों के लिए उचित सम्मान और देखभाल दिखाएं। अनावश्यक या खराब तरीके से तैयार किए गए पशु प्रयोगों का संचालन न करें।

XIV. मानव विषय संरक्षण(Human Subjects protection)

मानव विषयों पर अनुसंधान करते समय, हानि और जोखिम को कम करें और लाभ को अधिकतम करें; मानवीय सम्मान, निजता और स्वायत्तता का सम्मान करें; कमजोर आबादी के साथ विशेष सावधानी बरतें; और अनुसंधान के लाभों और

बोझों को निष्पक्ष रूप से वितरित करने का प्रयास करते हैं।

12.8 सारांश –

मनोविज्ञान एक बहुत ही संवेदनशील क्षेत्र है और किसी व्यक्ति को मनोवैज्ञानिक चिकित्सा की किसी भी विधि या अनुसंधान करने के दौरान नैतिक चिंताएं उत्पन्न होने की संभावना रहती है। मनोविज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों को खोजने व परिणाम हेतु संवेदनशीलता की जरूरत है| मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में नैतिक मुद्दों को समझाने से पूर्व नैतिकता की अवधारणा को समझना आवश्यक है नैतिक मुद्दों का सम्बन्ध नीतिशास्त्र (ethics)से है। इसे परमशुद्ध विज्ञान माना जाता है। इसमें मनुष्य के कर्त्तव्यों एवं अकर्त्तव्यों पर विचार किया जाता है। इसे 'चरित्र का विज्ञान' भी कहा जाता है क्योंकि यह उचित और अनुचित में भेद दिखलाता है। नैतिकता एक ऐसा व्यापक शब्द है जिसमें समाज की लगभग सभी मर्यादाओं का पालन हो जाता है। अत: सामाजिक व्यवस्था के लिए नैतिकता का सर्वाधिक महत्त्व है। नैतिकता ज्ञान की वह शाखा है जो नैतिक नियमों या संहिताओं से सम्बन्धित होती है। यही नैतिक नियम व्यक्ति के व्यवहार अथवा किसी क्रिया (जिसमें शोध भी सम्मिलित है) का संचालन करते हैं। इसे हम मानव व्यवहार के नैतिक मूल्यों अथवा व्यवहार को संचालित करने वाले नियमों का दर्शनशास्त्रीय अध्ययन भी कह सकते हैं। मनोवैज्ञानिक शोधों में अक्सर यह देखा गया है कि कभी-कभी शोध अध्ययन का स्वरूप ऐसा होता है

कि वह अध्ययन व्यवहारिक दृष्टिकोंण से साध्य या संभव तो है परंतु नैतिक दृष्टिकोंण से उसे करना संभव नहीं है जैसे यदि कोई शोधकर्ता यह अध्ययन करना चाहता है कि आरंभिक बंचन (early deprivation) का बच्चों के संज्ञानात्मक विकास (cognitive development) पर क्या प्रभाव पड़ता है तो व्यवहारिक दृष्टिकोण से निश्चित रूप से एक उत्तम शोध अध्ययन होगा परंतु नैतिक दृष्टिकोण से बहुत ही साध्य नहीं होगा क्योंकि मानव शिशुओं को पशुओं की तरह उनके आरंभिक बाल्यावस्था में अध्ययन के लिए एक वंचित वातावरण में नहीं रखा जा सकता है और ना तो कोई माता-पिता ऐसा करने की इजाजत ही देंगे इस तरह की नैतिक समस्याएं मनोवैज्ञानिक शोधों में अक्सर देखने को मिलती हैं। अत:मनोवैज्ञानिक शोधों में निम्न मुददो को ध्यान रखा जाना आवश्यक है |जैसे-स्वैच्छिक भागीदारी, सूचित सहमति, प्रतिभागी की सुरक्षा, धोखा(**Deception**,भागीदारी से निकासी की अनुमति, गोपनीयता(Confidentiality, आंकड़ों की गुमनामी तथा गोपनीयता| मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में नैतिक मुद्दे में रखी जाने वाली सावधानियां: ईमानदारी,निष्पक्षतावाद,अखंडता,खुलापन, गोपनीयता,जिम्मेदार प्रकाशन,जिम्मेदार मेंटरिंग,सामाजिक उत्तरदायित्व, गैर भेदभाव,क्षमता,वैधता,प्रासंगिक कानूनों और संस्थागत और सरकारी नीतियों का पालन,पशु देखभाल,मानव विषय संरक्षण आदि|

12.9 शब्दावली –

नैतिकता: नैतिकता नियमों की वह व्यवस्था है जो अच्छे और बुरे से संबद्ध है तथा जिसको अनुभव अंतरात्मा द्वारा होता है|

साभिप्राय धोखा: जानबूझ कर धोखा करना

सूचित स्वीकृति:सूचनादाताओं को सूचना से सम्बंधित पूरी जानकारी उपलब्ध उनकी शोध में सहभागिता सुनिश्चित करने को सूचित स्वीकृति कहा जाता है|

गोपनीयता: नैतिकता की दृष्टि से इसका अर्थ उत्तरदाताओं द्वारा दी गई सूचनाओं को गोपनीय रखने से है |

12.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न –

1. **नैतिकता की अवधारणा स्पष्ट कीजिए |**
2. **मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में नैतिक मुद्दों का विस्तार से वर्णन कीजिए |**
3. **मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में नैतिक मुद्दे में रखी जाने वाली सावधानियां बताइए |**

12.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. https://www.apa.org/ethics/code/
2. http://ebooks.lpude.in/

3. http://tandfbis.s3.amazonaws.com/rt-media/pp/common/sample-chapters/9780415429887.pdf
4. Bershoff, D.N. (2008) Ethical Confl icts in Psychology (4th edition). Washington, DC: American Psychological Association. [A comprehensive textbook covering many different ethical issues and confl icts, presented by a range of authors.]
5. Kimmel, A.J. (2007) Ethical Issues in Behavioral Research. Oxford: Blackwell. [Many of the issues raised in this chapter, and the rest of the book, are discussed in this book by Kimmel, which is a classic textbook on ethical issues.]
6. MASO 103, Social Research Method &Computer Application.Uttarakhand Open University, Haldwani